शतावतार

रामकथाओं में वर्णित सामाजिक सम्बंध

मुक्कामला नागभूषणम्

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस

जनवरी १९९२

मूल रूप से तेलुगू में प्रकाशित
"शतावतारालु" का हिन्दी अनुवाद

अनुवादक . बलं जनादंनस्वामी

मूल्य : १८ रुपये

ISBN—81—7007—150—X

पी. पी. सी. जोशी द्वारा न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, रानी झांसी रोड, नयी दिल्ली से मुद्रित और उन्ही के द्वारा पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड नयी दिल्ली-५५ की तरफ से प्रकाशित।

प्रकाशकीय

यह पुस्तक मूल रूप से तेलुगू मे लिखित "शतावतारालु", का हिन्दी अनुवाद है। आंध्र प्रदेश के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, समाजसेवी और पत्रकार मुक्कामला नागभूषणम् लिखित यह पुस्तक तेलुगू पाठकों के बीच अत्यंत लोकप्रिय हुई है और अभी भी इसकी मांग बनी हुई है। पुस्तक मुख्यतः पौराणिक और मिथकीय सामग्री का भौतिकशास्त्रीय व ऐतिहासिक दृष्टि से अनुसंधान करने का प्रयास है।

बौद्धिक शब्दावली व सैद्धान्तिक परिचर्चाओं में उलझे बिना लेखक ने सीधे-सरल लहजे में पाठकों को हमारे अन्तर्विरोधपूर्ण, साथ ही अभिव्यक्तिशील प्रागितिहास पर दृष्टिपात करने को उत्प्रेरित किया है। शायद पुराणपंथी और रूढ़िवादी लोगों को पुस्तक की सामग्री भली न लगे, उन्हें इसमें इतिहास पर कीचड़ उछालने जैसा कुछ नजर आये, पर वैज्ञानिक चिन्तन को प्रेरित करने वाली यह सामग्री आम सुधी पाठकों को अवश्य पसन्द आयेगी; कारण यह कि इसमे मूलतः रामायण, महाभारत, पुराणो, वेदों और संहिताओं में वर्णित कथाओं और घटनाक्रमो को सामाजिक अर्थवत्ता प्रदान का प्रयास निहित है। पुस्तक कुल मिला कर एक सारगर्भित नृजातिवैज्ञानिक व समाज-शास्त्रीय अध्ययन है।

हिन्दी मे इस प्रकार की पुस्तकों का अभाव रहा है जिसकी पूर्ति में, आशा है कि, यह पुस्तक सहायक होगी और हिन्दी के पाठक भी इसका उसी तरह स्वागत करेंगे जैसा तेलुगू पाठकों ने किया था।

लेखक के बारे में

लेखक श्री मुक्कामला नागभूषणम् स्वतंत्रता संग्राम के योद्धा हैं।

जब वे आंध्र राज्य के किसान संघ के अध्यक्ष थे, तब उन्होंने जमींदारी-उन्मूलन कानून को कार्यान्वित करने का प्रयास किया था।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उन्होंने देशभक्ति के अनेक गीत लिखे और प्रजा नाट्यमंडली (इप्टा) की स्थापना की।

"सनक फण", "सिन के बाल", "शतावतार", "पालकी बैठी अनीति", "प्राचीन भारत में वैज्ञानिक प्रगति", 'स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास" आदि इनकी तेलुगु में लिखी प्रसिद्ध कृतियां हैं।

सिंधु सभ्यता' और 'मूर्ति आराधना' इनकी दो पुस्तकें तेलुगु में शीघ्र प्रकाशित हो रही हैं।

आकाशवाणी, विजयवाडा के अनुरोध पर उनके द्वारा लिखित संगीत रूपकों में से "लय" को अन्तर्राष्ट्रीय प्रशस्ति-पत्र प्राप्त हुआ एवं "संपन्न गोदावरी" (सिरूला गोदारी) को राष्ट्रीय प्रशस्ति पत्र।

वे दस वर्ष "प्रगति" साप्ताहिक के और छः वर्ष "आंध्रवाणी" साप्ताहिक के सम्पादक रहे। वे दिल्ली से निकलने वाली "पेट्रियट" और "लिंक" साप्ताहिक में भी कुछ समय के लिए निर्देशक पद पर थे।

आंध्र क्रिकेट एसोसिएशन के अध्यक्ष के रूप में इन्होंने उस खेल के विकास के लिए निरन्तर प्रयास किया। संप्रति वे कृष्णा जिले के लेखक संघ के अध्यक्ष हैं।

प्रादेशिक विकास संघ के अध्यक्ष पद पर कार्य करते हुए, उन्होंने विद्यालय स्थापित किये और हरिजनों को आवास-सुविधाएं प्रदान की तथा पिछड़े क्षेत्रों में कृषि के विकास के लिए "लिफ्ट इरिगेशन" योजनाओं पर अमल करवाया।

अनुक्रम

शत-अवतार

आस्तिकों में किन्हीं से पूछा जाय तो वे यही कहेंगे कि भगवान एक हैं. कोई यह नहीं कहेगा कि भगवान अनेक हैं.

हमारे धर्मगुरुओं का कहना था कि भगवान नाम-रूप रहित हैं; वाणी और मन से परे हैं तथा आदि-मध्य-अंत रहित हैं उनका यह दावा था कि दूसरे धर्मों की अपेक्षा हमारा धर्म श्रेष्ठ है और उनके भगवान की अपेक्षा हमारा भगवान महान है

ईसाई कहते हैं कि हिन्दू लोग कई देवी-देवताओं की पूजा करते हैं, लेकिन हम एक ही भगवान को पूजते हैं उसी तरह मुसलमान भी यही कहते हैं, किन्तु हिन्दुओं का कहना है कि वह बात सच नहीं है.

हिन्दू लोग कहते हैं—हम जिस भगवान की पूजा कर रहे हैं, वह एक ही है वह सर्वान्तर्यामी है, यह सारा विश्व भगवान का स्वरूप है, उसका कोई एक नाम नहीं है, कोई एक रूप नहीं है चाहे किसी भी नाम से प्रार्थना करें, चाहे किसी भी रूप में पूजा करें, है वह एक ही हमारे धर्म में तरह-तरह के रूपों में, तरह-तरह के नामों से भगवान की पूजा करने वाले हैं. यह एक विशाल दृष्टिकोण द्वारा सधा हुआ समन्वय है अन्य धर्मों में यह विशाल दृष्टिकोण-समन्वय नहीं है.

नास्तिक भगवान के अस्तित्व को नहीं मानते आज ही नहीं, बल्कि ऋग्वेद काल से ही आस्तिक-नास्तिकवाद दोनों विद्यमान रहे हैं.

आस्तिकों और नास्तिकों के बीच विगत में कई वाद-विवाद और कई संघर्ष हुए. आस्तिकों ने जहा नास्तिकों को पाखण्डी, मूर्ख और नीति-नियम रहित कहकर उनकी निंदा की, वहा नास्तिकों ने आस्तिकों को दुर्बल, आलसी, परान्नभागी और धोखेबाज कहकर उनकी अवहेलना की

वैदिक धर्मावलंबियों ने जब यह प्रचार किया कि अधर्म को बढाकर, पापियों से नरक को भरकर और स्वर्ग में दबाव कम करने के लिए गौतम बुद्ध ने अवतार लिया, तो बौद्धों ने यह कह कर उनकी आलोचना की कि वैदिक तो आखिर बंदर, सुअर, चूहा और कुत्ते तक की भी पूजा करते हैं.

एक ने दूसरे की भर्त्सना की कि तुम गो-मांस खाते हो, तो दूसरे ने पहले को फटकारा कि तुम सुअर का मांस खाते हो. एक ने हां कहा तो दूसरे ने कहा नहीं.

ऐसे वाद-विवाद और संघर्ष भौतिकवादी लोकायतों (चार्वाकों) और आध्यात्मवादी वैदिक धर्मावलंबियों के बीच हुए. उसके बाद बौद्ध और

बौद्ध धर्मों के अनुयायियों के बीच ये संघर्ष हुए. आज भी भौतिकवादियों और आध्यात्मवादियों के बीच वाद-प्रतिवाद चल ही रहे हैं.

विविध धर्मों के बीच संघर्ष केवल भारत में ही नहीं, बल्कि विश्वभर में हुए.

एक दूसरे को कोसने, एक दूसरे की निंदाओं का प्रचार करने तक ही यह नहीं रुकी हिन्दू लोग बौद्धों के ऊपर टूट पड़े. शैवों ने जैनों को मारा. ईसाई और इस्लाम धर्मावलंबियों के बीच सालों तक युद्ध चले.

एक ही धर्म की विविध शाखाओं के बीच भी संघर्ष उत्पन्न हुए. शैव-वैष्णवों, रोमन कैथलिकों व प्रोटेस्टेंटों, शियाओं और सुन्नियों, हीनयान बौद्धों और महायान बौद्धों के बीच में कई विभेद और झगड़े पैदा हुए

आज भी संसार में वर्ण-भेद और धार्मिक दुरहंकार प्रबल रूप में विद्यमान हैं. एक ओर विज्ञान एवं तकनीकी शास्त्रों की वृद्धि हो रही है तो दूसरी ओर दकियानूसी तत्व बढ रहे हैं

भारतीय उपमहाद्वीप के विच्छिन्न होने का कारण क्या धार्मिक उन्माद नहीं है? क्या इस विभाजन के कारण लाखों निरीह हिन्दुओं-मुसलमानों को कई मुसीबतें नहीं झेलनी पडी? क्या आज भी दक्षिण-अफ्रीका जैसे स्थानों में रंग-भेद का दुरहंकार शासन नहीं कर रहा ?

यदि ऐसा दुरहंकार प्रबल होता रहे तो आम जनता ही कष्टों का शिकार बनती है इनको उकसाने वाले बड़े लोगों को कोई तकलीफ नहीं होती इसीलिए विभिन्न तरीकों से वे जनता को उभाडते रहते हैं और आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं से देश की प्रजा का ध्यान हटाने के लिए कई तरह की चालें चलते रहते हैं ये लोग विविध धर्मों के बीच भेदों को उकसाने के साथ-साथ विविध वर्णों, जातियों एवं प्रांतों के बीच भी विभेदों को बढाते हैं और दंगों को प्रोत्साहित करते हैं यदि कोई श्रीराम का 'भगवान का अवतार' मानकर उसका गुणगान करते हैं तो कोई रावण को 'महान' कहकर उसकी प्रशंसा करते हैं रामलीलाओं की प्रतिस्पर्धा के रूप में रावण की लीलाओं का प्रदर्शन करते हैं कभी के काल-गर्भ में विलीन आर्य-द्राविड जैसे भेदों को पुनर्जीवित करके उनका प्रचार करते हैं इस तरह की चालबाजियों के द्वारा वे समाज में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं

इनके हाथों में प्रचार-प्रसार के साधन हैं, सैकडों ग्रन्थ रच कर जनता के बीच में प्रस्तुत कर सकने वाले पंडित हैं. उनको पर्याप्त मात्रा में पुरस्कृत करने के लिए काफी धन-बल भी है हजारों सालों से वटवृक्षों की तरह बढे हुए पुराण हैं. जनता के दिलों में जडें जमा कर सुस्थिर बने हुए कर्म-सिद्धान्त और पुनर्जन्म सिद्धान्त जैसे तत्व हैं.

हमारे समाज के प्रमुख व्यक्ति एक ओर विज्ञान और तकनीकी शास्त्रों की उन्नति का अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए उपयोग करते हुए आधुनिक सुविधाओं का उपभोग करते रहते हैं तो दूसरी ओर तांत्रिकों और उनके मंत्रों की प्रशंसा करते हुए उनका प्रचार करते हैं.

उनको यह विश्लेषण करना पसद नहीं कि अमुक कथा कल्पित हैं या वास्तविक. जैसे ही ऐसा विश्लेषण प्रारम्भ होता है, वैसे ही चतुर्दिक उसके विरोध में लोग उठ खड़े होते हैं वे आवाजें कसते हैं कि हमारे पुराणों एवं धर्मग्रन्थों की निंदा की जा रही है, जनता को भटकाने का प्रयत्न किया जा रहा है.

अतः मानव प्रगति की कामना करने वालों को ऐसे दूषण-भूषण एव तिरस्कारपूर्ण मार्ग को नहीं अपनाना चाहिए यदि रामायण और महाभारत कथाओं का अनुशीलन करना है तो ऐतिहासिक दृष्टि से तुलनात्मक अनुशीलन करना होगा. इसलिए यथासम्भव ऐतिहासिक तथ्यों को पाठकों के सामने रखना ही मेरे इस प्रयास का मुख्य उद्देश्य है. यदि इस प्रयास में कोई त्रुटियां रह गयी हों, तो क्षमा करके उनकी सूचना मुझे देने की कृपा करें.

रामायण और महाभारत

रामायण एव **महाभारत** दोनों ही ग्रथों के लिए इतिहास, सहिता और आख्यान नाम प्रचलित हैं "जय" नाम **रामायण** के लिए नही हैं. लेकिन **भविष्यत् पुराण** में लिखा गया हैं कि अष्टादश पुराणों के साथ **रामायण** एव **महाभारत** भी "जय" नाम से जानी जाती हैं.

इन इतिहासों में कौन-सा पहला हैं और कौन-सा बाद का हैं ? ये कब लिखे गये ? इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण हैं या नही ? इन समस्याओं पर कई लोग भिन्न-भिन्न मत प्रकट करते रहे हैं

जाकोबी के मतानुसार **रामायण** का प्रणयन **महाभारत** से पहले हुआ. इसी विचार को प्रकट करने वाले श्री मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री लिखित, **सस्कृत वाङ्मय का इतिहास—लौकिक वाङ्मय** नामक ग्रथ में उल्लिखित प्रमाणों पर आइए एक दृष्टि डालते चलें.

"**रामायण** आदि-काव्य हैं आर्ष तथा वेद-सम्मत हैं एक नायक वाली **रामायण** 'परिक्रिया' नामक इतिहास हैं बहु-नायकवाला **महाभारत** 'पुरा-कल्प' नामक इतिहास हैं"

"**रामायण** की कथा त्रेता युग की हैं **महाभारत** की कथा द्वापर युगात की हैं उसके नायक श्रीराम हैं, तो इसके कथा-सचालक श्रीकृष्ण हैं

"सप्तमहर्षियों में अत्रि, भारद्वाज, वशिष्ठ और विश्वामित्र का सबध **रामायण** की कथा से हैं. **महाभारत** की मुख्य कथा से उन महर्षियों का कोई सबध नही हैं."

"एक-नायकवाले काव्य का जन्म पहले होना और बहु-नायकवाले काव्य का जन्म बाद में होना स्वाभाविक हैं"

"सीता में लोक व्यावहारिक ज्ञान नही था पर द्रौपदी में वह पर्याप्त था"

"भरत और लक्ष्मण ने श्रीराम के आदेश का उल्लघन नही किया, किन्तु भीम और अर्जुन ने कभी-कभी धर्मराज की निदा की"

"युद्ध के नियम और व्यूह रामायणकाल में उतने नही थे जितने कुरुक्षेत्र युद्ध के काल में थे"

"रामायण काल में दक्षिण भारत घने जगलों से भरा था महाभारत-काल में कुछ हद तक विकसित सभ्यतावाले जनपदों का निर्माण हुआ"

उक्त तर्कों का विरोध करते हुए **रामायण** से पहले ही **महाभारत** के अस्तित्व को माननेवाले विद्वान निम्नलिखित प्रमाण प्रस्तुत करते हैं.

"जब आर्य पजाब प्रांत में रहते थे, तभी कुरुक्षेत्र युद्ध हुआ था.

उसके उपरांत ही आर्य लोग अयोध्या और मिथिला नगरों तक फैल सके. अत यह कह सकते हैं कि **रामायण** की कथा से पहले ही **महाभारत** की कथा अस्तित्व में आयी."

"हस्तिनापुर की खुदाइयों से पुराने खण्डहर और कुछ दूसरे प्रमाण मिले हैं, किन्तु अयोध्या से अब तक ऐसे प्रमाण नहीं मिले."

"**महाभारत** पचम वेद हैं, जबकि **रामायण** वेद-सम्मत मात्र है."

"**महाभारत** की अपेक्षा **रामायण** में काव्य भाषा के लक्षण अधिक मात्रा में दिखाई देते हैं."

"मातृसत्तात्मक अवस्था के लक्षण **महाभारत** में हैं यही द्रौपदी के पांच पति होने का कारण हैं. लेकिन **रामायण** समाज के पितृसत्तात्मक अवस्था में प्रविष्ट होने के उपरांत की है."

रामायण की रचना के पहले **महाभारत** की रचना होने का दावा करने-वालों में वाशबर्न हॉप्किन्स प्रमुख हैं.

श्री एस. ए डागे का मत है कि, "वाल्मीकि रामायण बहुत बाद की रचना लगती है यह काव्य महाभारत के परवर्ती सामंती युग का प्रतिनिधित्व करता है."

डा रोमिला थापर का कहना है—"**रामायण** की रचना **महाभारत** के पश्चात हुई. कृषि-दशा के प्रारम्भ काल में ही **रामायण** का प्रणयन हुआ होता तो वह **महाभारत** के पूर्व की ही होती "

अनेक शोधकर्ताओं ने यह निष्कर्ष निकाला है कि **रामायण** तथा **महाभारत** में से यद्यपि **रामायण** की रचना ही पहले हुई, तथापि **महाभारत** पहले ग्रंथस्थ हुआ और उसके कुछ समय बाद जाकर **रामायण** ग्रंथस्थ हुई.

जाकोबी के इस कथन का कई विद्वान समर्थन कर रहे हैं कि जिस दशा में वैदिक भाषा काव्य भाषा के रूप में परिणत हो रही थी, उस दशा में **महाभारत** का प्रणयन हुआ कितु जब काव्य भाषा का एक परिष्कृत रूप बना तभी रामायण की रचना की गयी.

परतु जो यह मानते हैं कि **महाभारत** के पूर्व ही **रामायण** की रचना हुई वे और कुछ प्रमाण दिखाते हैं. उनका विचार है कि **रामायण** में जिन रथ, गज, तुरग, पदातियों की लडाइयों का विवरण नहीं है, उनका उल्लेख **महाभारत** में है इतना ही नहीं यह भी दृष्टिगत होता है कि लोहे से बनी तलवार और भाले जैसे हथियारों का उपयोग कुरुक्षेत्र के युद्ध में अत्यधिक हुआ, जबकि बाण और हल की नोंक मात्र के लिए लोहे का उपयोग किये जाने वाले चरण में **रामायण** की रचना होने का पता लगता है. अत यह कहा जा सकता है कि लोहे के तरह-तरह के हथियारों और उपकरणों को तैयार करने की विकसित दशा में **महाभारत** का प्रणयन हुआ

कन्द, मूल, फल तथा आखेट से मिले मास पर जीवन-यापन कठिन होने पर मानव ने जिस चरण में पशुपालन प्रारभ किया और खेतीबाड़ी शुरू की,

रामायण उसी चरण में लिखी गयी रचना है जबकि **महाभारत** खेतीबाड़ी के पर्याप्त विकसित होने के बाद की दशा में लिखा गया ग्रथ है.

रामायण तब की रचना है, जब क्षत्रियों पर ब्राह्मणों का वर्चस्व था. परन्तु जब विश्वामित्र इस महत्ता के विरुद्ध उठ खडे हुए और ब्रह्म ऋषि बनकर, श्रीराम को अस्त्र-शस्त्र विद्याए सिखाकर उन्होंने परशुराम का गर्व भग कराया तब ब्राह्मणों का महत्व थोडा कम हुआ. इसी कारण रामायण में ब्राह्मणों का जितना महत्व दृष्टिगत होता है, उतना **महाभारत** में नहीं.

रामायणकाल में ब्राह्मण व पुरोहित ही मत्री थे किन्तु महाभारतकाल में राज-काज सभालनेवाले मत्री सूत थे

रामायणकाल की अपेक्षा महाभारतकाल में आर्यों के राज्य बहुसंख्यक थे. एक राज्य द्वारा दूसरे पर आक्रमण करने की स्थिति रामायणकाल में नहीं थी. यह स्थिति महाभारतकाल में आरंभ हुई.

रामायणकाल में जिन आर्यों ने बलूचिस्तान, सिध और गुजरात प्रातों के राक्षस, दानव आदि कबीलों से युद्ध किये, उन्होंने भारत की पूर्व तथा दक्षिण दिशाओं के नागों से लडाई नहीं की. इसकी जरूरत तब पडी जब आर्यों ने पूरब और दक्षिण की दिशाओ मे अपना कदम बढाया इस दशा में आविर्भूत रचना ही **महाभारत** है

"रामकथा तथा वाल्मीकि का उल्लेख करके **रामायण** के कुछ श्लोक **महाभारत** में जोड़े गये, किन्तु **महाभारत** के श्लोक **रामायण** में निक्षिप्त नहीं हुए"

इस प्रकार अपनी सूझबूझ के अनुसार विभिन्न विद्वान अनेक प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं. कोई **रामायण** की कथा को पूर्व चरण का बताते हैं तो दूसरे **महाभारत** की कथा को, कुछ का कहना है कि दोनों कल्पित कथाएं हैं परन्तु ऐसे भी कुछ विद्वान हैं जो कहते हैं कि **रामायण** कल्पित हो सकती है, पर **महाभारत** कल्पित नहीं है.

डाक्टर मजूमदार का मत है—"अयोध्या, विदेह, सीता जैसे शब्द वैदिक हैं 'सीता' के अर्थ भूमि और हल भी हैं. 'विदेह' अर्थात निर्गुण अथवा रूपरहित अत जब आर्य हल का आविष्कार करने के बाद कृषि दशा में प्रवेश करके दक्षिण की ओर बढ रहे थे, उसी समय वेदों के शब्दों का आधार लेकर **रामायण** की कथा रची गयी."

डा पुराल्कर का कहना है कि—"जनक एक कबीले के मुखिया थे और चद्रवशी क्षत्रिय थे कृषि दशा मे पहुचे हुए सूर्यवश के क्षत्रियों ने मनिला नगर के आसपास के क्षेत्र में कृषि करने की रीति पहुंचायी. शिकार खेलकर आहार का सचय करने के बदले खेतीबाडी के लिए आवश्यक हल बनाना और खेत जोतना उन्होंने ही जनक को सिखाया इससे शिकार खेलने के लिए उपयोगी धनुष जैसे वन्य जनों के हथियार का महत्व समाप्त हुआ इसलिए **रामायण** में यह वर्णन किया गया कि श्रीराम ने शिव-धनुष तोडा खेती के लिए उपयोगी हल

जनक को मिला. इसीलिए कहा गया कि जनक को सीता मिल गयी. सीता (हल) के द्वारा सूर्यवंशी तथा चंद्रवंशी क्षत्रियों के बीच रिश्तेदारी बढ़ी."

"इस प्रकार जब कृषि का विस्तार हो रहा था और किसी न किसी रूप में एक-के-बाद-एक कई कबीले सूर्यवंशी क्षत्रियों के अधीन होते जा रहे थे, तब **रामायण** का आरंभ हुआ. इसलिए यह कह सकते हैं कि उसमें थोड़े-बहुत ऐतिहासिक तथ्य तथा बहुत-सी कल्पित गाथाएं हैं."

कुछ विद्वानों का यह मत है कि विंध्य के उत्तर में जो युद्ध हुए, उन्हें विंध्य के दक्षिण में घटित समझकर **रामायण** में उनका चित्रण करने से ही राम-रावण युद्ध, लंका-दहन जैसी असंबद्ध कथाओं को उसमें स्थान मिला है.

सुप्रसिद्ध इतिहासकार जाकोबी मानते हैं कि **रामायण** में उल्लिखित लंका, श्रीलंका नहीं है, यह कदाचित विंध्य के उत्तर में स्थित कोई छोटा नगर है.

तो फिर वह छोटा नगर कहां था ?

सुप्रसिद्ध पुरातत्वविद डा. संकालिया का कहना है कि लंका नगरी जबलपुर के समीप अथवा अमरकंटक के आसपास कहीं थी.

डा. पुसाल्कर का भी यह मत है कि सम्पूर्ण **रामायण** गाथा उत्तर भारत में घटित घटनाओं से ही संबंधित है.

रामायण में यह कहानी भी है कि किसी समय कार्तवीर्यार्जुन ने अपनी पत्नी तथा परिवार के साथ रेवा नदी के किनारे जाकर पड़ाव डाला और बड़ा बांध बनवाया इसलिए नदी जल का स्तर बढ़ गया, जिसके फलस्वरूप रावण के लंका नगर में पानी भर गया. इससे क्रुद्ध होकर रावण ने कार्तवीर्यार्जुन पर हमला किया युद्ध में कार्तवीर्यार्जुन ने रावण को हरा दिया. इसके बाद कार्तवीर्यार्जुन रावण को बंदी बनाकर, माहिष्मती नगर ले जाकर और उसकी खूब मरम्मत करके छोड़ दिया.

डा. संकालिया का कथन है कि—" 'सेतु' शब्द का अर्थ है बड़ा तालाब अथवा सरोवर. लेकिन इसके लिए 'पुल' अर्थ भी प्रचलित है. अतएव 'सेतुबंधन' शब्द लेकर धनुष्कोटि से श्रीलंका तक पुल बनाने की कल्पना करके रावण वध, लंका-दहन जैसी कथाओं की परिकल्पना की गयी."

अपने एक शोध लेख में डा. संकालिया ने घोषित किया "**रामायण** में लिखा गया कि बड़ी-बड़ी चट्टानों से, पहाड़ी पत्थरों से और साल वृक्षों से सेतु बांधा गया. उस प्रकार की चट्टानें, पहाड़ और साल वृक्ष छोटा नागपुर के इलाके में हैं, न कि रामेश्वरम के पास."

"दक्षिण भारत के विविध पहाड़ी प्रांतों, तथा वहां के लोगों के रीति-रिवाजों से वाल्मीकि परिचित नहीं थे राम के द्वारा वध किये गये बालि की अंत्येष्टि का वर्णन वाल्मीकि ने आर्यों की परंपरागत पद्धति के अनु-सार ही किया. इससे पता चलता है कि बालि-सुग्रीव का सम्पूर्ण प्रसंग

उत्तर भारत में ही घटित हुआ वह दक्षिण भारत में घटित नहीं हो सकता."

प्रख्यात इतिहासकार श्री एस. बी. राय मानते हैं कि सिंधु सभ्यता के केन्द्र, मोहनजोदड़ो को जीतने के लिए आर्यों ने जो युद्ध किया उसके इर्द-गिर्द राम कथा का जाल बुना गया

ये गाथाएं किस काल की हैं ?

क्या इन गाथाओं के पीछे कोई ऐतिहासिक तथ्य है ? जिस प्रकार इसका निश्चित उत्तर नहीं मिलता उसी प्रकार यह भी निश्चित रूप से विदित नहीं कि ये गाथाएं कब की हैं ?

ग्रंथों में लिखा गया है कि राम-रावण युद्ध त्रेतायुग में हुआ और द्वापर युग में महाभारत युद्ध, किन्तु इसका कोई विश्वास-योग्य प्रमाण नहीं मिलता.

राम-रावण युद्ध त्रेतायुग के मध्य भाग में हुआ कि अंतिम भाग में ? अगर यह मान भी लें कि वह त्रेतायुग के अंत में हुआ तो फिर यह कैसे पता चलेगा कि उस युद्ध के बाद से आज तक कितने हजार साल बीते ?

द्वापर युग का मान ८,६४,००० वर्ष है अब तक कलियुग में ५०८२ वर्ष व्यतीत हुए. तब क्या हम यह मान सकते हैं कि आठ लाख सत्तर हजार वर्ष पूर्व राम-रावण युद्ध हुआ ?

तब उस युग का मानव किस दशा में था ? आर्य कहां थे ? क्या वे अयोध्या में थे ? इसका विचार करने पर आसानी से पता लग जाता है कि **रामायण** की कथा त्रेतायुग की नहीं थी.

अब **महाभारत** के कथा-काल को लें कुछ विद्वान कहते हैं कि यह कथा ३१०० ई.पू. की है, कुछ उसे १४०० ई.पू. की कहते हैं तो कई विशेषज्ञ उसको ९०० ई.पू. की मानते हैं.

"राजतरंगिणी" में लिखा है कि कलियुग का प्रारंभ होने पर ६५३ साल बीतने के बाद कुरु-पाडवों का जन्म हुआ इसके आधार पर देखा जाय तो मालूम होता है कि २४४७ ई.पू. के आसपास कुरु-पाडव पैदा हुए होंगे

भारत के पुरातत्व विभाग के वरिष्ठ अधिकारी श्री जगपति जोशी लिखित एक निबंध में यह स्पष्ट किया गया है कि इस तथ्य के प्रबल प्रमाण प्राप्त हुए कि ३००० ई.पू. से पूर्व कुरु-पाचाल (हरियाणा और उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्से) की भूमि घने जगलों से भरी थी, १४०० ई.पू. तक उस इलाके में नगरीय सभ्यता नहीं थी और ९०० ई.पू. तक पशुचारी घुमक्कड कबीलों ने कुछ हद तक खेतीबाडी का आरम्भ किया.

उपर्युक्त मतों में कोई सत्य हो या न हो, कुरुक्षेत्र सग्राम के द्वापर-युगांत में होने की बात बतानेवाली पौराणिक कथाएं विश्वास करने योग्य प्रतीत नहीं होतीं?

फिर क्या हम यह समझ लें कि कुरुक्षेत्र-संग्राम ९०० ई.पू. में हुआ? डा० सरकार का कहना है कि चूंकि कुरुक्षेत्र-युद्ध की तिथियों के संबंध में विभिन्न मत प्रचलित हैं और इनके अनुसार कही गयी तिथियों में लगभग दो हजार साल का अंतर दृष्टिगत होता है, इसलिए कहा जा सकता है कि कुरुक्षेत्र युद्ध की कहानी दंतकथा मात्र है.

डा. संकालिया का कथन है कि ९०० ई.पू. में कुरुक्षेत्र युद्ध के होने की संभावना का अवसर ही दिखाई नहीं देता.

परन्तु डा. शिराशी का दावा है कि महाभारत युद्ध की वास्तविकता तथा प्राचीनता से संबंधित आधार हमें वैदिक वाङ्मय में उपलब्ध होते हैं.

प्रोफेसर बी. बी. लाल का कहना है कि महाभारत युद्ध के ९०० ई.पू. के आसपास होने के प्रमाण प्राप्त हो चुके हैं.

श्री जगतपति जोशी के अनुसार अब तक पांचाल प्रदेश से जो कुछ ताम्रपत्र और हस्तिनापुर प्रदेश से जो भूरे रंग के मिट्टी के बर्तन मिले हैं, उनके आधार पर यह साबित करना असंभव प्रतीत होता है कि १४०० ई.पू. तक वहां शहरी सभ्यता थी, या ९०० ई.पू. में कुरुक्षेत्र युद्ध हुआ.

उत्तर प्रदेश पुरातत्व विभाग, जीवाजी विश्वविद्यालय तथा भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने मिलकर इसका अनुसंधान करने के लिए कि **रामायण** और **महाभारत** की कथाओं का कोई ऐतिहासिक आधार है या नहीं, एक बृहत् कार्यक्रम हाथ में लिया है.

महाभारत की कथा से संबंधित हस्तिनापुर, मथुरा, कुरुक्षेत्र आदि स्थानों में उत्खनन हुए. **रामायण** की कथा से संबंधित अयोध्या, जैसे स्थानों में भी खुदाइयां शुरू की गयीं. फिर भी **रामायण** और **महाभारत** की कथाओं की पुष्टि करने वाले प्रमाण नहीं मिले.

शत अवतार

इसके अतिरिक्त **रामायण** तथा **महाभारत** ने भी कई रूप धारण किये उनमें अनेक प्रक्षिप्त अंश विद्यमान हैं. पाषाण युग के समय के कुछ प्रमुख प्रसंगों से लेकर आठवीं सदी तक के मुख्य अंश उनमें पाये जाते हैं. दोनों में असंभव कल्पनाएं हैं, उनको अक्षरशः सत्य माननेवाले श्रद्धालु भी हैं.

ब्रह्मांड एवं पाराशर उपपुराणों का आधार दिखाकर यह तर्क करने वाले महाशय भी मिलते हैं कि शतकोटि श्लोकयुक्त रामायण देव, गंधर्व आदि लोकों में क्रमशः पचास करोड, दस करोड और अंत में एक करोड श्लोकों का ग्रंथ बन गया फिर सिर्फ २४ हजार श्लोक वाला ग्रंथ मानव लोक में प्रचलित हुआ.

जो लोग इस कथा पर विश्वास कर लेते हैं कि हनुमान धनुष्कोटि से उडकर लंका में कूदे थे और उस समय में उनके शरीर से पसीने की एक बूंद समुद्र में गिरी, जिसे निगलने के कारण एक मछली के पेट से मत्स्य वल्लभ का जन्म हुआ, उनके किसी भी असंभावित विषय पर विश्वास करने में संदेह ही क्या हो सकता है ?

गायत्री रामायण में लिखा गया है कि **रामायण** चौबीस हजार श्लोक तक सीमित हैं, गायत्री मंत्र के चौबीस वर्ण क्रमशः **रामायण** के एक-एक श्लोक के प्रारम्भ में उपलब्ध हैं **रामायण** के शतकोटि श्लोक युक्त होने का उल्लेख उसमें नहीं हैं

श्री जाकोबी, श्री वैद्य जैसे विद्वानों ने श्लोकों का उद्धरण देकर सिद्ध किया है कि **रामायण** के चौबीस हजार श्लोकों में से केवल छः हजार ही वाल्मीकि-रचित हैं, बाकी अठारह हजार श्लोक दूसरों द्वारा लिखित प्रक्षिप्त अंश हैं

इसके अलावा संस्कृत **रामायणों** में कई पाठ-भेद भी पाये जाते हैं. अन्य पाठ-भेदों को छोड दीजिए, तो भी बंबई, कश्मीर तथा बंगाल की प्रतियों के पाठों में कई भेद दृष्टिगत होते हैं.

श्री जाकोबी ने सिद्ध किया है कि लगभग आठ हजार ऐसे श्लोक हैं जो एक पाठ में हैं, दूसरे पाठ में नहीं हैं एक में जो सर्ग हैं, वे दूसरे में नहीं हैं

वाल्मीकि **रामायण** के अतिरिक्त भवभूति रचित उत्तर **रामचरित, भास्कर रामायण**, अगस्त्य, रंगनाथ, वशिष्ठ, वरदराज, मोल्ल, दुर्वासा, कंब, कृत्ति-

दास एवं तुलसी द्वारा रचित अनेक रामायणें हैं. कालिदास-रचित **रघुवंश** काव्य भी हैं. इन सब के बीच में अगणित भेद हैं.

महेश्वर तीर्थ, गोविंदराज, रामानुज, वनमुब्रह्म विद्याध्वरि, अहोबल-सूरि, विश्वनाथ दीक्षित, रंगाचार्य वेंकटसूरि इत्यादि महान पंडितों की लिखी व्याख्याएं भी हैं.

आध्यात्म रामायण की शैली में कीर्तन, रामहृदय, रामगीत जैसी पद-रचनाएं हैं. विदेशियों के अनुवाद एवं ग्रंथ हैं. भांति-भांति की राम कथाएं हैं **महाभारत** तथा अन्य पुराणों में भी रामकथा का प्रवेश हुआ हैं.

रामायण एक काव्य हैं, अत. उसकी कथा-वस्तु की वास्तविकता अथवा अवास्तविकता की चिंता किये बिना प्रत्येक कवि ने अपने मन-पसंद ढंग से उसकी रचना की. इसी वजह से एक रचना दूसरी रचना से भिन्न बन पड़ी

आज भी औचित्य के नाम पर कई प्रकार के **रामायण** ग्रंथ तथा उनसे संबंधित कथाएं निकल रही हैं इतना ही नहीं, **वाल्मीकि रामायण** ने अनेक रूप धारण किये. बाल्य, कौमार्य एवं यौवन अवस्थाओं को पार करने तक ही एक महान वट-वृक्ष की तरह उसका विशाल काय बना. वह इतना विस्तृत हुआ कि यह पहचानना संभव नही कि उसका तना कौन-सा हैं और जटाएं कौन-सी हैं ? जैन कथाओं, बौद्ध गाथाओं एवं पुराणों तक में इस कथा का प्रवेश हुआ. विदेशों में भी इसका प्रसार हुआ

कहा जाता हैं नारायण ने अब तक नौ अवतार धारण किये और आगे कभी वह दसवां अवतार धारण करने वाले हैं परन्तु **रामायण** ने अब तक शत अवतार ग्रहण किये हैं.

रामायण ही नहीं, **महाभारत** पर भी यह लागू होता हैं एक इलाके की **महाभारत** से दूसरे इलाके की **महाभारत** मेल नहीं खाती **जैमिनी** भारत एवं **पपकवि भारत** व्यासकृत **महाभारत** से मेल नहीं खाती.

जिस तरह **वाल्मीकि रामायण** में उत्तर रामायण जोडी गयी, उसी तरह **महाभारत** में भी शांतिपर्व सहित सात पर्व जोड़े गये. **रामायण** के बाल-कांड की तरह **महाभारत** के अरण्य पर्व को विस्तृत किया गया

महाभारत में भगवद्गीता प्रक्षिप्त हुई तो **रामायण** में राम गीता. कृष्ण-भक्तों ने **हरिवंश** की रचना की तो रामभक्तों ने **अध्यात्म रामायण** की जिस तरह वाल्मीकि के नाम पर प्रचलित **रामायण** में तीन-चौथाई हिस्सा दूसरों ने लिखकर मूल पाठ में जोड दिया, उसी तरह वेदव्यास के नाम पर प्रचलित **महाभारत** में छहत्तर हजार श्लोक अन्य लोगों ने लिखकर मूल पाठ में मिला दिये. चाहे कैसे भी हो, **रामायण** चौबीस हजार श्लोकों की बन गयी, तो **महाभारत** एक लाख श्लोकों की बन गयी

रामायण की भांति **महाभारत** भी कुछ समय तक ग्रंथस्थ नहीं हुई. जिस प्रकार कुशलवों ने **रामायण** का गान किया, उसी प्रकार सूतों ने **महाभारत** की कथा सुनायी उसके उपरांत कुछ समय के बाद **महाभारत** ग्रंथस्थ हुआ और उसके पश्चात् **रामायण** भी ग्रंथस्थ हुई

पुस्तकाकार में परिणत होने पर भी **महाभारत** और **रामायण** में अनेक परिवर्तन प्रस्तुत हुए. कारण क्या है ? कारण यह है कि ये दोनों केवल कथाएं हैं, पुराण मात्र हैं, न कि इतिहास ग्रंथ इसीलिए अपने मनमाने ढंग से भिन्न-भिन्न रूपों में कवियों ने इनमें परिवर्तन किया. इन सारे परिवर्तनों एव प्रक्षिप्तांशों को उन्होंने वाल्मीकि महर्षि तथा वेदव्यास के सिर पर मढ दिया

महाभारत के प्रणेता कौन हैं ?

व्यास कहें ? पर व्यास तो एक उपाधिमात्र है ? वेद-विभाजन कर्ता व्यास को इसका प्रणेता कहें? तो ऐसे वेदव्यास अट्ठाईस थे. पाराशर पुत्र वेद-व्यास को इसके रचयिता कहे ? तो पराशर तीन-चार थे.

कई विद्वान विश्वास करते हैं कि गगानदी-द्वीप में या पराशर तथा मत्स्यगन्धा से उत्पन्न कृष्णद्वैपायन नामक वेद व्यास ही **महाभारत** ग्रथ के प्रणेता है.

किन्तु यह कैसे कहा जा सकता है कि छब्बीसवें द्वापर युग के पराशर से अट्ठाईसवें द्वापर युग का कृष्ण द्वैपायन पैदा हुआ ? हा, फिर क्या हम यह कहें कि पराशर तथा द्वैपायन ब्रह्म ऋषि थे, इसलिए वे चिर-काल तक जीवित रह सके, मगर द्वैपायन की जन्मदात्री माता सत्यवती के बारे में क्या कहें ? वह भी तीन द्वापर युगों का समय बीतने तक नव यौवना के रूप में जीवित रही ?

ऐसा नही तो जैसे श्री सी वी वैद्य जैसे विद्वान ने कल्पना की, वैसे ही **तैत्तरीयारण्यक** के उल्लेख के अनुसार पराशर, व्यास एव वैशपायन को **महाभारत** के प्रणेता तथा प्रवक्ता मान सकते हैं

श्री मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री ने कहा है—"**तैत्तरीयारण्यक** मे पराशर व्यास का उल्लेख ही मिलता है कृष्णद्वैपायन शब्द उसके दृष्टिगत नहीं होता इतना ही नही, यह सिद्ध करना भी सरल नहीं कि **महाभारत** **तैत्तरीयारण्यक** का समकालीन है"

अतएव यह स्पष्ट विदित होता है कि **महाभारत** ग्रथ के प्रणेता के संबध में समुचित निर्णय करना असभव कार्य है

वाल्मीकि महर्षि किस काल के थे?

वाल्मीकि का मामला चाहे इतना जटिल न हो, तो भी यह संदेह उत्पन्न हुए बिना नही रहता कि **रामायण** काव्यकर्ता वाल्मीकि कौन थे ? और वे किस काल के थे ?

विष्णु पुराण में स्पष्ट लिखा है कि चौबीसवें वेद-व्यास वाल्मीकि नामक ऋक्ष थे और अट्ठाईसवें वेदव्यास कृष्ण द्वैपायन थे **कूर्म पुराण** में ऋक्ष, भार्गव नामों की जगह पर वाल्मीकि नाम दिखाई देता है **तैत्तरीय उपनि-**

बद्ध को देखें तो विदित होता है कि वरुणवंशी तथा भृगुवंशी वाल्मीकि एक ही थे. इतना ही नहीं, शब्दकोश भी यही बताते हैं कि "कुशीलव" का अर्थ वाल्मीकि है.

यदि वैवस्वत मन्वंतर के चौबीसवें द्वापर युग में वाल्मीकि पैदा होकर वेदव्यास के रूप में विख्यात होने के अतिरिक्त **रामायण** महाकाव्य की रचना भी कर चुके हों तो उस कार्य के पश्चात अब तक लगभग एक करोड़ पचहत्तर लाख वर्ष बीते होंगे. क्या यह तथ्य स्वीकार्य है ? इसके अलावा भी त्रिविक्रम, हेमचंद्र, सिंहराज, लक्ष्मीधर शास्त्री जैसे विद्वानों का कहना है कि उन्होंने एक प्राकृत व्याकरण ग्रन्थ भी लिखा

रामायण महाकाव्य को प्राचीनतम सिद्ध करने के लिए ही यह कथा कल्पित हुई कि वाल्मीकि महाकवि चौबीसवें द्वापर में अथवा उससे भी कुछ और पूर्वकाल में पैदा हुए यदि कुछ पंडितों ने लिखा कि वेद व्यास ने अट्ठाईसवें द्वापर युग में जन्म लेकर वेद-विभाजन करने के अतिरिक्त पंचम वेद नाम से विख्यात महाभारत संहिता की रचना भी की, तो कुछ दूसरे विद्वानों ने लिखा कि चौबीसवें द्वापर में ही जन्म लेकर वाल्मीकि महर्षि ने वेद-विभाजन करने के साथ **रामायण** महाकाव्य का प्रणयन भी किया

महाभारत को साठ लाख श्लोक युक्त कहा गया तो **रामायण** को शत-कोटि श्लोक संपन्न बताया गया.

रामायण और **महाभारत** में वैदिक काल की कथाओं को जोड़ने के साथ चौथी शताब्दी तक की अनेक कथाओं को भी मिलाकर उन्हें काफी विस्तृत किया गया और मनमाने ढंग से बदला गया फिर भी वहां तक यह काम नहीं रुका ग्यारहवीं सदी तक किसी न किसी ने कोई न कोई कहानी लिखकर इसमें जोड दी इसीलिए **रामायण** और **महाभारत** पर अनेक कटु आलोचनाएं निकलीं तेलुगु में तो यहां तक कहावत है—"रामायण रंकु, भारत बोंकु" (अर्थात **रामायण** व्यभिचार की कहानी है, तो **महाभारत** सफेद झूठ वाली कहानी है)

फिर एक और दृष्टिकोण के लोग भी हैं ये प्राचीन मानव समाज के इतिहास को छोड़कर **रामायण** तथा **महाभारत** की हर बात को देवी-देवताओं, शापों तथा वरदानों के साथ जोडते हैं. वे जोर देकर कहते हैं कि वर्तमान काल की अपेक्षा प्राचीन काल अत्यंत महान एवं श्रेष्ठ है. वे इस बात पर दुःखी होते रहते हैं कि दिन-ब-दिन पाप बढता जा रहा है.

इसलिए यदि कोई यह जानना चाहे कि **रामायण** या **महाभारत** कब उत्पन्न हुए और कैसे बढे, उनमें वर्णित कहानियां सच्ची हैं कि झूठी, तो वेदों तथा पुराणों पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं होगा.

इसके लिए हमें यह देखना होगा कि पूर्व पाषाण युग से वर्तमान काल तक उत्पादन के साधनों का विकास किस प्रकार हुआ ? आहार संचयन की अवस्था से आहार उत्पादन की अवस्था तक मानव कब और कैसे पहुंचा ?

वन्य अवस्था के कबीलों के सामूहिक नियम एवं रीति-रिवाज कैसे थे और असभ्य अवस्था वाले कबीलों के सामाजिक नियम, रीति-रिवाज तथा पेश किस तरह के थे ? हमें यह समझना होगा कि सभ्य होने की दिशा में कदम बढ़ाकर प्रगति पथ पर आरूढ़ होने वाली जातियों की प्रथाएं, धार्मिक नियम इत्यादि कैसे परिवर्तित होते आये ? हमें इसका भी अनुशीलन करना होगा कि वन्य अवस्था से आज तक स्त्री-पुरुष संबधों में क्या परिवर्तन हुए ? और दर्शनशास्त्र में आदर्शवाद का विकास कैसे हुआ ? नहीं तो, सही निर्णय पर पहुचना संभव नही होगा

क्योंकि मोर्गन का कहना है—"ऐसा कहा जा सकता है कि जीवन की आधारभूत वस्तुओं का विस्तार और मानव जाति के विकास क्रम के प्रधान युग, ये दोनों लगभग मिलेजुले हैं"

इसलिए आइए हम पहले उन अवस्थाओं में विकसित आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, स्त्री-पुरुष सम्बधों, सभ्यता, तथा मानवतत्व-शास्त्र के सूत्रों आदि पर विचार करें.

मानव विकास का क्रम

विकासवाद के प्रणेताओं का कहना है कि लगभग २०० करोड़ वर्ष पूर्व समुद्र में जीव-जन्तुओं का आविर्भाव हुआ. समुद्री जीवों से थलचर प्राणी पैदा हुए इस प्रकार वानर जाति विकसित हुई और कुछ क्रमिक परिणामों के फलस्वरूप वानर से नर बनने का क्रम पूरा हुआ.

मोर्गन ने, जो अद्भुत मेधा शक्ति के धनी विद्वान थे, अथक परिश्रम करके मानवजाति का विकास लिखा उन्होंने विभिन्न महाद्वीपों में रहने वाले कबीलों के रहन-सहन, रीति-रिवाजों, परम्पराओं और विश्वासों का गहन अध्ययन करके "प्राचीन समाज" नामक ग्रंथ की रचना की, जिसमें उन्होंने यह सिद्ध किया कि पितृसत्तात्मक युग से पूर्व मातृ-सत्तात्मत्मक युग का अस्तित्व था

मानव विकास की प्रमुख अवस्थाएं

आदि मानव ने हजारों वर्षों तक सघन वृक्षों और गुफाओं को अपना आवास बनाया वह पेड़ों के पत्ते, फल और कन्दमूल खाकर जीता था. क्रमश उसने अपने मनोभावों को प्रकट करना सीखा यही आदि मानव का शैशव था इसे मोर्गन ने वन्य युग की प्रथम अवस्था कहा है.

इस अवस्था में मानव के लिये न देवों का अस्तित्व था, न भूत-प्रेतों का, न वह कपड़े पहनता था, न उसके पास आवास था उसके पास पत्थर के उपकरण तक नहीं थे. आत्म-रक्षा तथा आहार-सचय के अलावा उसको और कोई चिन्ता न थी फिर आदि मानव ने क्रमश अपनी आत्म-रक्षा और आहार-सम्पुपार्जन के लिए झुण्ड बनाकर जीना आरम्भ किया

मानव की मेधाशक्ति का विकास होने लगा उसने देखा कि आंधी में पेड़ों की डालियां जब एक दूसरे से रगड खाती है, तो आग पैदा हो जाती है, और जगल जल जाते हैं. आग की लपटों में फसकर जले हुए जानवरों तथा चिड़ियों के मास का स्वाद उसने चखकर देखा उसे वह पसद आया अत: उसने लकड़ी से लकडी रगडकर आग पैदा की और उसमें पक्षियों और मछलियों को जलाकर खाना शुरु किया, आटेवाले कंद-मूलों को भी अलाव में पकाकर खाने लगा. जानवरों का शिकार करने और उनको काटने के लिए उसने तेज धारवाले पत्थर तैयार किये. उसे एक जगह पर अपने लिए जरूरी खाद्य पदार्थ न मिल जाते, वह वहीं प्रवास कर जाता. इस प्रकार आदि मानव नदी-तटों तथा समुद्री तटों के रास्ते

चलकर सुदूर प्रांतों तक फैल गये. मोर्गन के अनुसार यह वन्य युग की द्वितीय अवस्था थी.

इस द्वितीय अवस्था में भी मानव समाज के पारिवारिक संबंध नहीं बने, भाई-बहन, मा-बेटा और पिता-बेटी का कोई ज्ञान उसे न था. सन् १८७५ में जान क्राफ ने लिखा कि "बेरिंग जलसंधि" के आस पास रहने वाले 'किवयटों' में, अलास्का के पास रहनेवाले "कोदियकों" में किसी प्रकार के सगे सबध का ज्ञान नहीं है. सन् १८८८ में लेतोर्ने नामक आदिम जाति के इतिहासकार ने जाना कि चिपेवे के इंडियनों में, चिली की काकूस जाति में, कैरिबियनों में, करेन कबीलों में मां-बेटे, बाप-बेटी, और भाई-बहन का ज्ञान नहीं है किसी युग में सब जगह यही स्थिति थी. यही कारण है कि हमें महाभारत में भाई-बहन और ओल्ड टेस्टामेंट में पिता-बेटी में लैंगिक संबंध होने का उल्लेख करनेवाली कहानियां मिलती हैं.

उस स्थिति में बच्चे यह न जानते थे कि उनका पिता कौन है केवल मा को ही यह मालूम होता था एक मा के बच्चे, उसकी बेटी के बच्चे और पोती-नातिनों के बच्चे सब मिलकर एक साथ रहते थे इससे एक टोला बनता था.

इस अवस्था से मनुष्य कुछ और आगे बढा उसने जानवरों का आसानी से शिकार करने लायक तीर-कमान बनाये तेज धारवाले पत्थर के औजार और कुल्हाडिया भी तैयार की. उनकी मदद से काठ के औजार और बरतनों का निर्माण किया. पेडों की छालों से टोकरिया बनाना, नाव बनाना, बास की लकडियों से झोंपडे बनाना सीखा पेडों की छालों से रेशे निकालकर उनसे कपडे बनाना सीखा इस प्रगति के कारण उनके लिए खाद्य सामग्री का सचयन सुलभ हुआ. इस अवस्था को मोर्गन ने वन्य युग की तृतीय अवस्था कहा है (इस अवस्था की जगली जातियों के लोग आज सारे ससार में पाये जाते हैं)

इस दशा में मानव को मालूम नहीं था कि तूफान किसलिए आते हैं, छूत की बीमारिया फैलने के कारण भी वे नहीं जानते थे वे समझते थे कि कोई दुष्ट शक्तिया उन्हें सता रही हैं उन्हें सतुष्ट करने के लिए उसने पेडों, बाबियों, और पत्थरों की पूजा आरम्भ की वह कल्पित देवी-देवताओं के उत्सव मनाकर बलिया देने लगा कालातर में लाल मारी मा, काली मारी मा, मृत्यालम्मा जैसी देवियों की सृष्टि करके, उनके सामने जानवरों के साथ मानवों की भी बलि देने की प्रथा चल पड़ी

उस समय मातृ-सत्ता की प्रधानता होने के कारण देविया ही आराध्य होती थी एक कबीले के सभी लोग एक ही देवी की पूजा करते थे. कबीले के हर एक गण के यहा उस देवी की एक मूर्ति होती थी. उसकी पूजा करने के लिए गण के सभी लोग मिलकर एक वृद्धा स्त्री की नियुक्ति करते थे उसको "गणाचारिणी" (गण की आचारिणी) कहकर पुकारते थे. कुछ लोग उसको "पुजारिणी", भी कहा करते थे यह गणाचारिणी देवी की

पूजा ही नहीं करती थी, बल्कि यह कहकर झूमा करती थी कि देवी माता का मुझ में प्रवेश (आगमन) हुआ है. वह गण के सदस्यों को न जाने क्या-क्या बातें बताती थी और यह विश्वास दिलाती थी कि उसकी जबान से देवी माता बोल रही है. गण के सदस्य यह विश्वास करते थे कि गणाचारिणी जो कुछ कह रही है, वह सब सही है.

इस तरह उन दिनों जो देवी-देवताओं की पूजाएं, पशु-बलिया, मानव-बलिया, उत्सव-पर्व आदि शुरू हुए, उनसे संबंधित कहानियां हमारे प्राचीन ग्रथों में हमें उपलब्ध होती हैं. **यजुर्वेद** तथा **तैत्तरीय ब्राह्मण** में उल्लिखित है कि पुरुष मेधयज्ञ में १८४ प्रकार के स्त्री-पुरुषों की बलि देते हैं. **ऐतरेय ब्राह्मण** में यह कथा है कि हरिश्चंद्र के द्वारा किये गये यज्ञ में शुनस्सेध नामक बालक को बलि पशु के रूप में यूपस्तभ से बाधा गया था. यह कहानी **भागवत** में भी है. **ओल्ड टेस्टामेंट** में यह कहानी है कि अब्राहम ने ईश्वर के लिए अपने सगे बेटे की बलि दी. **रामायण** तथा **महाभारत** में यह उल्लेख मिलता है कि श्रीराम तथा धर्मराज ने अश्वमेध राजसूय यज्ञ किये छठी सदी में विष्णु कुण्डिन वंश के प्रथम माधवन वर्मा द्वारा पुरुषमेध और सर्वमेध यज्ञ के उदाहरण मिलते हैं

जिस तरह आजकल अध विश्वासो के बीच भी विज्ञान और तकनीकी ज्ञान की उन्नति हो रही है, उसी प्रकार उस युग में भी विज्ञान का थोडा-बहुत विकास हुआ छोटे-छोटे ककडों को फेकने के रस्सी के तथा बाण के उपकरण और तीरकमानों के जमाने से आगे बढकर मानव ने वैज्ञानिक उपकरणों के आविष्कार की ओर कदम बढाया कुम्हार के चाक का आविष्कार हुआ उससे घडे बनाये गये. उनमें बीज, कद, मास तथा मछलियों को पकाकर खाने का प्रचलन हुआ इस प्रकार मानव ने वन्य युग से आगे बढकर सभ्यता के युग में पदार्पण किया.

पशुओ का पालन-पोषण

धीरे-धीरे मानव की समझ में यह बात आयी कि जानवरो को मारकर उनका मास खाने के बदले, उनका पालन-पोषण किया जाय तो वे और भी उपयोगी हो सकते है—दूध देते हैं और हर साल उनके बछड़े पैदा होते है, अत उनका पालन-पोषण करना अच्छा है. लोग पशुओं को पकडकर उन्हे पालने-पोसने लग गये. पशुओं के झुण्ड बढ़ने लगे जिन कबीलों ने पशु-सम्पदा का सग्रह किया, वे अन्य कबीलों की अपेक्षा अधिक विकास प्राप्त कर सके, दूध मक्खन और मास उन्हें अत्यधिक मात्रा में मिले. वे शारीरिक और मानसिक रूप से अधिक विकसित हुए.

पशुओं के झुण्डों में बढने के साथ-साथ देवी-देवताओं की सख्या में भी वृद्धि हुई. जिनमें उनकी गायें पानी पीती थीं, उन नदियों की तथा जिन पर गायें चरती थीं, उन पहाड़ों की भी वे लोग पूजा करने लगे. इसलिए गंगम्मा (गंगानम्मा), पर्वतम्मा (पार्वतम्मा-पार्वती) के नाम पर

उत्सव (जातराए), पूजाए होने लगी. इनके साथ-साथ क्षुद्र देवी-देवताओं की पूजाएं तो थीं ही. इसी कारण पूजाओं तथा तीर्थयात्राओं से संबंधित कितनी ही कहानिया महाभारत में दिखायी देती हैं.

वन्य अवस्था में जो पूजाए आरंभ हुईं, वे क्रमश: विकसित होकर शाक्त सम्प्रदाय की बुनियाद बनी कालक्रम मे यह शक्ति आदिशक्ति अवतारमूर्ति या पराशक्ति के रूप में वर्णित हुई कहते हैं शक्ति ने वामा, ज्येष्ठा, रौद्री, अंबिका, परा, इच्छा, ज्ञान, क्रिया, शांता नामक नौ अवतार धारण किये. उसके पश्चात् उसे त्रिपुरसुदरी मानकर उसकी पूजा की गयी. ये अवतार तथा ये पूजा पद्धतियां पुराणों में उल्लिखित हैं. किन्तु मामला यहीं तक नहीं रुका कालक्रम में वामाचार प्रबल हुआ शक्ति पूजा के सबध में शाक्त, शैव, वैष्णव, बौद्ध धर्मों के बीच में स्पर्धा बढ़ी किसी निर्लज्ज युवती को विवस्त्र करके उसके योनि-पीठ पर देवी को प्रतिष्ठित करके पूजा करना अच्छा माना गया पूजा के समय मद्यपान करना, मास-मछली और मिष्ठान्न खाना तथा अत मे मैथुन भी आवश्यक कहा गया इस प्रकार "मकार पचक" को अमल में लाने से मोक्ष प्राप्ति होने का विश्वास दिलाया गया.

सम्पत्ति का विभाजन

चाहे कितने भी तत्र सीखें जायें और चाहे कितने भी मत्र पढ़े जायें उनसे समाज का विकास सभव नहीं इसके लिए परिश्रम करना पड़ता है. पशुपालन के लिए उन्होंने मेहनत की इसलिए उनके पशुओं की सख्या बढी दूध, मक्खन और मास पर्याप्त मात्रा में मिलने पर आबादी बढी इससे यह बात सिद्ध हुई कि आवश्यक वस्तुओ के उत्पादन तथा जनसख्या की वृद्धि में सबध है किन्तु उनके सामने अब एक समस्या खडी हो गयी

पशु-पालन का जब प्रारम्भ हुआ, तब सारे झुड की मिलकियत सामूहिक थी कबीले के सब लोगों का उन पर हक होता था उसी प्रकार उनके पालन-पोषण की जिम्मेदारी भी सामूहिक थी इस व्यवस्था में सारे काम ठीक तरह से चलते थे किन्तु पशुओं के झुण्डों के बढ जाने से उन सब को एक ही जगह पर रखने और चराने में कठिनाई महसूस हुई इस वजह से गणों के हिसाब के अनुसार इन झुडों का बटवारा किया गया. बटे हुए पशुओं को अलग-अलग जगहों पर चराते हुए उनका पालन पोषण किया जाने लगा फिर पशुओं के बढे झुडों का अपने वंशों के हिसाब से उन्होंने बटवारा कर लिया इसके कारण सामूहिक पशु-सपत्ति सम्मिलित परिवार की सपत्ति के रूप में विभक्त हो गयी.

श्रम विभाजन

उस स्थिति में स्त्रिया अगर घर का काम सम्हालने लगीं तो पुरुष बाहर का काम देखने लगा. अत: इसमें कोई सदेह नहीं कि इतिहास में

सबसे पहले श्रम-विभाजन स्त्री-पुरुषों के बीच हुआ खाना पकाना, बच्चों का पालन-पोषण करना आदि घरेलू काम स्त्रियों के जिम्मे थे. पशुओं को चराना, दूध दुहकर लाना, इनके अतिरिक्त कंदमूल जुटाना, मास इत्यादि खाद्य सामग्री का प्रबंध करना पुरुषों के जिम्मे था तो भी पुरुषों को स्त्रियों का आज्ञाकारी होकर रहना पडता था. इसके सिवा कोई चारा ही न था इसका कारण क्या था ?

मातृ-सत्तात्मक समाज में बच्चों को यह मालूम होता था कि उनकी मा कौन है ? लेकिन उनका पिता कौन है इसकी जानकारी नही होती थी इसलिए वश परपरा को स्त्रियो के कारण ही पहचाना जा सकता था अत पारिवारिक रक्त सबध स्त्रियो से ही होता था इसलिए अधिकार एव प्रतिष्ठा भी स्त्रियों को ही प्राप्त होते थे आज तक भी मातृ-सत्तात्मक समाज वाले खासी और जयतिया कबीलों मे स्त्रिया प्रमुख है

केरल मे आज भी मातृ-सत्तात्मक समाज के तत्व विद्यमान है चद्रगुप्त मौर्य तथा गौतमी-पुत्र शातकर्णि के नामों के पहले उनकी माताओं के नामो का होना भी मातृ-सत्ताक समाज के कारण ही है.

नाते-रिश्तों का प्रारम्भ

आदिमानवों के इस दशा तक पहुचने में कई हजारों सालों का समय लगा सुदीर्घ काल में मानव समाज के विस्तार के साथ स्त्री-पुरुषों के बीच सम्बन्धों में कुछ प्रतिबध लगने लगे पहले बाप-बेटी और मा-बेटे के बीच लैंगिक सबध निषिद्ध माना गया उसके उपरात भाई-बहनों के बीच के लैंगिक सबधों का भी निषेध किया गया फिर कुछ और समय बीतने के बाद कुछ कबीलों के लोगों ने एक ही गण के स्त्री-पुरुषों के बीच सबध होना अच्छा न माना कुछ कबीलों के लोगों ने यह मान लिया कि एक ही गण के स्त्री-पुरुषों के सम्बन्धो से अच्छी सतान पैदा नही होती और उन्होंने इस पर रोक लगाने का निर्णय कर लिया. इस निर्णय के अच्छे परिणाम निकले विभिन्न कबीलो के स्त्री-पुरुषो के बीच सम्बध से बच्चों की बेहतर नस्ल पैदा हुई मा की तरफ के लोगो का शक्ति-सामर्थ्य तथा बाप की ओर के लोगों का शक्ति-सामर्थ्य उन बच्चो को विरासत में मिले. इसलिए एक गण की स्त्रिया अपने कबीले के दूसरे गण के पुरुषों को निमत्रण देती थी पुरुष स्त्रियों के यहां जाकर उनके साथ रहते थे

पितृसत्तात्मक समाज

जब पशुपालन का आरम्भ हुआ तब यद्यपि स्त्रिया ही प्रमुख होती थीं, लेकिन पशु उनके अधीन नही होते थे. वे पुरुषों की देखभाल में रहते थे. शिकार के लिए उपयोगी औजार पुरुषों के पास ही रहते थे. स्त्रियों का इनसे कोई सरोकार न था. पशु-पालन प्रारम्भ होने से पहले पुरुषों के साथ स्त्रियां भी जंगलों में जाती थीं और कंदमूल, फल, मास

जैसे खाद्य पदार्थों का सचयन करती थीं. परन्तु पशुओं की संख्या बढ़ने के बाद स्त्रियां ज्यादातर घरेलू काम-काज में ही बंध गयीं. वे खाना पकातीं, दूध उबालकर मक्खन निकालतीं, कम्बल बुनतीं और बच्चों का पालन-पोषण करती हुई सदा के लिए घर पर ही रह गयीं. हालांकि ये काम मुश्किल थे, फिर भी पशुओं को चराने, तीर-कमान जैसे हथियारों का इस्तेमाल करने को जो महत्व प्राप्त था, वह इन घरेलू कामों को न प्राप्त था. इसके अलावा घर पर ही रहते-रहते स्त्रियों में कोमलता आने लगी. फलस्वरूप ऐसी परिस्थितियां बन गयीं जिनके कारण स्त्रियां खाद्य सामग्री के लिए पुरुषों की मोहताज होती चली गयीं.

खाद्य सामग्री की प्राप्ति के लिए आवश्यक पशु-संपत्ति और शिकार खेलने के लिए जरूरी हथियारों के पुरुषों के हाथों में ही रह जाने से, उन्हें स्त्रियों से अधिक महत्व प्राप्त होने लगा. इसलिए स्त्रियों के साथ कोई झगड़ा होने पर पुरुष झुकते नहीं थे. अपने हथियार और औजार लेकर, जिस गण में अपना जन्म हुआ, उसमें चले जाते थे. चरवाहों की अनुपस्थिति के कारण पशु बिखर जाते थे. दूध और मांस की कमी पड़ जाती थी. कभी-कभी पुरुष पशुओं को भी अपने साथ हांक ले जाते थे. इस कारण स्त्रियां पुरुषों से दब कर रहने लगीं. कालक्रम में पुरुष चाहने लगे कि वे अपनी अधीनता में रहने वाले पशु और औजार अपनी निजी संतान को ही दें. उसने सोचा कि यदि मेरी अपनी संतान मुझे पिता के रूप में मान्यता दे तो मेरा महत्व बढ़ेगा. मगर मातृसत्तात्मक समाज में यह कैसे संभव हो सकता है? बच्चे यह जानते ही न थे कि हमारा जन्मदाता पिता कौन है?

इसलिए पुरुष ऐसी स्त्री को ही पाने का प्रयत्न करने लगा, जो सिर्फ उसी के साथ रहे. स्त्री को अपने वश में करने के लिए पशु-संपदा दिखायी, शिकार करने में अपनी क्षमता का, हर तरह से अपनी श्रेष्ठता का प्रदर्शन किया.

अनेक पुरुषों के साथ यौनिक सम्बंधों से पैदा हो रही विरक्ति के कारण, सब प्रकार से समर्थ, योग्य पुरुष के साथ रहने को स्त्री भी उत्सुक थी.

किंतु गण के सदस्यों ने इसे स्वीकार नहीं किया. उनका कहना था कि यह एक गण के पुरुषों के दूसरे गण की स्त्रियों के साथ सामूहिक रूप से रहने के नियम के विरुद्ध है. उन्होंने यह शर्त लगायी कि अगर कोई स्त्री एक ही पुरुष की होकर रहना चाहे तो पहले उसे उस गण के दूसरे पुरुषों की इच्छा पूरी करनी होगी. पुरुष को, अपने साथ रहने के लिए राजी होने वाली स्त्री के पहले कितने पुरुषों के साथ शारीरिक सम्बन्ध रह चुके थे इस पर कोई एतराज नहीं होता था.

प्रत्येक स्त्री पहले दूसरे पुरुषों की इच्छा-पूर्ति करने के बाद ही अपने मन चाहे पुरुष के साथ रहने का हक पाती थी. इससे स्त्रियों की सत्ता छिनने का रास्ता निकला. स्त्री के अपने मन चाहे पुरुष के साथ रहने के कारण, उसकी कोख से पैदा हुए बच्चे अपने पिता को भी पहचानने लगे.

फिर क्या था ! वंश-परम्परा मातृसत्ताक न रहकर पितृसत्ताक होने लगी. अब तक वंश-परम्परा में जो मुख्य स्थान माता को प्राप्त था वह अब पिता को प्राप्त होने लगा. इस तरह मातृसत्ताक समाज पितृसत्ताक समाज में परिणत हो गया.

इस प्रकार के परिवर्तन की स्थिति में स्त्री-पुरुषों के बीच जो समझौते हुए, जो संबंध स्थापित हुए, उनके विवरण महाभारत में उपलब्ध हैं. गालव की कथा में वे स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होते हैं.

माधवी ययाति की बेटी थी ययाति की इच्छा के अनुसार उसने आठ सौ अनोखे घोड़े प्राप्त कर गालव को देने का बीड़ा उठाया. वह एक पुत्र का जन्म होने तक इक्ष्वाकु राजा के साथ रही और उसके यहां से दो सौ घोड़े लेकर, माधवी ने उन्हें गालव को दिया फिर वह काशी के राजा के पास गयी. काशी के राजा से दो सौ घोड़े लेकर फिर पुत्र के पैदा होने तक माधवी उसके साथ रही उसके पश्चात् भोजपुर के राजा से भी दो सौ घोड़े लेकर उसे माधवी ने एक पुत्र दिया अंत में विश्वामित्र के यहां जाकर उनके द्वारा भी एक पुत्र को जन्म देकर उनसे दो सौ घोड़े लेने के बाद आठ सौ घोड़ों का हिसाब पूरा किया तब गालव उन घोड़ों को गुरु दक्षिणा के रूप में विश्वामित्र को देकर उऋण हुआ

गण के नियमों में परिवर्तन

पितृसत्तात्मक समाज बनने के पश्चात् गण के नियमों में कुछ परिवर्तन किये गये किसी एक ही पुरुष के साथ रहने की इच्छा रखने वाली स्त्री द्वारा पहले गण के सभी पुरुष सदस्यों की इच्छा-पूर्ति करने के नियम को बदल दिया गया नियम यह बनाया गया कि ऐसी स्त्री का गण के मुखिया की इच्छा-पूर्ति करना काफी है अथवा कुछ दिन मंदिर में रहकर अपने मनचाहे पुरुषों के साथ शयन-सुख के बाद मिली संपत्ति को देवी के लिए अर्पित करने पर भी उसे अपने मन पसंद पुरुष के साथ रहने की अनुमति मिल जाती थी एक ही पुरुष की होकर रहने की इच्छा न रखने वाली स्त्री किसी से भी शारीरिक सम्बंध स्थापित करने को स्वतंत्र थी

एंगेल्स ने लिखा—एशिया माइनर के लोग अपनी जवान लड़कियों को कुछ साल तक "अनैतिस" के मंदिर में रखते थे बेबिलोनियन स्त्रियां साल में एक बार "मिलिट्टा" के मंदिर में आत्मसमर्पण करती थी. अब भी हमारे देश में जहां-तहां जवान लड़कियों को मंदिरों में रखने और उनको व्यभिचार में उतारने का रिवाज दिखाई देता है "सौंदट्टि" क्षेत्र में यह कुप्रथा आज भी विद्यमान है वहां हर एक परिवार से एक युवती "यल्लम्मा" देवी के नाम पर समर्पित की जाती है.

कुछ कबीलों में भिन्न रिवाज था. किसी के विवाह में शामिल होने के लिए

आये हुए सभी स्त्री-पुरुषों का तीन दिन तक स्वेच्छा-संगम होता था. चोलियों के त्यौहार और काम-दहन के उत्सव तो केवल स्वेच्छा-संगम के निमित्त ही थे.

समय व्यतीत होने के साथ स्वेच्छा-संगम को धर्म-सम्मत न मानने वाले गण-प्रमुखों ने उनके साथ शाप या वरदान की कहानियां जोड़ दीं. लेकिन इन पर्दों को हटाने पर उनका सही रूप सामने आता है. कहते हैं कि माहिष्मती नगर की स्त्रियां अत्यंत सुंदर होती थीं, इसलिए अग्निदेव ने वहां के निषध नामक राजा को उन्हें स्वेच्छा संगम की अनुमति देने का आदेश दिया. इस तरह यह कहानी महाभारत में जोड़कर यह सिद्ध किया गया कि उनके स्वेच्छा-संगम निर्दोष हैं. ऐसी ही एक दूसरी कहानी भी है. नील राजा की बेटी से अग्निदेव प्यार करता था, इसलिए जब वह दिखाई नहीं देती, तब वह कमजोर होकर बुझ जाता और जब वह आकर अग्निकुण्ड पर पंखे से हवा करती, तब वह प्रज्ज्वलित हो उठता था. इसे देख पुरोहितों ने राजा से यह बात कही, और अग्निदेव ने यह वरदान दिया कि उस नगर की स्त्रियों के स्वेच्छा-संगम करने पर भी कोई दोष नहीं होगा.

इस तरह की चाहे कितनी कहानियां क्यों न सुनायी जायें तो भी महाभारत से यह तथ्य स्पष्ट है कि उसके रचनाकाल में भी कुछ कबीलों में स्वेच्छा-संगम चलते थे.

अंगराज कर्ण ने यह कहकर शल्य की निंदा की कि बिना किसी संबंध का ख्याल किये तुम्हारे मद्र देश की स्त्रियां पुरुषों से संगम करती हैं और उसे बुरा नहीं माना जाता, तो शल्य ने यह कहकर कर्ण की भर्त्सना की कि तुम्हारे अंगदेश में तो पुरुष अपनी पत्नियों को बेचते तक हैं ? पांडुराजा ने कुंती को जो कहानी सुनायी उसमें यह बात स्पष्ट है कि उत्तर कुरु-भूमि में स्वेच्छा-संगम धर्मसम्मत माना जाता था. यह कहानी सुनने पर ही कुंती ने 'देवर-न्याय' के अनुसार पुत्रों को जन्म दिया.

इन सब उदाहरणों से यह प्रमाणित होता है कि हमारे देश में किसी समय स्वेच्छा-संगम प्रचलित था. पशुपालन प्रारंभ होने के बाद जब कि स्त्रियां एक ही पुरुष के साथ रहने लगीं, तब भी उन्हें गण धर्म का पालन करना पड़ा. पहले-पहल गण के सारे सदस्यों की इच्छा की पूर्ति करना उन स्त्रियों के लिए अनिवार्य था. कुछ समय बीतने के बाद यह मान लिया गया कि गण प्रमुखों को ही शयन-सुख देना काफी है.

पशुपालन की अवस्था से खेती-बारी की अवस्था में पहुंचे कुछ कबीलों के गण-नियम में कुछ फेर-बदल हुए. यह माना जाने लगा कि यदि कोई स्त्री गण-प्रमुख या पुरोहित को तीन दिन तक शयन-सुख प्रदान करे तो उसका धर्मपालन पूर्ण माना जायेगा.

इन परिवर्तनों का मूल कारण पशुपालन का प्रारम्भ ही था. पशुपालन करने वाले लोग खाद्य सामग्री को चुनने की अवस्था को पार करके स्वयं उसका उत्पादन करने की अवस्था में पहुंच गये थे. उत्पादन के संसाधनों

पर मानवों के ऐसे विशेष अधिकार का रास्ता खुल गया था जो किसी अन्य प्राणी को प्राप्त न था. अपनी आवश्यकता से अधिक उत्पादन कर सकने के कारण उसकी सपत्ति बढी. सपत्ति पर अधिकार जमाये हुए पुरुषों ने स्त्रियों को पीछे ढकेल दिया जैसा कि एंगेल्स कहते हैं, स्त्रियों को इसी अवस्था में ऐतिहासिक पराजय मिली.

गायें ही जीवन का मूलाधार

जगली जीवन से निकल कर विकास की ओर बढने का मूल कारण पशुपालन था. इसीलिए वैदिक काल के आर्यों ने गायों को अपने प्राणों के समान माना. वे उनकी रक्षार्थ देवी-देवताओं से प्रार्थनाएं भी करते थे.

उनकी प्रार्थना होती थी—"भूली-भटकी गायों को ढूढने के लिए जाने वाला, गायों के साथ जगल जाने वाला, गायों को चराने के लिए जाने वाला, उन्हें वापस लाने वाला, गोपाल गायों के साथ सुख से घर लौटे" (ऋग्वेद १०-१९)

"देवताओं के प्राणो का आधार गाय है. मानवों के जीवन का मूलाधार गाय है. गाय ही यह ससार है. सूरज आकाश में जितनी दूर तक अपना प्रकाश फैलाता है, उतनी दूर तक फैली यह सारी दुनिया गाय ही है." (अथर्ववेद १०-१०)

इन प्रार्थनाओं तथा प्रशसाओं से यह समझ लेना भूल होगी कि वैदिक कालीन आर्य गो मास-भक्षण नही करते थे. इस बात के अनेक प्रबल प्रमाण वेदों में ही मिलते हैं कि आर्य बकरियों और घोड़ों के मांस के साथ-साथ गाय का मास भी खाते थे. तो भी आर्यों ने अपने प्राणों से बढकर गायों की रक्षा की तो इसका मुख्य कारण उन गायों की उपयोगिता ही था

कद्दुओं को कद्दू खाने के लिए ही उगाया जाता है. बकरियों का पालना उनको काटकर खाने के लिए ही है. प्राय· गायों को पालना भी इसी तरह का है गायों से दूध, मक्खन, मास और चमड़ा भी पर्याप्त मात्रा में मिलता था. अत: उन दिनों पशु-संपत्ति ही सबसे उत्तम संपत्ति मानी जाती थी इसीलिए गाय को उतना महत्व मिला. यज्ञों में गाय की बलि चढाकर आर्य देवताओं को सतुष्ट करने का प्रयास करते थे.

भारत के आर्य खासकर गायें पालते थे, तो मगोलिया के लोग घोड़े पालते थे यहूदी भेडों को पालते थे और अरबी भेड़ों के साथ ऊंटों को भी पालते थे जिस प्रदेश में जो जानवर अच्छी तरह पल सकते थे, उस प्रदेश के लोग उन जानवरों को पालते-पोसते थे अमेरिका महाद्वीप में भेडों, घोडों और गायों का अभाव होने से वहा के लोग पशुपालन नही कर पाये इसीलिए रेड इंडियन जैसी नस्लों के लोग पिछड़े रह गये. यूरोप से जहाजों पर लादकर पशुओं को ले जाने के बाद ही वहा पशुपालन आरम्भ हो सका

भारत देश में यज्ञ-हवन आदि क्रतुओं का बोलबाला हो जाने पर यज्ञ में गायों और बछड़ों की बलि की प्रथा बहुत बढ़ गयी. इसके कारण पशु-पालन तथा खेती-बारी को नुकसान पहुचा. फसल और दूध की कमी होने लगी. इसीलिए महावीर तथा बुद्ध ने यज्ञ-हवन आदि का विरोध किया. लोग समझने लगे कि अगर पशुपालन में वृद्धि नहीं होगी तो दूध और अनाज के लिए तरसना पड़ेगा. अत: एक बार फिर वे गायों को अपने प्राणों से बढ़कर मानने लगे

देवियों के साथ देवता

पशुओं की संख्या बढने के बाद मातृसत्तात्मक समाज पितृसत्तात्मक समाज में परिवर्तित हो गया तो देवियों के स्थान पर देव प्रकट होने लगे देवों की पूजा के लिए स्त्रियों को अयोग्य मान पुरुष पुजारी बनने लगे.

भूदेवी तो माता जैसी है. फिर पिता कौन है ? माता के गर्भ से पिता के बिना सतान पैदा नहीं होती. अगर सूर्य अपने प्रकाश और तेज का प्रसार नहीं करता तो भूदेवी के गर्भ से पेड़-पौधे पैदा नही होते अतएव उन लोगों ने सूर्य को पिता के समान समझा. भूमि की पूजा के साथ सूर्य नमस्कार भी शुरू किया गया मिस्र देश के लोगों ने आइसिस (प्रकृति देवी) की पूजा करके "ओसिरिस" को भी प्रणाम किया. यदि हमारे यहा सूर्य के द्वारा कुती के गर्भ से कर्ण के जन्म की कहानी प्रचलित हुई तो मिस्र में "आइसिस" और "ओसिरिस" के सयोग से "होरस" के पैदा होने की मिस्र के लोग ही नही बल्कि ग्रीक और रोमन भी ई सन् चौथी शताब्दी तक "आइसिस" की पूजा करते रहे आज भी हमारे देश में ऐसे लोग हैं जो सूर्य नमस्कार करते हैं और ऐसे भी लोग हैं जो गौता-लम्मा (कुन्ती) का त्यौहार मनाते हैं

इस प्रकार देवों के साथ देवियों की पूजा होने पर भी देवों को प्रमुख स्थान देने के लिए कुछ कहानिया गढी गयीं स्त्रियों से बढकर पुरुषों के महत्व की घोषणा करने के लिए भी कुछ कहानियों की कल्पना की गयी ये कहानिया हमारे पुराणों के साथ दूसरे देशों के पुराणों में भी मिलती हैं.

ग्रीक पुराणों में एक कथा है—"किलताम्नेस्त्रा" नामक स्त्री ने अपने प्रिय अजिस्टस पर मोहाकर्षण के कारण अपने पति "अगमेम्नास" की हत्या कर दी. उसके प्रतिशोध में उसके पुत्र "ओरेस्टस" ने कुल्हाड़ी से अपनी मां के टुकड़े कर दिये तब मातृसत्तात्मक समाज की उग्र देवियां मातृहत्या को महापाप मान उसके पीछे पड गयीं. इतने में पितृसत्ताक समाज के दो देवों ने उनके बीच पडकर उसे बचाया. दोनों पक्षों के बीच कुछ वाद-विवाद के बाद उन्होंने पचायत के सामने अपना मामला पेश किया

मातृसत्तात्मक देवियों ने जिरह की कि मातृहत्या के अपराधी "ओरेस्टस"

को मार डालना चाहिए मृत्यु दंड के सिवा इस पाप का कोई प्रायश्चित नहीं. "ओरेस्टस" ने अपने पक्ष का समर्थन करते हुए कहा कि मेरी मा ने अपने पति की हत्या की अर्थात मेरे पिता की हत्या की इस प्रकार उसने दो हत्याएं की. दो हत्याओं की हत्यारिणी अपनी मा की मैंने हत्या की. चूकि मैंने एक ही हत्या की, इसलिए मुझे हत्यारा कहकर मेरे पीछे पड़ जाना उचित नहीं.

"ओरेस्टस" के तर्क का खंडन करते हुए मातृसत्ताक देवियों ने अपनी बात पर जोर देकर कहा कि तुम्हारी माता और पिता के बीच रक्त सबध नहीं. वे दोनों अलग-अलग गणों में पैदा हुए अत: तुम्हारी माता ने तुम्हारे पिता की हत्या की, तो भी उसमें कोई पाप नहीं है मगर तुम्हारे और तुम्हारी मा के बीच संबंध है उनके दोनों के रक्त से तुम पैदा हुए इसलिए अपनी माता की हत्या के अपराध में तुम्हें मार डालना अनिवार्य है.

पंचों के रूप में आये हुए देवताओं ने दोनों पक्षों के वाद-विवादों को सुना और दोनों पक्षों की तरफ दो पंच हो गये इस पर अध्यक्ष ने अपने विशिष्ट मताधिकार का उपयोग किया, जिससे "ओरेस्टस" बच गया

इसके फलस्वरूप जब मातृसत्ताक देविया अपनी हार पर दुःखी होने लगी, तब उनको कोई विशेष स्थान दिखाकर, वहा उनकी स्थापना सम्मानपूर्वक कर दी गयी

भगवद्गीता इस प्रश्न का जवाब थी कि अपने सगे-सम्बन्धी (रक्त सम्बन्धी) लोगों की हत्या की जा सकती है जब अर्जुन ने यह मानकर शस्त्र-त्याग किया कि अपने सगे-सबधियों को मारना महापाप है तब कृष्ण ने उसे क्षात्र-धर्म की शिक्षा देकर उससे युद्ध कराया और स्वजनों का वध कराया इसलिए इससे साबित होता है कि महाभारत युद्ध के पहले रक्त सम्बन्ध का महत्व था.

भागवत में एक कहानी है जिससे पता चलता है कि पितृसत्तात्मक समाज का प्रारम्भ होते ही माताओं का महत्व घट गया. जमदग्नि महामुनि की पत्नी थी रेणुका देवी एक बार वह पानी लाने के लिए नदी तट पर गयी. वहा चित्ररथ नामक गधर्व को अप्सराओं के साथ जल क्रीड़ा करते देख उसका मन विचलित हो गया इसका पता लगते ही जमदग्नि आपे से बाहर हो गया तुरन्त उसने अपने पुत्रों को उसे मारने का हुक्म दिया. यद्यपि उन दिनों में बार-बार दोहराया जाता था "मातृदेवो भव, पितृदेवो भव". तथापि वह समय ऐसा था जबकि पिता की आज्ञा का उल्लंघन करना संभव न था. फिर भी तीन बड़े बेटों ने पिता की आज्ञा का उल्लंघन किया किन्तु सबसे छोटे पुत्र परशुराम ने कुल्हाड़ी से माता के टुकड़े कर दिया ज्योंही जमदग्नि ने अपनी आज्ञा न मानने वाले तीनों बड़े बेटों का भी वध करने की आज्ञा दी, त्योंही परशुराम ने उन तीनों

बड़े भाइयों को भी मार दिया फिर बाद में अपने पिता को प्रसन्न करके परशुराम ने अपनी मा और तीनों बड़े भाइयों को जिला लिया.

अंत में यह कहकर कहानी समाप्त की गयी कि जिस परशुराम ने मां और तीनों बड़े भाइयों को काट डाला, वह भगवान विष्णु का अवतार था जिसने मारने की आज्ञा दी, वह महान तपस्वी जमदग्नि महामुनि थे यज्ञ फल के रूप में वे पैदा हुए, इसलिए वे मारे गये लोगों को जिला सके

चाहे इस कहानी को हम दरकिनार कर दे तो भी यह बात स्पष्ट है कि एक समय में पत्नियों को मारना, पत्नी और बच्चों को बेचना, अथवा जुए के दाव पर चढाना बुरा नहीं माना जाता था वेद में इसका उल्लेख है कि एक जुआरी जुए में अपनी पत्नी हार बैठा. धर्मराज ने भी जुए में ही अपनी पत्नी खोयी हरिश्चन्द्र ने अपनी पत्नी और पुत्र को बेच डाला. अजीगर्त ने अपने पुत्र शुनस्सेप को यज्ञ पशु के रूप में बेच दिया. यह जानने के लिए कि उन दिनों गृह स्वामी के अधिकार कैसे थे, ये कहानियां पर्याप्त है

पुरुषों का महत्व स्थापित हो जाने पर इस बात के लिए बहस छिडी कि देवताओं में बडा कौन है ? कुछ लोगों ने कहा कि अग्नि की स्तुति के साथ ऋग्वेद का प्रारम्भ हुआ है, इसलिए अग्नि देव ही सबसे बड़े है दूसरे कुछ लोगों ने कहा कि सूर्य को ही देवताओं का वास्तविक रूप कहकर उसकी स्तुति करने वाले मत्र ऋग्वेद में है, अत सूर्य ही सर्वप्रथम देवता है अत में तय किया गया कि वायु, वरुण, अग्नि जैसे देवताओं के अधिपति इन्द्र है चूंकि पानी, हवा और आग के बिना मनुष्य मात्र का अस्तित्व ही असभव है, इसलिए ऋग्वेद काल में ही उन तीनों को वरुण, वायु और अग्नि देवता कहकर उनकी स्तुति की गयी चद्र से चांदनी और सूर्य से प्रकाश मिलते है, अत. उन दोनों को भी देवताओं की सूची में जोड़ा गया कुछ लोगों ने "उपस्" को सबसे बडा मानकर उसकी स्तुति की कुछ ने कहा कि अश्वनी देवता प्रमुख है कुछ का कहना था आकाश की बिजली गिरने से लगने वाली चोट की बराबरी कोई नहीं कर सकता, इसलिए "इध" (बिजली) की प्रार्थना करना बेहतर है "इध" को "इन्द्र" के रूप में बदल दिया गया

रात के अधकार में उजाला फैलाने वाले दिये की तरह आकाश में दिव्या (नक्षत्र) कांति का प्रसार करता है इस प्रकार के "दिव्या" तैंतीस करोड है इन दिव्याओं को देवताओं के रूप में बदल दिया गया. उन नक्षत्र मण्डलों के जो नाम रखे गये, उन्हे लेकर तरह-तरह की कहानियां कही जाने लगी

जिस देवता को सबसे बडा दिखाना होता उसके सम्बध में अपने अनुकूल अर्थवाली ऋचाओं को उठाकर उदाहरण दिये जाते थे किन्तु ऋग्वेद का अनुशीलन करने पर हम क्या पाते है

देवी-देवताओं में रिश्ते-नाते विचक्षण नहीं है

"सूर्य अग्नि से पैदा हुआ, अग्नि सूर्य से पैदा हुआ दक्ष अदिति से पैदा हुआ, अदिति दक्ष से पैदा हुई", ऐसे कई और वर्णन ऋग्वेद में हैं. यह सब क्या है ? बेटी से पिता का पैदा होना क्या है ? बेटे से मां का पैदा होना क्या है ? यह पूछने पर जवाब मिलता है कि यह देवता धर्म है इसे सच साबित करने के लिए अवतार सम्बन्धी कहानियां जोड दी गयीं कुछ और कहानियां लिखी गयीं कि वे देवता हैं, इसलिए उन्हें सगे-सम्बन्धों की इस विचक्षणता से मतलब नहीं भागवत में प्रद्युम्न की कहानी पढने से हमें इसकी विस्तृत जानकारी मिलती है भागवत में लिखा है—"रुक्मिणी देवी से प्रद्युम्न का जन्म हुआ शबरासुर ने यह जानकर कि उसके हाथ में मेरा मरण होना अनिवार्य है, सातवें दिन उस शिशु को ले जाकर समुद्र में फेंक दिया. एक मछली ने उस शिशु को निगल लिया उस मछली को मछुआरों ने पकड कर शबरासुर को भेंट के रूप में दिया जब मछली काटी गयी, तब उसके पेट के अंदर से निकले बच्चे की सुंदरता को देख शबरासुर की पत्नी मायावती ने कहा कि मैं इसे पालूंगी जब वह लड़का बालिग हुआ तब मायावती उसके प्रति आकर्षित हुई प्रद्युम्न ने मायावती की भर्त्सना की कि बेटे के प्रति माता का ऐसा आकर्षण गलत है. तब मायावती ने कहा कि पिछले जन्म में तुम मन्मथ थे और मैं रति थी मैं तुम्हारी प्रतीक्षा में ही यहां हूं तुम शबरासुर का वध करो फिर हम दोनों मिलकर द्वारका चले जायेंगे प्रद्युम्न ने तुरन्त शबरासुर को मार दिया और वह मायावती (रतीदेवी) के साथ द्वारका जा पहुंचे"

दूसरे देशों में भी इस प्रकार की कई कहानियां प्रचलित हैं मिस्र देशवासियों की देवी का पति उसका बेटा ही था. उसका नाम था तम्मज. ग्रीक पुराणों में दूसरे प्रकार की कहानी है देवाधिदेव "जियेस" एक सुन्दर युवक को देखकर उसे उठा ले गया उस युवक का नाम था "गानिमेडे" इससे पता चलता है कि मानवों में जो कमजोरी है, वह देवों में भी मौजूद है

मानवों के बीच सगे-सम्बंध

देवी-देवताओं के बीच सगे-सम्बन्धों की जरूरत न थी तो भी मनुष्यों के लिए इनकी जरूरत पडी

यद्यपि कुछ कबीलों ने एक ही गण के स्त्री-पुरुषों के बीच लैंगिक सम्बंध का निषेध किया, तथापि कुछ कबीलों ने ऐसा नहीं किया किन्तु जब पितृसत्तात्मक समाज बना, तब भाई-बहन के बेटे-बेटियों के विवाह का निषेध किया गया जैसे एक ही रक्त वाले भाई-बहन के बीच लैंगिक सम्बंध की मनाही कर दी गयी, वैसे ही उनकी संतानों के बीच भी लैंगिक

सम्बन्धों पर रोक लगा दी गयी किन्तु उस तरह के कबीलों में भाई-भाई की संतान के बीच में विवाह सम्बध स्वीकृत थे वही अतर्विवाह पद्धति थी

इस प्रकार के विवाह तथा निषेध अब भी है

इज़ायेली कबीले के योसेफ गोत्र मे पैदा हुए सेलोयेहाद के कोई पुत्र न था, किन्तु पाच पुत्रिया थी योसेफ गोत्रियों को डर लगा कि यदि इन पांचों लडकियो की शादिया दूसरे गोत्र के लडको के साथ कर दी जायेगी तो उनकी सम्पत्ति का बंटवारा हो जायगा और उन लडकियों के साथ वह सपत्ति भी बाहर चली जायगी , इसलिए मोषे ने आज्ञा दी कि वे उसके पांच लडकों के साथ शादी कर सकती है मोषे ने कहा कि भगवान से सलाह-मशविरा करने के बाद ही मैं इस तरह का हुक्म दे रहा हू इस तरह उसने इस स्वार्थपूर्ण कार्य के बीच में भगवान को भी फसाया इस कारण से उन पाचों कन्याओं ने अपने चचेरे भाइयो से शादी कर ली यह बाइबिल के ओल्ड टेस्टामेंट में लिखी गयी कहानी है.

उक्त कहानी से यह स्पष्ट है कि सपत्ति के लालच में किस प्रकार इस वैज्ञानिक तथ्य को ठुकरा दिया गया कि सन्निकट रक्त सम्बन्धियों के बीच विवाह-सम्बन्ध स्थापित होना अच्छा नही.

सपत्ति के लालच के साथ वशगौरव की बात भी थी साथ ही यह अहकार भी प्रबल हुआ कि अन्य गणों से हमारा गण श्रेष्ठ है इसीलिए आज भी कहीं-कही भाई-भाई के और भाई-बहिन के लडके-लड़कियों के बीच में विवाह होते है, मामा अपनी भानजी से विवाह करता है, तो अपनी बेटी का अपने साले के साथ विवाह कर देता है

वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि इस प्रकार के रिश्तों से विकारग्रस्त बच्चे पैदा होगे उन्होंने सपिड और सगोत्र विवाहों का निषेध किया उनका कहना है कि माता की ओर से चार पीढियों तक, और पिता की ओर से सात पीढियों तक वैवाहिक सम्बन्ध कायम करना ठीक नही रहता

ऐसे सदर्भो में चाहे वैज्ञानिक सूत्रों का उल्लघन किया जाय, तो भी नित्य जीवन के अनुभव में इनका तिरस्कार नही किया जा सकता तक-नीकी एव वैज्ञानिक शास्त्रों को छोड तात्रिक तथा मात्रिक प्रक्रियाओं द्वारा सपत्ति का उत्पादन नही किया जा सकता. यह नग्न सत्य है जो आज नही, बल्कि बरसो पहले सिद्ध हो चुका है .

खेतीबाडी का प्रारंभ

जब बढई और लोहार हल और उसके लिए जरूरी औजार तैयार करने लगे तब कृषि का आरम्भ हुआ खेती बढी और फसलें विस्तृत रूप से उगायी जाने लगी पशुओं की खूब वृद्धि हुई यज्ञ-भोग आदि से नहीं, मनुष्य के परिश्रम से सपत्ति की वृद्धि हुई यज्ञों से पशु सपत्ति के

नाश और खेती की हानि के सिवा कुछ फायदा न हुआ इसलिए यज्ञों का विरोध करने वाले बौद्ध व जैन धर्मों का प्रसार होने लगा

अगर खेतीबाडी करके फसलें न उगायी जाती तो पशु-सपत्ति की वृद्धि नही होती. तुरानियन पठार जैसी जगहों में सर्दी के दिनों में खेत बरफ से ढके रहते हैं और उस समय पशुओं को चारा नही मिलता. इसी प्रकार भारत देश में भी गर्मियों में चारागाहें सूख जाती हैं. इस-लिए वर्षाकाल में ही फसलों को पैदा करके उनका संचय करना पडता था इसी कारण से पशुपालकों ने फसलें बढाने के लिए कमर कस ली इसके लिए उन्होंने कई मुसीबतों का सामना किया. तो भी फलों के पौधे लगाने का उन्हें जो अनुभव था, उसके आधार पर वे आगे बढते रहे

लोग फल खाकर उनके बीज इधर-उधर फेंक देते थे, तब उनसे पौधे निकल आते थे स्त्रिया पौधों से फल निकालती और लोग उन्हे खाते इस प्रक्रिया मे आसानी से फल मिलने के कारण उन्होंने और भी कुछ फलों के पौधे लगाये इस प्रकार फलों के बगीचों को बढाने का काम स्त्रियो द्वारा प्रारम्भ हुआ

इसी तरह उन्होंने जान लिया कि जौ, गेहू वगैरह की फसलों को लगाने पर वे पशुओं के चारे के लिए भी उपयोगी होगी अत वे गर्मियों में ठूठों को जला देती पानी बरसने के साथ ही नोकदार लकडियों से जमीन की खुदाई कर उनमे बीज डाले जाते फल लगने पर उन्हे काटकर उनका सचय कर लिया जाता मगर पशुओं की वृद्धि के साथ चारे की कमी होने लगी पशु गले का काटा बन गये अत उन्हें विस्तृत क्षेत्रों में फसलें उगानी पडी इस क्रम में उन्हें ऐसी जमीने भी मिली जहा लकडियों से छेद करना सम्भव न हुआ अत उन्हें उसके लायक औजारों की जरूरत महसूस हुई इस कारण बढई और लोहार हल तैयार करने की ओर प्रवृत्त हुए बहुत माथा-पच्ची के बाद एक अच्छा हल तैयार करने मे वे सफल हुए और खेती के काम मे उसकी उपयोगिता से वे सतुष्ट हुए

उनकी खुशी का ठिकाना न रहा हल की प्रशसा करते हुए उन्होंने अपनी खुशी प्रकट की—"यह हल कैसा है? वह वज्र की तरह पैनी धार-वाला है किसान को किसी प्रकार का कष्ट दिये बिना वह जमीन को छेदता है ऊबड़-खाबड जमीनों में भी वह चलता है वह कृषकों की प्रशसा के लायक है इसकी मदद से खेत में फसलें पनपती हैं तो मालिक पशु-गण इत्यादि की समृद्धि से मालामाल बनता है" (तै. स ४-२-५-६)

इस हल की मदद से किसानों ने बीहड़ जमीनों को जोता फसलें बढ़ीं और पशुओं की टोलिया भी बढ़ी. इसलिए किसानों ने खेती-बाडी के लायक स्थानों में अपने स्थिर-निवास का प्रबन्ध कर लिया. कृषक गीत गाते उन्होंने बीहड़ जमीनों को जोता.

उनकी यह प्रार्थना है—"हल की नोक से जुती भूमि! हम तुम्हारी

वदना करते हैं तुम हमारे अनुकूल बनो. सुन्दर धान्यरूपी फल प्रदान करने वाली बनो." (ऋग्वेद-४-५७-६)

इस तरह ठूठों को काटकर बनी नोकदार लकडियों के सहारे जमीन को जोतकर फसल उगाने के दिनों की कथाएं गाथाओं के रूप में परिणत हुई राम की कथा उसी काल की है एसाबु की कहानी भी उसी जमाने की है राम की कथा इक्ष्वाकु वश की है तो एसाबु की कथा इसाक वश की

"इसाक ने अपने बडे बेटे एसाबु को ऊसर जमीन वाले जगल में भेजा तो भी एसाबु हताश नहीं हुआ. उसने बेकार की पडी हुई ऊसर जमीनों को अपना पसीना बहाकर उपजाऊ कृषि क्षेत्रों में बदल दिया पशुगण की वृद्धि करके सस्य सपत्ति को बढाकर "केबुर" में उसने अपने स्थिर-निवास का प्रबन्ध कर लिया" (ओल्ड टेस्टामेंट से)

श्रीराम ने जगल में जाकर हल हाथ में लिया उन्होंने अहिल्या (जो न जोती गयी) को जोत कर धान्यलक्ष्मी की सृष्टि की इसलिए रामायण में शिला को स्त्री के रूप में बदलने की अहिल्याशाप-विमोचन की कहानी कल्पित हुई

इस सारी प्रगति की कुजी हल था जिस कबीले के लोग उसका उपयोग करना जानते थे, उन्होंने अपने दोस्त बने दूसरे कबीलो के लोगों को उसे दिया उन्हे उसे बनाने का और उससे खेत जोतने का तरीका उन्हें सिखाया.

"सीत्यम्", "हल्यम्" अर्थात् जुती हुई जमीन, "द्विवसीत्यम", "द्विहल्यम्" अर्थात् दो बार जुती हुई जमीन कहकर "अमरकोश में उल्लिखित है

"सीता शब्द के अर्थ भूमि, हल और जुती हुई जमीन में हल की नोक से बनी रेखा बताये गये है खेती के लिए उपयुक्त हल राजा जनक को मिला इसीलिए कहा गया कि हल से जोती गयी जमीन की रेखा मे मिली हल का आविष्कार होने से शिकार के काम मे आने वाले तीर-कमान का महत्व घट गया इसलिए रामायण में यह कथा वर्णित हुई कि श्रीराम ने शिवधनुष को तोडा, जिससे सीता (हल) के द्वारा सूर्यवश और चद्रवश के बीच रिश्तेदारी बढी" इस तरह के जो विचार डा मजूमदार तथा डा पुसालकर ने अभिव्यक्त किये, वे अत्यन्त महत्वपूर्ण है

ऐसी भी एक कहानी है कि अगस्त्य ने विंध्य पर्वत को दबा रखकर, उत्तर से दक्षिण में हल लाकर दिया इसीलिए तमिल लोग हल को "अगस्त्य" कहते है, चाहे यह कहानी सच हो या झूठ तो भी अगस्त्य, अत्रि, वामदेव, और बुध महर्षियों ने हल की प्रशंसा करते हुए, कृषि के विकास के लिए जो परिश्रम किया, वह वेदों के वर्णनों में दृष्टिगत होता है

इस तरह कृषि का विस्तार होने से सदस्य-सम्पत्ति तथा पशु-सम्पत्ति की वृद्धि हुई. पिछडी हुई जातियों के लोग इस सम्पत्ति को लूट कर न ले जायें, इस ख्याल से गावों के चारों ओर दीवारें खडी की गयी. क्रमश: इन चारदीवारियों के बीच में नगर बने हडप्पा तथा मोहनजोदड़ो की खण्ड-हरों में प्रकट हुए नगर इसी प्रकार के हैं. ये ही नगर क्रमश. महानगर बने. इन महानगरों में रहने वाले लोगों की संस्कृति ही नागरिकता कही गयी इस तरह नागरिक युग (सुसभ्यता युग) के प्रागण में कृषकों ने पदार्पण किया. किन्तु उसके साथ ही पिछड़े हुए कबीलों की स्वतत्रता का अपहरण भी आरम्भ हुआ

गुलामों की आवश्यकता

जब कृषि तथा पशु सम्पत्ति की वृद्धि हुई, तब खेती-बारी करने के लिए तथा पशुओं की देखभाल के लिए अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता पडी. वास्तव में, पशुपालन का विकास होने पर ही काम के लिए ज्यादा लोगों की जरूरत महसूस होने लगी अत पिछड़े हुए कबीलों के लोगो को गुलाम बनाने की प्रथा चल पडी उनसे निकृष्ट से निकृष्ट सेवाए ली गयी एक मनुष्य द्वारा दूसरे मनुष्य के श्रम का फल छीनने की प्रथा शुरू हुई

पशुपालन से पहले यह स्थिति न थी प्रकृति प्रदत्त खाद्य सामग्री का सचयन करके खाने वाले लोगों को गुलामो की जरूरत नही पडती थी

उन दिनों में किसी एक स्थान पर खाद्य वस्तुओं का अभाव हो जाने पर लोग दूसरे स्थान पर चले जाते यदि वहा पहले से कोई बसा न होता तो कोई दिक्कत न होती थी अगर पहले से वहा कोई बसा होता तो उनके साथ नवागतुकों का सघर्ष होता जीते हुए कबीले के लोग हारे हुए कबीले के लोगो का कत्लेआम करते उन्हें डर रहता कि ऐसा न करने पर खाद्य पदार्थों की प्राप्ति में बाधा पडेगी दूसरे सब जीव-जतुओं की तरह मनुष्य भी पूर्ण रूप से प्रकृति पर ही निर्भर रहकर जीते थे

जिन लोगों ने पशुपालन करते हुए खेतीबारी शुरू की, वे अपनी आवश्यकता से अधिक खाद्यान्न का उत्पादन कर सके अत उनके लिए आहार की कमी न थी उन्हें काम में हाथ बटाने वाले लोगो की आवश्यकता थी. अत हारे हुए कबीलों के लोगो की हत्या करने के बजाय उन्हें बन्दी बनाकर गुलामों की तरह इस्तेमाल किया जाने लगा. इस प्रकार गुलामी की प्रथा शुरू हुई.

अत्यत प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में दस्युओं (दासों) का उल्लेख मिलता है हडप्पा तथा मोहनजोदड़ो के खण्डहरों में गुलामों की प्रतिकृतियां प्राप्त हुई हैं. सैकडों सालों तक यहूदी लोग एंगुप्तों के यहां गुलामी करते रहे. हालाकि गुलाम रह चुके अनेक यहूदियों ने बाद में कितने ही लोगों को स्वयं गुलाम बनाया. यह प्रथा सभी जगह प्रचलित थी ये गुलाम दूसरे सब

काम तो करते ही थे, जरूरत पड़ने पर अपने मालिकों की तरफ से हाथ में तलवार लिये, पैदल सिपाही के रूप में युद्ध भी करते थे.

योद्धा होने के कारण ये गुलाम अवसर मिलने पर अपने मालिकों से विद्रोह कर देते अथवा उनके चगुल से भाग निकलते थे. मोषे के नेतृत्व में यहूदियों के एगुप्तों के चगुल से भाग निकलने की घटना का ब्यौरा ओल्ड टेस्टामेंट में मिलता है अत मालिक ऐसे विश्वासी लोगों को पाने का प्रयत्न करते जो इन गुलामों को दबाकर रख सकते.

एक और डर उन्हें सताया करता था कि कहीं उनसे शक्तिशाली कबीले के लोग उन पर हमला करके उनकी सम्पत्ति न लूट लें, उनके पशुओं के साथ उन्हें भी बन्दी बनाकर न ले जायें, तब उन्हें गुलाम की तरह रहना पड़ता और उनकी कन्याओं को दासी बनना पडता इस वजह से उनमें यह विचार पैदा होना स्वाभाविक ही था कि उनके रक्त सम्बन्धी सगे लोग जितनी अधिक सख्या में होंगे, उतनी ही अधिक उनकी सुरक्षा सुनिश्चित होगी.

कोई एक कबीला जितना बडा और मजबूत होता था, उतनी ही मजबूत उसकी सुरक्षा-व्यवस्था होती थी. कबीले में जिस गण के लोग अधिक शक्तिशाली होते थे, उसी का आदेश सर्वमान्य होता था इसी तरह जिस परिवार में अधिक सख्या के सदस्य—खासकर ज्यादा युवक—होते थे, उसकी सम्पत्ति की वृद्धि अधिक होती थी इसलिए यह मानकर कि जितनी अधिक पत्निया होगी, उतने अधिक पुत्र पैदा होंगे, हर पुरुष अधिक से अधिक विवाह करने लगा. इसके लिए चाहे उसे मुह मागा दाम ही क्यों न चुकाना पडता अगर पर्याप्त सख्या में स्त्रिया अपने कबीले में न मिलती तो दूसरे कबीलों पर हमला करके उनकी कन्याओं को उठा लाते और उन्हें अपनी रखैलें बना लेते जिनके लिए हमला करना सम्भव न होता वे आवश्यक दाम चुका कर दूसरे कबीले की कन्याओं को रखैल बना लेते थे. चाहे पत्नी से पैदा हो या रखैल से, पुत्र तो पुत्र ही होता था अब्राहम की दासी से इस्मायेल का जन्म हुआ तो उनकी पत्नी शारा से इस्साक पैदा हुआ दोनों अब्राहम के ही बेटे थे

पर्याप्त सख्या में पुत्र न होने पर अथवा उनके जल्दी मर जाने पर दूसरों के बच्चों को गोद ले लिया जाता था—कभी-कभी गुलामों के बच्चों तक को भी

यदि गुलामों के बच्चों की संख्या अपने बच्चों की संख्या से अधिक होती तो मालिक उन बच्चों को मार डालते थे. जब गुलाम इज्रायल कबीले की जनसंख्या अधिक होने लगी तब मालिक एगुप्त घबरा गये. उन्होंने हुक्म दिया कि इज्रायल कबीले की स्त्रियों के गर्भ से पैदा हुए पुरुष शिशुओं को नदी में फेंक दिया जाय

अवसर मिलने पर गुलाम ही विद्रोह नहीं करते थे. बल्कि समय और

सुविधा देखकर जंगली लोग भी विकास संपन्न लोगों पर आकस्मिक हमले करके यथासम्भव अधिकाधिक संपत्ति लूट ले जाते थे सम्भव हो तो स्त्रियों को भी उठा ले जाते. वे गुपचुप आकर गांवों और फसलों को आग लगा देते थे.

इस प्रकार के आक्रमण तथा प्रत्याक्रमण के जारी रहने से स्त्रियों—खासकर कन्याओं—को नरक-यातनाएं भोगनी पड़ीं. कुछ कबीले के कबीले नष्ट हो गये. ऐसी क्रियाएं केवल एक ही स्थान पर नहीं, बल्कि सर्वत्र हुई. यदि हम **ओल्ड टेस्टामेंट** पढ़ें तो ये सभी दारुण अत्याचार प्रत्यक्ष दृष्टिगत होते हैं. अतएव विकसित कबीलों के लोगों ने अपने गावों के चारों ओर चारदीवारी निर्मित करके, वीर योद्धाओं को सुरक्षा के लिए तैनात कर दिया. पिछड़े कबीलों के लोगों ने जंगलों में भागकर अपनी जान की रक्षा की.

ऐसी पृष्ठ-भूमि में हर कोई अधिक से अधिक पुत्र तथा पौत्रों की कामना करता था इसलिए गण प्रमुखों ने प्रतिबन्ध लगाया कि पुत्र संतान की प्राप्ति के बिना किसी को सन्यासी बनना नहीं चाहिए.

अपुत्रस्य गतिर्नास्ति:

वंश का नाम बनाये रखने के लिए बच्चों की आवश्यकता होती है. इसलिए नियम बनाया गया कि कबीले के सब लोगों को संतान पैदा करनी चाहिए कहा गया कि संतानहीन व्यक्तियों के पितृ-पितामहों का नरक में जाना निश्चित है. इस बात को स्पष्ट करने वाली कहानियां महाभारत में तथा अन्य पुराणों में मिलती है

महाभारत में एक कहानी है कि जरत्कार ने आजीवन ब्रह्मचारी रहना चाहा, किन्तु अपनी संतान के न होने पर पितृ-पितामहों के पुन्नाम नरक में गिरने के डर से वह बहुत दुखी हुआ. उस दुर्गति से उनको बचाने के लिए उसने आस्तिक नामक पुत्र के पैदा होने तक एक नागकन्या के साथ दांपत्य जीवन बिताया

इसी तरह की एक दूसरी कथा है कि मंदपाल नामक एक मुनि ने हजार साल तपस्या की उसके उपरांत मानव-देह त्याग कर जब वह पुण्य लोक की ओर जा रहा था, तब उसे उसका रास्ता दिखायी नहीं दिया. तब देवों ने कहा कि चाहे कितनी ही तपस्या करें तो भी जिनकी संतान नहीं है, उन्हें पुण्यलोक प्राप्त नहीं होगा इसलिए मंदपाल भूलोक में लौट आया और जल्दी से जल्दी संतान की प्राप्ति के लिए उसने एक चातक पक्षी से संभोग किया तो तुरन्त उस पक्षी से ब्रह्मवेत्ता पुत्र पैदा हुए.

जिस प्रकार हमारे पूर्वजों ने ऐसी असंभावित कल्पनाओं से भरी कथाओं की सृष्टि की, उस प्रकार सेमेटिक कबीलों के लोगों ने कहानियां कल्पित नहीं की. अत: उनकी कहानियां उस समय की वास्तविक परिस्थितियों के निकट है.

कदम-कदम पर हमारे पंडितों द्वारा अवतारों की, शापों की, और वरदानों की बात करते रहने से वास्तविक परिस्थितिया पृष्ठभूमि में चली गयीं.

भागवत में एक कथा है कि रुचि प्रजापति की पत्नी याकूति थी उनके बेटे का नाम श्री यज्ञ था और बेटी का नाम दक्षिणा था भाई-बहन के बीच लैंगिक सम्बन्ध होने से बच्चे पैदा हुए, तो भी यह विश्वास उत्पन्न करने के लिए कि यह भाई-बहन के बीच लैंगिक सम्बन्ध नहीं है, अवतार सिद्धांत को आड़े लाया गया अत: यह कहा गया कि रुचि प्रजापति को दिये गये वरदान के अनुसार श्री महाविष्णु के श्री यज्ञ के रूप में और श्री महालक्ष्मी के दक्षिणा के रूप में पैदा होने से यह बात हुई, इसलिए उनका यौन-सम्बध गलत नही है.

अब्राहम के भतीजे का नाम "लोत" था, कुछ कारणों से उसको अपनी दोनों बेटियों के साथ किसी पहाडी घाटी में रहना पडा उस समय में उसकी बडी बेटी ने सतान पाने की अभिलाषा से किसी दूसरे पुरुष को पाने का मौका न होने के कारण, पिता के साथ ही सभोग किया इसके फलस्वरूप मोयाबीयों का मूल पुरुष "मोयाब" पैदा हुआ उसके बाद छोटी बेटी ने भी पिता के साथ सभोग किया जिससे अम्मोनियों का मूल पुरुष "बेन्मम्मि" पैदा हुआ यह बात ओल्ड टेस्टामेंट में स्पष्ट रूप से लिखी गयी है. हा, इसमें थोडा सा घुमाव पाया जाता है उसमें लिखा गया कि द्राक्षरसपान के नशे में होने के कारण "लोत" को इसका पता ही न था कि मैं अपनी बेटियों के साथ ही सभोग कर रहा हू

अब्राहम की पत्नी थी शारा उन दोनों का पिता एक ही था, किन्तु उनकी माताए अलग-अलग थी जवान हो जाने पर भी, उसके सतान नहीं हुई बिना बच्चे के नाम कैसे चलता ? इसलिए शारा ने अपनी एक दासी को अपने पति के पास भेजा उनसे इस्माइल का जन्म हुआ. यह बात भी ओल्ड टेस्टामेंट में साफ तौर से लिखी गयी है

'देवर-न्याय'

सतान पैदा होने के पहले ही विधवा हो गयी स्त्रियों के लिए, सतान पैदा करने की शक्ति से रहित पुरुषों की पत्नियों के लिए, संतान पाने की दृष्टि से "देवर न्याय" धर्मसम्मत माना गया

पहली पत्नी से सतान न होने पर पति दूसरी स्त्री से शादी कर लेता है. एक पत्नी के मर जाने पर भी वह दूसरी शादी कर लेता है. तब पति के मर जाने पर या पति के नपुसक होने पर स्त्री की स्थिति क्या होगी? संतान न होने पर स्त्री को सपत्ति में हिस्सा नहीं मिलता और वश की वृद्धि नहीं होती. इसलिए ऐसी स्थिति में स्त्री अपने देवर के साथ लैंगिक सम्बन्ध जोड़कर अथवा किसी दूसरे पुरुष के साथ मिलकर संतान प्राप्त कर सकती है. यह उस समय का न्याय था.

यूदा का बड़ा बेटा संतान पैदा होने के पहले ही चल बसा. देवर न्याय का पालन करने के लिए नियुक्त दूसरे बेटे ने यह सोचकर कि ऐसा करने से उत्पन्न संतान हमारी पशु संपदा में हिस्सेदार होगी, अपनी भाभी को गर्भवती न होने के लिए आवश्यक सावधानी बरती. ऐसा करना पाप होने के कारण वह मर गया. तीसरे बेटे की उम्र कम होने के कारण यूदा ने बहू को मैके भेजा. उसने वादा किया कि जैसे ही मेरा छोटा बेटा बालिग होगा, वैसे ही उसे मैं तुम्हारे यहां भेजूंगा. किन्तु यूदा अपना वादा पूरा न कर सका. उसे डर था कि मेरी बहू के साथ संभोग करने से जिस तरह मेरे दोनों बड़े बेटे मर गये, उसी तरह यह छोटा बेटा भी मर जाएगा. फिर उसकी बहू एक वेश्या का वेष धारण करके आयी और स्वयं यूदा के साथ ही उसने संभोग किया. तब उसके जुड़वां बच्चे पैदा हुए. उनमें बड़े का नाम "जेरहू" और छोटे का नाम "पेरुस्" था. इस "पेरुस्" के वंशज ही थे दावीद तथा सोलमन राजा.

इस देवर न्याय के अनुसार ही वेद व्यास ने धृतराष्ट्र तथा पांडु राजा के जन्म की कथा रची. पांडु राजा संतान पैदा करने के अयोग्य थे, इसलिए पंच पांडव किन्हीं अन्य व्यक्तियों से उत्पन्न हुए. महाभारत में लिखा गया है कि कुन्ती एवं माद्री ने देवों को निमंत्रित करके उनके द्वारा पुत्रों को जन्म दिया. इस प्रकार पैदा हुए क्षेत्रजों (विवाहित स्त्री और पराये पुरुष के मिलन से उत्पन्न पुत्रों) तथा गोद लिये हुए पुत्रों को भी औरस पुत्रों (विवाहित स्त्री-पुरुषों के पुत्रों) के बराबर गिना गया. क्षेत्रज पांडवों को पांडु राजा की पत्नियों ने जन्म दिया, इसलिए उन्हें पांडु राजा के पुत्र ही कहा गया. इस प्रकार की आवश्यकता दूसरी बार न हो, इसके लिए भीष्म ने राक्षस-विवाह की पद्धति के अनुसार सौ कन्याओं को लाकर धृतराष्ट्र के साथ उनकी शादी करा दी, किसी न किसी प्रकार से धृतराष्ट्र के सौ पुत्र पैदा हुए.

गाय से जुड़ने वाला सांड चाहे किसी का भी हो, किन्तु गाय से पैदा होने वाला बछड़ा तो गाय के मालिक का ही माना जाता है. यही बात उन दिनों मानव के बच्चों पर भी लागू थी.

इतने प्रकार के स्वजनों की संख्या की वृद्धि करते रहने पर भी विकसित समाज के लोगों की समस्याओं का हल नहीं हो पाया. गुलामों से कसकर काम लेने के लिए और शत्रुओं को हटाने के लिए योग्य वीरों की जरूरत थी. अतः उन्होंने अपने युवकों को धनुर्विद्या में, खड्गयुद्ध में, और घुड़सवारी में चतुर बनाया. अत्यधिक बल-पराक्रम का प्रदर्शन कर सकने वाले समर्थ व्यक्ति चाहे जहां भी दिखाई दिये, चाहे जहां भी वे पैदा हुए तो भी उन्होंने उनको अपने कबीले में आने के लिए निमंत्रित किया और उन्हें मुंहमांगी सभी चीजें दीं. इस प्रकार सुशिक्षित वीरों के समुदायों से उन दिनों क्षत्रिय वर्ण की व्यवस्था हुई. (इससे सम्बन्धित कथाएं महाभारत में तो हैं ही, दूसरे देशों के पुराणों में भी हैं.)

पुरोहितों की प्रार्थनाएं

खड्ग धारण करने वाले योद्धा हमेशा शत्रुओं से जूझने को तत्पर रहते थे. कारीगर उनके लिए जरूरी हथियार तैयार करने के साथ खेतीबारी के लिए उपयोगी औजार भी बनाते थे. किसान खेतीबारी के साथ पशुपालन करते थे. पुजारी पूजाएं करते थे तो पुरोहित यज्ञ-याग चलाते हुए समाज के लिए भले-बुरे का निर्णय करते थे. गुलाम इन सब लोगों की सेवा करते थे.

पुजारी और पुरोहितों के साथ "हराम, हरीम, हूरें, हँरे" कह कर भूत-प्रेतों को भगाने का विश्वास जमाने वाले भूतवैद्य तथा अपने मंत्र-तंत्रों की शक्ति से किसी भी असंभव कार्य को संभव बनाने की ढींग मारने वाले तांत्रिक भी होते थे.

इन सबसे बढ़कर यज्ञ-याग आदि क्रतुओं को विधिवत चलाने की शक्ति रखने वाले ऋषियों का अधिक महत्व था हर स्थिति में वे पूजा सम्बन्धी कार्य कराने के योग्य थे

"हमारे वृषभ सामान अच्छी तरह ढोयें किसान अच्छी तरह खेती-बारी करें हल सीधे ढंग से खेत जोतें रस्से गठरियों को खूब जकड कर बांधे" (ऋग्वेद, ४-५७-४)

"हमारे हल खेतों को अच्छी तरह जोतें हमारे चरवाहे बैलों के साथ सही-सलामत लौटें

"हे सोमरस ! जैसे बाप बेटे को सुख देता है, वैसे तुम हमारे पेटों में प्रवेश करके हमें सुख पहुंचाओ

"हमने जो सोम पिया, वह हमें कर्माचरण के समर्थ बनावे हमको वह रोगों से बचावे" (ऋग्वेद, ८-४८)

उनकी प्रार्थनाएं इस प्रकार होती थीं जब पुरोहित यह कहते रहे कि इन प्रार्थनाओं के बिना पानी नहीं बरसता, फसलें नहीं उगतीं, पशु दूध नहीं देते, प्रजा सुख से जी नहीं सकती, शत्रुओं को हराना सम्भव नहीं होता, तब हाथ से काम करने वालों ने उनके विरुद्ध विद्रोह किया कि ये सब बेकार बातें हैं आलसी, धोखेबाज और परान्नभोगी धूर्तों के ये षड्-यंत्र हैं

हल तैयार करने वाले बढ़ई हैं उसमें लोहे का फलक लगाने वाले लोहार हैं उसको खींचने वाले बैल हैं उससे खेत जोतने वाले किसान हैं. इस प्रकार कितने ही लोगों की मेहनत से फसलें फलती हैं. न कि यह प्रार्थना करने से कि हे हल, तुम अच्छी तरह खेत जोतो हल से जुती हुई जमीन तुम हमें अनाज दो. क्या आप इसे ठीक नहीं मानते ? तो इन पुजारियों एवं तांत्रिक-मांत्रिकों से कहें कि वे प्रार्थना करके हल तैयार करें, अथवा एक घड़े की या किसी दूसरी चीज की सृष्टि करें वे इस तरह की

चुनौती देने लगे कि इन मंत्र-तत्रों के द्वारा कोई जीवनोपयोगी उत्पादन नहीं हो सकता ? (चार्वाक सिद्धात)

इस तरह के विद्रोही लोगों में बृहस्पति लक, धिषण परमेषिन, भृगु इत्यादि प्रमुख थे. उनके पश्चात पुराण काश्यप, मक्कलि गोशाल, पगिध कात्यायन, अजित केशकंबलि इत्यादि ने भौतिक सिद्धांतों को और भी सुस्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया. चूकि ये सिद्धान्त उनके विरुद्ध थे, इसलिए पुरोहितों ने उन्हें मूर्ख और नीति-नियम रहित कहकर इनकी निंदा की. उन्होंने प्रचार किया कि जल, अग्नि, वायु आदि देव हैं. यदि हम उनकी प्रार्थना न करें तो हमको कोई शुभ परिणाम नहीं मिलेगा

फिर भी दस्तकार उन पर हावी हुए. घरेलू काम-काज की चीजें, खेती-बारी के औजार, हथियार, वस्त्र इत्यादि दैनिक आवश्यक वस्तुओं को बनाने वाले, मकान और नावों का इस्तेमाल करने वाले, ये सब दस्तकार हैं, इस-लिए इनको प्रथम स्थान मिला. आज भी किसी न किसी रूप में इनका महत्व कायम है

अब तक विवाह के समय घास की मटकी तथा अरवेणि-घड़े की पूजा की जाती है बढ़ई और सुनार को दक्षिणा तथा ताबूल देकर उनके यहा से विवाह का तख्ता, भापिकम् मगलसूत्र, बिछिया लाये जाते हैं. अत में पुजारियों को भोजन सामग्री दी जाती है गृह प्रवेश के अवसर पर राज और बढ़ई के औजारों की पूजा करने के बाद ही पुरोहितों का आदर-सत्कार होता है पहले ये सारे आदर-सत्कार व्यक्तियों के होते थे, किन्तु अब स्पर्धा में हस्त-कलाओं के मार खाने से परिस्थिति में बदलाव आया है धन-सपन्न व्यक्ति गरीब कारीगरों का आदर करना पसद नहीं करते अत अत्यत प्राचीनकाल से चली आ रही प्रथा में परिवर्तन हो गया और अब व्यक्तियो के बदले उनके औजारों की पूजा होती है या उनकी तैयार की हुई वस्तुओं की पूजा होती है

भाववाद और भौतिकवाद

चार्वाक ने जिस भौतिकवाद का प्रतिपादन किया, वह बीज रूप में ऋग्वेद में पाया जाता है भौतिकवाद के सूत्र उपनिषदों में स्पष्ट रूप से दिखायी देते हैं स्वसन्वेद उपनिषद् ने पदार्थवाद एव स्वभाववाद को महत्व दिया. जाबालि महर्षि ने श्रीराम को जो सलाहें दी, वे भौतिकवादी दृष्टिकोण से ही दी गयी. महाभारत मे नास्तिकवाद, स्वभाववाद, परिणामवाद तथा यादृच्छवाद का उल्लेख मिलता है उसमें कुछ ऐसी कल्पित कथाएं भी हैं जिनमें धर्मराज द्वारा चार्वाक का वध किये जाने की बात कही गयी है. इसीलिए डा सर्वपल्लि राधाकृष्ण ने कहा कि भाववाद, अध्यात्मवाद जितना प्राचीन है, भौतिकवाद भी उतना ही प्राचीन है

भौतिकवाद को दबाकर मटियामेट करने के लिए भाववादियों ने कई कहानिया गढी उन्होंने तैंतीस करोड़ देवों की सृष्टि करके उनसे भौतिक

अगत को भर दिया यज्ञों की धूम मच गयी. तांत्रिक सिद्धांत का बोलबाला हुआ

पानी नहीं बरसने पर कुछ लोग यज्ञ करते थे; कुछ लोग मेंढकों का जुलूस निकालकर उनकी पूजा करते थे तांत्रिक लोग कन्याओं से खेत की जुताई करवाते थे वे यह विश्वास दिलाते थे कि स्वच्छ चादनी रात में, समतल भूमि में, अविवाहित नग्न कन्याएं अगर हल खींचती हैं तो चंद्र उनके लिए आसमान से उतर आता हैं और साथ ही पानी भी बरसता हैं (आज भी कहीं-कही मेंढकों की पूजा और नग्न कन्याओं द्वारा खेतों की जुताई होती हैं)

इसके विरुद्ध भौतिकवादियों का कथन हैं कि इनकी सब बातें सफेद झूठ हैं. वृत्त (अर्थात् मेघ) में इन्ध (अर्थात् बिजली हैं. इनके घर्षण से गरज और बिजली की चमक के साथ वर्षा होती हैं

यदि भौतिकवादियों की बात पर लोग विश्वास करें तो यज्ञ करने वाले नही रहेंगे अत पुरोहितों ने एक लम्बी कहानी गढी उन्होंने इध (ईंधन-बिजली) को इद्र के रूप में तथा मेघ को वृत्तासुर के रूप में वर्णित किया वृत्तासुर का जन्म, इन्द्र-वृत्तासुर के बीच युद्ध की कहानिया गढी गयी मेघ को वृत्तासुर का रूप तथा विद्युत को इन्द्र का रूप देकर, उस इद्र को उन्होंने तीन करोड देवों के अधिपति के रूप में अभिषिक्त किया यज्ञ-यागों की धूम मच गयी ज्यादा पानी बरसा तो यज्ञ किया गया, पानी बिलकुल न बरसा तो भी यज्ञ किया गया दूसरों की सपत्ति का अपहरण करने के लिए प्रार्थनाएं की गयी, सोमरस पान अधिकाधिक होने लगा

"हे इंद्र ! अनार्यों के निवास कीकट नामक जनपदो में रहने वाली गायें तुम्हें क्या दे रही हैं ? क्या वे सोमरस में मिलाने के लिए दूध दे रही हैं ? उन गायों को लाकर हमें दो कुसीद धधे से धन बढाने वाले प्रमगध का धन लाकर हमें दो नीचा शाखा (नीच जाति)के लोगो का धन लाकर हमें दो." (ऋग्वेद, ३-५३-१४)

वे लोग इस तरह की कामनाएं करते हुए, खूब सुरापान करते हुए ठूस-ठूसकर गोमास और बकरी का मास खाते थे इसीलिए वाल्मीकि की रामायण में सीता और राम के गोमास भक्षण का और अयोध्या के निवासियों के सुरापान का उल्लेख मिलता हैं फिर महाभारत के बारे में कहना ही क्या हैं वैसे तो वेदों में ही ये सुस्पष्ट दृष्टिगत होते हैं

"हे राम ! कोई बेटा जिस तरह अपनी बढौती का अनुभव करता हैं, उसी तरह हम भी तुम्हारा अनुभव कर रहे हैं तुम हमें दीर्घायु प्रदान करो (ऋग्वेद, ८-४८)

"अगिरसों ने इन्द्र के लिए अत्यधिक मांसल शरीर वाले बकरे को पकाया"

"इंद्र हमारे यज्ञ पशु वृषभों का भक्षण करे."

"हे अग्नि ! बांझ और बली गायों से, बली बर्द्नों से...मृगों से आराधित हुए. (ऋग्वेद, १०-२७-१७, १०-२८-८, १०-८६-१३)

देवों के नाम पर मांसभक्षण करते हुए और सुरापान करते हुए भोली-भाली जनता को बहकाने वाले लोगों का तीव्र विरोध भौतिकवादियों ने किया जिन लोगों ने इन भौतिकवादियों के तर्कों को सुना, उनके मन में भाववादियों (आध्यात्मिकवादियों) के उपदेशों के प्रति संदेह उत्पन्न हुए.

"किसने इंद्र को देखा है ? किसी ने भी नहीं ? इसलिए हम किसकी, कैसी स्तुति करें ? इंद्र का अस्तित्व काल्पनिक है, वास्तविक नहीं." (ऋग्वेद, ८-१००-३)

इस तरह कुछ लोगों ने इंद्रयाग का परित्याग किया भागवत की यह कहानी ध्यान देने योग्य है कि यादवों द्वारा इंद्रयाग की तैयारी करने पर श्रीकृष्ण ने उन्हें ऐसा करने से मना किया

इंद्र के प्रति भक्ति के इस कमजोर पड़ने पर ही कुछ ऋषियों ने पंच-रुद्र सूक्त की रचना की

"रुद्र मेघ में गरज पैदा करने वाला है, मेघ के उदर में रहकर ध्वनि करता हुआ उसे द्रवित करने वाला है वह शत्रुओं को दुःखी करने वाला है" इसलिए रुद्रयाग करना श्रेयस्कर कहकर उन्होंने जनता को प्रोत्साहित किया इंद्र के स्थान पर उन्होंने रुद्र की सृष्टि की.

फिर कुछ लोग विष्णु की स्तुति देव रुद्र के छोटे भाई उपेंद्र के रूप में करने लगे इसी विष्णु के चरणों से उत्पन्न गंगा के जल से मानव जीवित है मनुष्यों के साथ समस्त जीवकोटि की भी सृष्टि उसी ने की, ऐसी कई कहानियां बनाकर उनका प्रचार किया गया

भौतिकवादियों ने इस प्रचार का भी विरोध किया और सवाल किया— पृथ्वी, जल आदि पंचभूतों से युक्त इस सृष्टि में प्राणियों का पैदा होना, बड़ा होना और अंत में नष्ट होना सहज परिणाम के सिवा और कुछ नहीं इस सृष्टि का मूलकर्ता कोई भगवान नहीं यदि आप कहते हैं कि भगवान है, तो दिखाइए कि वह कहां है ? बताइए कि उसने इस विश्व की सृष्टि कैसे की ?

इस सवाल का सामना करने के लिए वैदिक पंडितों ने एक अच्छी कहानी गढ़ी उन्होंने भक्तों को सिखाया कि श्रीमहाविष्णु ने क्षीर समुद्र में वट-पत्र शायी होकर अपने नाभि-कमल से ब्रह्मदेव की सृष्टि की तथा उस ब्रह्मदेव ने इस चराचर जगत की सृष्टि की.

हमारे पंडितों की ही तरह इज़ायल के याजकों ने भी कहा :

"भगवान की आत्मा जल के ऊपर विचर रही थी. .....भगवान यहोवा ने पृथ्वी की मिट्टी से मनुष्य का निर्माण करके उसकी नासिका के रंध्रों में जीववायु को फूंका तो वह जीवात्मा बना"

कुछ अन्य लोगों ने कहा—"सृष्टिकर्ता ब्रह्मदेव के शरीर के दो हिस्से हो गये. एक हिस्से से स्वयंभू मनु और दूसरे हिस्से शतरूपा नामक कन्या पैदा हुई. उनके दो पुत्र और तीन पुत्रियां पैदा हुईं."

इसे देख कर जब भौतिकवादियों ने सवाल किया—"तो क्या इस आदि-मानव की कोई मा नहीं थी ? उस ब्रह्मदेव पत्नी कौन थी ? उनकी संतान कैसे पैदा हुई ?" तब उन्होंने जवाब दिया कि ब्रह्मदेव ने पहले सरस्वती की सृष्टि की और उसी को अपनी पत्नी बना लिया. (भागवत)

फिर किसी विद्वान ने यह कथा लिखकर महाभारत में जोड़ दी कि ब्रह्मदेव के दाहिने हाथ के अंगूठे से दक्ष नामक पुरुष और बायें हाथ के अगूठे से धरणि नामक कन्या पैदा हुई. उन दोनों ने मिलकर सौ पुत्र और पचास पुत्रियों को जन्म दिया. उन पुत्रियों के गर्भों से सांप, मेंढक और पक्षियों के साथ सुर और असुर भी पैदा हुए.

याजकों ने कहा—"आदम की बगल की एक हड्डी निकालकर यहोवा ने हव्वा की सृष्टि की. आदम और हव्वा के दो पुत्र जन्मे." ओल्ड टेस्टामेंट में आगे वर्णित है—"उसके पश्चात लोत् और उसकी बेटियों से, अब्रहाम और उसकी सौतेली बहन यूदा और उसकी बहू से उत्पन्न सतानों की सख्या बढती गयी"

इसी भांति भागवत में भी वर्णित है कि श्रीयज्ञ और उसकी बहन से, कश्यप और उसकी बहन पूर्णिमा से उत्पन्न सताने कई गुना बढती चली गयी

जब यहूदियों ने एक कहानी सुनायी कि ससार के सभी मानव हमारे "नोवहू" की सतानें हैं तब आर्यों ने एक दूसरी कहानी सुनायी कि समस्त मानव हमारे "मनु" की सतान हैं.

ओल्ड टेस्टामेंट में लिखा है कि ससार में पाप अत्यधिक बढ जाने पर भगवान ने उसका नाश करना चाहा, किन्तु नोवहू से प्रसन्न भगवान उसके सामने प्रकट हुए भगवान ने नोवहू को सलाह दी कि तुम एक तिमंजिला जहाज बनाकर उसमें अपनी पत्नी और बच्चों के साथ बैठ जाओ प्रलय आते ही भगवान ने सभी जीव-जतुओं के एक-एक जोड़े को उस जहाज पर पहुचा दिया और नोवहू के साथ उन सबकी भी रक्षा की भगवान ने आशीर्वाद दिया कि इस प्रकार बचाये गये नोवहू के परिवार के द्वारा मानव जाति का विस्तार होगा उसने यह वादा भी किया कि इसके बाद मैं फिर कभी सृष्टि का नाश नहीं करूंगा इतना ही नहीं इसकी निशानी के रूप में उसने अपने धनुष (इन्द्रधनुष) को मेघों में रखा. उस प्रकार बचाये गये पशु-पक्षी आदि से भूमण्डल पर फिर से समस्त जीवकोटि की वृद्धि हुई.

इधर शतपथ ब्राह्मण गथ में एक कहानी है कि जलप्रलय म मत्स्य अवतार ने सिर्फ मनु को नाव पर चढ़ाकर बचाया तब मनु ने जो पाक-

यज्ञ किया उसमें से एक स्त्री उत्पन्न हुई. उन दोनों की संतान ही क्रमशः विस्तृत हुई. मनु की यह कथा अथर्ववेद में भी है, महाभारत में भी. पारसियों के धर्मग्रंथ वेंदिदाद में जलप्रलय की बात नहीं है, किन्तु हिमप्रलय की बात है. उसमें लिखा गया कि "अहुर मज्दा" नामक देव ने हिमप्रलय से "इमा" नामक राजा को बचाया.

भागवत में उल्लेख है कि द्रविड राजा सत्यव्रत जब सन्यास लेकर तपस्या कर रहा था, तब एक छोटी मछली के रूप में भगवान उसके सामने प्रकट हुए. उसने उस राजा को चेतावनी दी कि जलप्रलय सन्निकट है जलप्रलय के समय सत्यव्रत के साथ सप्तर्षियों तथा औषधियों को जहाज पर चढ़ाकर, स्वयं मत्स्य अवतार ग्रहण करके जहाज की रक्षा करते हुए भगवान ने उन्हें बचाया. तब उस तरह जो जीवित बच रहे उनके द्वारा फिर इस भूमण्डल पर समस्त जीवकोटि तथा औषधियों की वृद्धि हुई

अविश्वसनीय कहानियां

भगवान का मत्स्य अवतार ग्रहण करके सत्यव्रत की रक्षा करना, आदम की बगल की हड्डी से हव्वा की सृष्टि करना, ब्रह्मदेव के बायें हाथ से धरणि का जन्म होना जैसी दंत कथाओं को विकासवादियों ने ठुकरा दिया. मानव विकास के परिणाम क्रम में आयी हुई दस अवस्थाओं को उन्होंने स्पष्ट किया. सबसे पहले प्राणिकोटि का जन्म समुद्र जल में हुआ. इस प्रकार उत्पन्न प्राणि समुदाय सिर्फ समुद्र जल में विचर सकता था, अतः उसे "मत्स्य दशा" नाम दिया गया. उसके उपरांत कुछ जीवों के समुद्र तट पर भी जी सकने की दशा को "कूर्मदशा" कहा गया. उस जीवकोटि के पशु, पक्षी, सर्प इत्यादि के रूप में परिणत होने की दशा को "वराह दशा" कहा गया मृग रूप से मानव रूप के विकास की दशा "नरसिंह" दशा कहलायी आदि मानव के आविर्भाव की उस दशा को "वामन दशा" कहा गया उसके पश्चात् जंगली दशा, पशुपालन दशा, कृषि दशा, तथा वैज्ञानिक दशा का उल्लेख किया गया इसी विकासक्रम से मानव वर्तमान अवस्था में पहुंचा

इस प्रकार विकासवादियों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत जनता तक न पहुंचे तथा गहरे खड्डे में दफना दिये जायें, इसके लिए आध्यात्मवादियों ने जी-तोड कोशिश की मत्स्य, कूर्म, वराह आदि पुराणों की रचना करके, दस-अवतारों की कल्पना करके उन्होंने इस प्रकार का विस्तृत प्रचार किया कि वामन, परशुराम, बलराम आदि विष्णु के अवतार हैं. राम-लक्ष्मण, रावण-कुम्भकर्ण एवं कुरु-पाडवों के रूप में जन्मों के अतिरिक्त सवा लाख जन्मों के साथ अवतार सिद्धांत जोडकर उन्होंने अनगिनत कहानियां बनायीं इनमें कई महाभारत में हैं, कुछ रामायण

में फिर भागवत की बात ही क्या है ? उसमें ऐसे अनेक जन्मों की कहानियां देखने को मिलती हैं, जिन पर विश्वास कर सकना संभव नहीं

पुराणों की कहानिया चाहे जैसी भी हों, यह बात सच है कि आदिमानव सगे सम्बंधों का विवेक नहीं रखते थे. आदिमानवों में ही नहीं प्रत्युत कबीलों में भी सगे सम्बन्धों के यौन-व्यवहारों के उदाहरण, स्वेच्छा-संभोग की अनुमति देने के उदाहरण अनेक मिलते हैं, बहुत बाद तक सगे सम्बन्धों का ख्याल न रखे जाने के कई प्रमाण मिलते हैं यूनान देश (ग्रीस) में हिस्थास्यस ने अपनी बहन से शादी कर ली यह तथ्य विश्वविख्यात है कि मिस्र देश की रानी किलयोपेट्रा के पति उसके भाई ही थे अपने कुल को ही श्रेष्ठ मानने के कारण भाई-बहनों के बीच विवाह हुए. इसीलिए एक रामकथा में यह कहा गया है कि राम-सीता भाई-बहन थे. इन नग्न सत्यों को जो स्वीकार नहीं करना चाहते थे, उन विद्वानों ने कितनी ही झूठी कहानियां गढी

उन्होंने लिखा कि वालि इन्द्र का बेटा था और सुग्रीव, सूर्य का इतना ही नहीं, उन्होंने कहा कि गौतम की पत्नी अहिल्या से वालि और सुग्रीव पैदा हुए

एक और कहानी बनायी गयी कि शिव का वीर्य भूमि पर स्खलित हो रहा था तो वायु ने तुरन्त उसे उडा अजनी देवी के गर्भ में रख दिया, उसी से हनुमान का जन्म हुआ

कुछ और कहानिया भी प्रचलित हुई कि सीता जमीन से पैदा हुई, मत्स्य वल्लभ मछली के पेट से उत्पन्न हुए भीष्म का गगा के गर्भ से, द्रोण का कुम्भ से, और द्रौपदी का होमकुड से जन्म हुआ. शक, यवन, पौड्र, पुलिद, द्रविड, सिहल, शबर और बर्बर वशिष्ट की होमधेनु की पूछ और उसके मल-मूत्रों से पैदा हुए इन्हें सच साबित करने के लिए भी कहानिया गढी गयी जिनके पिता के बारे में कोई जानकारी न थी, उन सबको देवों की सूची में जोड दिया गया इस तरह की कहानिया पुराणों में दर्ज हैं

ऐसी दतकथाए रामायण में थोडी-बहुत और महाभारत में बहुत अधिक मिलती हैं इसीलिए इस आलोचना का अवसर मिला कि रामायण व्यभिचार की कहानी है तो महाभारत सफेद झूठ की इतना ही नहीं, इन कथाओं से देवों की सख्या बढती गयी देवों की पूजा के साथ कुछ दूसरे प्रकार की पूजाए भी आरम्भ हुई.

जैसे-जैसे कबीलों का विस्तार होने लगा, वैसे-वैसे उन्होंने अपनी पहचान के लिए नाग, वानर, गरुड आदि भांति-भांति के नाम रख लिये अपनी-अपनी विशाल ध्वजाओं के ऊपर उन चिह्नों को चिपका लिया. इसलिए उनके लिए वानर जाति, गरुड जाति, नाग जाति जैसे नाम सुस्थिर हो गये अत: कबीलों के लोगों को वानर, नाग, गरुड कहकर बुलाने की प्रथा चल पड़ी जिस कबीले के लोगों ने जिस पशु-पक्षी आदि पर अपना

नाम रखा, वे उसी पशु-पक्षी को पवित्र मान उसकी पूजा करने लग गये. आज भी केरल के "कादार" कबीले के लोग भैंस की पूजा करते हैं, उसका खून छुआ तो वे समझते हैं कि बस ! अब पाप का घडा फूट जायगा

वीर पूजा

जो हाथ में तलवार लेकर लोगों की रक्षा करते हैं, उनकी पूजा होना स्वाभाविक ही है किन्तु जो दूसरों की सपदा ही नही प्रत्युत उनकी कन्याओं की इज्जत भी लूटते थे, ऐसे लोगों को भी वीर कहकर उनकी स्तुति की जाती थी इसी कारण विकसित जातियों का पिछड़ी जातियों के ऊपर हमले करना धर्म-सम्मत समझा गया अत युद्ध में विजयी वीर पराजित जातियों की सपदा लूटते थे, उनकी कन्याओं को रखैल बना लेते थे और जनता से प्रशसाए तथा आदर-सत्कार पाकर सीनाजोरी करते थे उनके यहा लूटमार की सपत्ति के साथ गुलाम भी रहते थे, बच्चे पैदा करने के लिए कई-कई पत्नियों के अतिरिक्त रखैल भी रहती थी. उनके मरने के पश्चात भी उन वीर योद्धाओं की पूजा जारी रहती थी इस वजह से जो कोई तलवार उठाकर लड सकते थे, वे सब अपने को क्षत्रिय और कुलीन घोषित कर लेते थे

अगर हम अनुशीलन करें कि ये कुलीन कौन हैं ? क्या सचमुच इनके वश उन्नत हैं ? क्या वास्तव में इनके जन्म पवित्र हैं ? तो पता लगेगा कि सब कुछ गोरख-धधा है उन दिनों में चाहे मालिक हों या गुलाम, चाहे औरस पुत्र हों कि क्षेत्रज, जो भी हों, अगर वे बल पराक्रम का प्रदर्शन करते थे तो उनको वीर क्षत्रिय माना जाता था

यूनान (ग्रीस) देशवासी "तुक्रोस" दासी पुत्र था तो क्या हुआ ? ट्राय नगर पर घेरा डाले हुए यूनानी सैनिकों में सबसे अव्वल दर्जे के तीरदाज और बहादुर के रूप में उसको मान्यता मिल गयी साड की तरह तगड़ा आदमी दिखाई पडे तो स्पाशन जाति के लोग अपनी स्त्रियों को उसके साथ लैंगिक सबध के लिए भेजते थे अथीनियन स्त्रिया स्पाशन पुरुषों को सभोग के लिए निमत्रित करती थी मतलब यह कि किसी न किसी तरह सुदृढ शरीर वाले बच्चों को वे पाना चाहती थी उसके उपरात यूनानियों ने कई जातियो तथा देशों को जीता

महाभारत में हमको क्या दृष्टिगत होता है? पाडु राजा ने अपनी पत्नियों को स्वय प्रोत्साहित किया, अतएव कुन्ती और माद्री ने जाने किस-किसको सतान प्राप्ति के लिए निमत्रित किया इसके फलस्वरूप पच पाडव पैदा हुए राक्षस कन्या हिडिम्बा से विवाह कर लेने के लिए धर्मराज ने भीम को प्रोत्साहित किया. उनसे घटोत्कच का जन्म हुआ नागकन्या उलूचि से अर्जुन ने विवाह कर लिया और उससे इरावत नामक पुत्र को पाया. फिर उसने चित्रागदा से विवाहित होकर बभ्रुवाहन को और सुभद्रा से पाणिग्रहण करके अभिमन्यु को जन्म दिया इसी प्रकार धर्मराज, नकुल तथा

सहदेव ने भी पुत्र पैदा किये. इनके अतिरिक्त पाचों पांडव की पत्नी द्रौपदी से उत्पन्न पुत्र तो थे ही इस तरह अनेक स्त्रियों को अपनी पत्निया बना लेने से पाडवों को पांचाल, विराट तथा यादव वीरों की सहायता के अतिरिक्त कितनी ही अन्य जातियों की मदद मिली उन्होंने कौरवों पर विजय प्राप्त की.

कहा गया कि कर्ण के पैदा होते ही उसकी माता कुन्ती ने उसे एक संदूक में रखकर गगा नदी में बहा दिया अतिरथ नामक सूत को वह सन्दूक मिला. उस सन्दूक में पड़े बच्चे को पाल-पोसकर उसने बडा किया इस प्रकार जन्म पाकर, बड़ा बना हुआ कर्ण चाहे कानीन ही क्यों न हो, अपने अद्वितीय पराक्रम एव दानशीलता के कारण दानवीर-शूरवीर कर्ण के नाम से विख्यात हो गया.

लेवि वंश की गुलाम स्त्री के गर्भ से एक खूबसूरत बच्चा पैदा हुआ अपने मालिक एंगुप्तों की आज्ञा के अनुसार उसे उस बच्चे को फेंक देना चाहिए था, नही तो उसे मृत्युदण्ड मिलना अनिवार्य था. तो भी उस स्त्री से उस बच्चे को, मातृ प्रेम के कारण, नदी में फेंका न गया उसने उसे एक छोटे-से सन्दूक मे रखकर नदी-तट की घास-फूस मे छिपा दिया नदी स्नान के निमित्त आयी हुई राजकुमारी ने घास-फूस मे से बच्चे के रोने की आवाज सुनी तो उसने अपनी दासियों से वह पेटी मगवाकर, उसे खोलकर देखा उसमें पडे बच्चे को देख उसने अपनी दासियों को उसे पालने-पोसने का आदेश दिया यह बालक ही बडा होकर मोसे के नाम से जाना गया यही वह मोसे था जिसने एंगुप्तों के यहा गुलामों के रूप मे जीने वाली इजायली जनता को विमुक्त करके विशेष कीर्ति पायी

ऐसे कितने ही ख्याति प्राप्त वीर हुए, इसी कारण तो महाभारत में यह कहा गया कि "शूर-वीरों के जन्म, सूरों के जन्म, तथा नदियों के उद्गम जाने जा सकते हैं क्या? इतिहास साक्षी है कि ऐसे वीरों की मृत्यु पर उनके सम्मान में जगह-जगह पर पिरामिड, मकबरे और समाधिया निर्मित हुई

फिर भी इनमें कर्ण, एकलव्य, मोसे जैसे योद्धा कम थे क्रूर, रक्तपिपासु और भोगविलासी वीरों की सख्या अधिक थी इनमें कुछ तो सेनापति बने कालक्रम मे कुछ सेनापति राजा चुने गये परन्तु कुछ समय के बाद राजपद पाना वश परम्परागत अधिकार बन गया तब से जनता की पचायत का शासन खत्म हुआ और निरकुश प्रशासन के नीचे प्रजा दब गयी

ऐसी कई कहानियां प्रचलित हुई कि अमुक राजा वरदान के प्रभाव में पैदा हुआ, अमुक यज्ञ के होमकुण्ड से उत्पन्न हुआ, तथा अमुक-अमुक राजा ने वायु, वरुण, इन्द्र आदि से जन्म प्राप्त किया. इससे भी संतुष्ट न होकर किसी ने कहा कि हमारा वंश चद्रवंश है तो किसी ने कहा कि हमारा वश सूर्यवश है किसी का अग्निवश था तो किसी का पद्मवश. इस तरह हर किसी ने अपने-अपने बडप्पन की डींगें मारी

तब ब्राह्मण उठ खडे हुए और कहने लगे कि यदि क्षत्रिय सूर्यवंशी तथा चंद्रवंशी हैं तो हम भी ब्रह्मदेव के वंशज हैं. फिर दानवों का दावा था कि कश्यप ब्रह्म से हमारे पैदा होने के बाद ही देव पैदा हुए. हर किसी ने स्वयं ही कहानियां बना ली ताकि लोगों में विश्वास जमे कि इनका कहना अक्षरशः सत्य है ऐसी कहानियों से उन्होंने **रामायण** और **महाभारत** को भर दिया.

कहा जा सकता है कि जिस युग मे लोग एक दूसरे से बढकर वीरता की डींगे मारते हुए कहानिया गढ रहे थे, उसी युग में वाल्मीकि की **रामायण** और बाद में **महाभारत** ने जन्म पाया इसी प्रकार यूनान में **इलियड** तथा **ओडेसी** काव्यों का आविर्भाव हुआ अतएव इन सब काव्यों में कुछ समानताएं मिलती हैं.

जिस प्रकार यह विदित नही होता कि **रामायण** के प्रणेता वाल्मीकि, तथा **महाभारत** के व्याख्याता वैशंपायन किस काल के थे, उसी प्रकार यह ज्ञात नहीं होता कि **इलियड** और **ओडेसी** काव्यों के सृष्टा कब हुए होमर किस जमाने का था कुछ कहते है कि वह ई. पू ८५० वर्ष में था तो कुछ मानते हैं कि वह ई पू १२०० वर्ष मे हुआ. कुछ लोग तो यहा तक पूछते हैं कि क्या सचमुच होमर नामक महाकवि का अस्तित्व था ?

जिस तरह हमारे रामायण का गान कुशीलवों ने किया उसी तरह गायकों ने होमर के काव्यों का गान करके लोगों को सुनाया जैसे हमारी **रामायण** तथा **महाभारत** अनेक पंडितों के हाथों मे पडकर विस्तार पाते गए उसी तरह पिसिस्ट्राटस, हिप्पार्कस, हिप्पियास जैसे लोगों के हाथो में पडकर होमर के काव्य व्यापक बने

यदि वाल्मीकि ने कहा कि रावण के सीताहरण के कारण राम-रावण संग्राम हुआ तो होमर ने कहा कि पारिस द्वारा हेलेन को उठा ले जाने के कारण ट्राजन युद्ध हुआ

महाभारत के भीम की तरह यूनानी पुराणों मे हमको हर्क्युलिस दिखाई देता है **महाभारत** के कर्ण तथा **इलियड** काव्य के अकिलेस में अनेक समानताएं मिलती हैं. परन्तु अकिलेस सिर्फ वीर की तरह दिखाई देता है तो कर्ण वीर ही नहीं, अपितु दानवीर के रूप में भी दृष्टिगत होता है

एंगेल्स ने अपना विचार यूं व्यक्त किया कि प्रकृति-आराधक प्राचीन आर्य-संस्कृति से यूनानी पुराणों की सैकडों कहानिया आविर्भूत हुई दोनों की पुराण गाथाओं में समानताएं होना स्वाभाविक ही है, इसी तरह हमारे पुराणों की कथाओं तथा **ओल्ड टेस्टामेंट** की कहानियों मे समानताएं पायी जाती हैं टैग्रस व युफ्रटीस नदियों की पूर्वी और उत्तरी दिशाओं में आर्यों के तथा पश्चिमी दिशा में सेमेटिक प्रजा के फैले रहने से और दोनों के बीच में कुछ आदान-प्रदान होने से उनमें कुछ समानताएं मिलती हैं दूसरी खास बात यह है कि पारसियों की "अवस्था" और आर्यो के ऋग्वेद में सम्बन्ध है. कहा जा सकता है कि दोनों के पूर्वज जब आज के ईरान प्रदेश में थे, तब यह सम्बन्ध बना था.

बहु-पत्नी एव बहु-पति प्रथा

उस युग में संयुक्त परिवार के मालिक यथासंभव अधिकाधिक स्त्रियों को अपनी पत्निया बना लेते थे जिनके पास ज्यादा संपत्ति नहीं थी, केवल वे ही एक पत्नी से संतुष्ट होकर रह जाते थे.

उस अवस्था में सभी पुरुषों के लिए पत्नियां मिलना मुश्किल था. इस-लिए गरीब परिवारों में सारे भाई मिलकर एक ही स्त्री से शादी कर लेते थे

"दस प्रचेतासो ने मिलकर मरिष नामक स्त्री से विवाह कर लिया" (भागवत).

"वितंतु" नाम राजर्षि के पुत्र साल्वेय, शूरसेन आदि ने मिलकर "अजित" नामक कन्या से शादी की

बहुपति एव बहुपत्नी प्रथा से सम्बन्धित कितनी ही कहानिया ग्रीक पुराणों में हैं जर्मनों के बीच में भी बहुपति प्रथा प्रचलित थी सीजर के लिखे नोट्स में दर्ज था कि दस-बारह ब्रिटन मिलकर एक ही स्त्री से शादी कर लेते थे यह भी जिन लोगों के लिए सभव न होता था वे देव मंदिरों में रहने वाली दासियों के पास जाते थे अथवा प्रेम मंदिरों मे रहने वाली वेश्याओं के पास जाते थे.

पुरोहितों को जब चाहे तब कन्याए मिल जाया करती थी ऋषि राज कन्याओं को पा सकते थे महाभारत में यह बताने वाली कहानिया है कि च्यवन ने सुकन्या से, अगस्त्य ने लोपामुद्रा से, ऋचिक ने सत्यवती स विवाह किया दूसरी ओर मुनि कन्याओं ने राजाओं को वर लिया शकुन्तला ने दुष्यत को वरा देवयानि ने ययाति को वरा जब एक मुनिकन्या ने [illegible] को वरा तब उससे शातवाहन पैदा हुआ.

विवाह कर अपना घर न बसाने वाले परिव्राजक गृहस्थों के अतिथि-सत्कार से फायदा उठाते थे जिस घर में अनेक स्त्रिया होती थी, उस घर में जाकर वे भरपेट भोजन कर मालिक द्वारा निश्चित स्त्री के साथ शयन-सुख का अनुभव करते थे. एक ऋषि दूसरे ऋषि की पत्नी की माग करता था. भागवत में लिखा गया है कि बृहस्पति ने उचट्य की पत्नी ममता को पाया और उससे भारद्वाज को उत्पन्न किया महाभारत में उद्दालक नाम के मुनि की पत्नी के प्रति एक वृद्ध ब्राह्मण की कामना का उल्लेख मिलता है ऐसी कितनी ही दूसरी कहानिया भी हैं.

आज भी ससार के कुछ देशों में इस प्रकार के अतिथि-सत्कार की प्रथाए हैं आस्ट्रेलिया की आदिवासी जातियों में तथा हमारे देश के दो-तीन जगली कबीलों में ये प्रथाए अब भी चालू हैं.

उस समय पुरुष की कामना की पूर्ति करना स्त्री की शिष्टता माना जाता था इसी कारण यह कहा जाता था कि पुरुष की कामना की पूर्ति न करने वाली स्त्री की निष्कृति नहीं होती. वरदराज रामायण में साहसपूर्वक यह लिखा गया है कि अहल्या ने इद्र की कामना की पूर्ति की यूनानी पुराणों

से प्रतीत होता है कि स्पर्टान स्त्रियों ने इस शिष्टता का पालन किया था इस तरह जैसे स्त्री पुरुष की कामना की पूर्ति करती थी, वैसे ही स्त्री की कामना की पूर्ति करना मनुष्य की शिष्टता समझा जाता था तारा और चन्द्र की कहानी ऐसी ही शिष्टता से सम्बंधित थी

बृहस्पति की पत्नी तारा ने चद्र से प्रेम किया. चद्र ने उसे स्वीकार किया फिर दोनों मिलकर कहीं एकांत प्रदेश में चले गये उसके पश्चात उन्हें एक पुत्र प्राप्त हुआ. यह समाचार मिलने पर बृहस्पति तुरन्त उसे देखने पहुंचा बच्चा बहुत सुन्दर था इसलिए उसे देखकर बृहस्पति खुशी से फूला न समाया. उसने कहा कि मेरी पत्नी से उत्पन्न पुत्र पर मेरा ही हक है इसलिए इसे मैं ले जाऊंगा चद्र ने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता तारा भी जाने के लिए राजी नहीं हुई तब बेचारा बृहस्पति क्रोध से आपे से बाहर हो गया अपने बड़े भाई की पत्नी, जो पूर्ण गर्भवती थी, से स्वय बलात्कार करने की और दीर्घतम की दोनों आंखें फोड़ देने की बात वह भूल गया चद्र को सबक सिखाने की धमकी देते हुए वह सारे देवगण को इकट्ठा कर लाया तुरन्त बृहस्पति को सबक सिखाने की घोषणा करते हुए शुक्राचार्य सारी राक्षस सेना के साथ चद्र से आ मिले दोनों के बीच घोर संग्राम हुआ उसमें चद्र ने सारे देवों के छक्के छुड़ा दिये अत लाचार होकर बृहस्पति के पिता अगिरस ने ब्रह्मा से विनती की उसने दोनों पक्षों में समझौता कराकर तारा को बृहस्पति को सौंप दिया उसके पुत्र को बुध नाम देकर उसने उसे चद्र के सुपुर्द किया इससे चद्र की शिष्टता का पालन पूरा हुआ परन्तु ब्रह्मदेव के "दूध का दूध और पानी का पानी" वाले इन्साफ से बृहस्पति ने क्षत्रज बुध पर अपना हक गवा दिया.

तारा तथा चद्र की कहानी से भिन्न रूप में उर्वशी और अर्जुन की कहानी है जिस प्रकार तारा की कामना की पूर्ति चद्र ने की, उस प्रकार उर्वशी की कामना को अर्जुन ने पूरा नहीं किया अर्जुन ने उर्वशी को यह कह कर उसकी कामना पूर्ति से इन्कार किया कि वह वशकर्ता पुरुष की पत्नी है और उसके पिता इन्द्र की सेविका इसलिए तुम मेरी मा हुई. अतः तुम्हारा मेरे प्रति कामना रखना उचित नहीं ये वचन सुनकर उर्वशी आगबबूला हो गयी उसने अर्जुन को शाप दे डाला, "तुमने मेरी इच्छा पूर्ति न की, अत तुम मर्त्यलोक में जाकर, मान विवर्जित होकर, मानिनियों के मध्य नपुसक बने रहो" (महाभारत)

इस तरह के प्रसग आजकल धर्मसम्मत नहीं और कानून के अनुकूल भी नहीं. परन्तु यह निर्विवाद है कि किसी समय ये धर्मसम्मत माने जाते थे. काल-क्रम में समाज में आए परिवर्तन इसका कारण है.

"अतिथि के रूप में आये हुए एक ब्राह्मण ने उद्दालक नामक एक मुनि की पत्नी की इच्छा की तो उद्दालक का पुत्र श्वेतकेतु अत्यंत क्रुद्ध हो उठा. उसने नियम बनाया कि स्त्रियों को पराये पुरुषों के साथ भोग नहीं करना चाहिए. उसने घोषणा की कि जो इस नियम का उल्लंघन करेगा, उसे

घोर पाप लगेगा. इसलिए तब से स्त्रियों के लिए पराये पुरुष के साथ समागम धर्म-विरुद्ध हो गया." (महाभारत)

आजकल के कानून पति और पत्नी दोनों में किसी को भी व्यभिचार की आज्ञा नहीं देते. फिर भी गुप्त रूप से स्त्री-पुरुषों के बीच ऐसा व्यवहार जारी है. अतिथि-सत्कार और देवर-न्याय जैसी प्रथाएं किसी न किसी जगह, किसी न किसी कबीले में आज भी प्रचलित हैं. बहु-पत्नीत्व तथा बहु-पतित्व हमारे देश में आज भी प्रचलित हैं. इस्लाम मजहब के अनुसार एक पुरुष चार स्त्रियों से शादी कर ले तो भी गलत नहीं माना जाता. हिमालय के आंचल में जीने वाले कुछ कबीलों के लोग आज भी बहु-पतित्व को गलत नहीं कहते.

महाभारत काल की कुन्ती ने इस उद्देश्य से पांचों पांडवों को द्रौपदी से विवाह कर लेने का आदेश दिया कि उसके तीन पुत्र धर्मराज, भीम और अर्जुन तथा उसकी सौत माद्री के दो पुत्र नकुल और सहदेव सदा मिलजुल कर रहें. इसका कारण उसका यह डर ही था कि पांडवों में आपसी फूट पड़ गयी तो दुर्योधन का षड्यंत्र सफल होगा और उन्हें राज्य न मिल सकेगा.

जो पंडित इसे सीधे ढंग से बताना नहीं चाहते थे, उन्होंने इसे शाप तथा वरदान की कहानी के साथ जोड़ दिया. इसे डर से कि बहु-पतित्व को स्वीकार किया गया तो पुरुषों का महत्व घट जायगा और समाज कलुषित हो जायगा, एक कहानी गढ़ी गयी. उसमें यह कहा गया कि द्रौपदी यज्ञकुंड से पैदा हुई. इस प्रकार पैदा होने के पहले पूर्व जन्म में काम-वासना की तृप्ति न होने से उसने भगवान पशुपति को ध्यान में रखकर तपस्या की. तब ज्यों ही भगवान प्रत्यक्ष हुए, त्यों ही उसने जल्दबाजी में "पति" "पति" कहकर पांच बार वरदान मांगा. इसके फलस्वरूप उसको पांच पति मिले.

इस प्रकार के वरदानों के बिना ही हिमाचल प्रदेशों में कुछ कन्याएं अब भी चार-पांच पतियों से विवाह कर रही हैं. पति के लिए वे तपस्या भी नहीं कर रही हैं और पति, पति कहकर बहुपतियों के लिए वरदान भी नहीं मांग रही हैं. बात इतनी है कि वहां की आवश्यकता के अनुसार ऐसे विवाह हो रहे हैं.

हिमाचल प्रदेश की कुछ जगहों में नित्य जीवन की आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए पर्याप्त अवसर नहीं है. भूमि का अधिकांश कंकड़-पत्थरों से और बर्फ से भरा रहता है. वहां यदि आबादी बहुत अधिक बढ़ जाय तो जरूरी खाना और कपड़ा मिलना मुश्किल हो जाय. सारे भाई अलग-अलग स्त्रियों से विवाह करके अपना एक घर बसा लें तो जीवन के आधारभूत खेत और पशुगण बंट जाते हैं. संतान बढ़ती है. जीवन दूभर हो जाता है. इसलिए सभी भाई मिलकर एक ही स्त्री से शादी कर लेते हैं. फिर उससे पैदा हुई सभी संतानें मिलकर एक ही स्त्री

से विवाह कर लेते हैं इसलिए पीढी-दर-पीढ़ी घर, खेत, पशु, और औजार अविभाजित रहते हैं. आबादी अधिक नही बढती, जीवन व्यतीत करना सुगम होता है इसी वजह से वहा बहु-पतित्व की प्रथा धर्म-सम्मत मानी जाती है

ऐसे प्रदेशों में पुराने जमाने मे अधिक सख्या में कन्याओं का होना अच्छा नही समझा जाता था एक-दो से अधिक कन्याओं का जन्म होने पर उनके मा-बाप उनका गला घोंट कर मार डालते थे ज्यादा कन्याए होने पर उनकी शादिया करना मुश्किल था उनका पालन-पोषण करना भी दुश्वार था इसके अतिरिक्त यह भय भी रहता था कि बलवान समुदाय हमला करके उन कन्याओं को जबर्दस्ती बदी बना सकते हैं इसी वजह से वे अपनी कन्याओं को मार डालते थे किन्तु आजकल परि-स्थितिया बदल गयी हैं अविवाहित कन्याए भी मेहनत-मजदूरी करके अपनी जीवन-निर्वाह कर लेती हैं

जिन लोगों ने स्वेच्छा सभोग, अतिथि-सत्कार जैसी बातों को प्रति-बिंबित करने वाली कहानियों को ज्यों की त्यों रहने देना अच्छा न समझा, उन्होंने उनके साथ शाप तथा वरदानों की कहानिया जोड दीं कुछ लोगों ने उनकी आलोचना करते हुए नीति की शिक्षा देने वाली कहानिया सुनायी इनके साथ-साथ ब्राह्मण एव क्षत्रिय वर्गों के बीच चली स्पर्धा में कई कहानिया निकली उस समय रामायण और महाभारत की कथाओं को प्राधान्य मिला अत हर एक ने अपने बडप्पन का प्रचार करने के लिए खुद ही अपनी-अपनी कहानियों को उनमें जोड दिया इससे उन काव्यों का विस्तार हुआ

पुराण सस्कृत में लिखे गये तो बौद्धों की जातक कथाए आम जनता की समझ में आने वाली पाली भाषा में लिखी गयी जैन गाथाए अर्ध-मागधी में लिखी गयी. गुणाढ्य ने अपनी बृहत्कथा को पैशाची भाषा में लिखा तो हाल की गाथा-सप्तशती प्राकृत में लिखी गयी है

बृहत्कथा सस्कृत में अनूदित हुई इसकी कथाओं के आधार पर रूपक लिखे गये हाल की गाथा-सप्तशति का भी सस्कृत में अनुवाद हुआ इसकी सात सौ गाथाए ललित श्रृगार के भडार हैं

इनके साथ भट्टि-विक्रमार्क की कहानिया, सर्व साधारण लेखकों की विविध कथाए तथा लघुकथाए इत्यादि कितनी ही कहानिया लिखी गयी

इसी प्रकार की कहानिया हैं अरेबियन नाइट्स की कहानिया हर किसी देश में ऐसी कहानिया प्रचलित हैं. इनमें कुछ का आदान-प्रदान भी हुआ, फिर भी रामायण तथा महाभारत की तरह व्यापक ख्याति सपन्न कहानिया बहुत कम हैं

हा एक बात तो सच है, निस्सदेह रामायण या महाभारत, अथवा यूनानी महाकवि होमर के लिखे काव्य, उन कालों में प्रचलित कहानियों की ही देन हैं.

कथाओं के आधार पर काव्य बने

आज कोई कहानी चुनकर सिनेमा का निर्माण किया जाता है इसी प्रकार किसी कहानी को आधार बनाकर विगत काल में काव्यों का सृजन किया गया. भास, कालिदास आदि महाकवियों की अधिकांश रचनाएं इसी प्रकार प्रणीत हुई. समाज के गुण-दोषों को तथा जनता की आशा-आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करने वाली कहानियों की आज कोई कमी नहीं है. पत्र-पत्रिकाओं में तरह-तरह की कहानियों का प्रकाशन हो रहा है श्रोता आकाशवाणी द्वारा प्रसारित होने वाली कहानियों को उत्सुकता से सुन रहे हैं, सिनेमा तथा नाटकों को धक्का-मुक्की करके देख रहे हैं, फिर भी लोक कथाओं का महत्व कम नहीं हुआ है इसके आधार पर हम यह कल्पना कर सकते हैं कि जिन दिनों पत्र-पत्रिकाएं न थीं, सिनेमा तथा आकाशवाणी के प्रसारण नहीं थे, अक्षरों का आविष्कार ही नहीं हुआ था, उन दिनों इन कहानियों की कितनी महत्ता रही होगी और किसी के द्वारा कहानियों के सुनाये जाने पर लोग कितनी तत्परता से इन्हें सुनते होंगे.

इसके अतिरिक्त उन दिनों रामकथा का एक विशिष्ट स्थान था आर्यों के पशुपालन की दशा में उत्पन्न होकर जो रामकथा काल के अनुसार बढ़ती गयी, उसके अत्यधिक लोकप्रिय होने का मुख्य कारण यह है. यह संदेश उद्घोषित करने के लिए वह काव्य अत्यंत उपयुक्त था कि भाई-भाई आपस में मिल-जुलकर रहें तो सुख प्राप्त होगा, नहीं तो गुलामी में रहना पड़ेगा.

अतएव वाल्मीकि ने रामकथा को अपनी काव्य-वास्तु के रूप में स्वीकार किया वेदों में जहां-तहां पाये जाने वाले "अनुष्टुप्" छंद को संवार-सुधार कर मजी हुई शैली में उन्होंने **रामायण** की सृष्टि की. इसे उन्होंने स्वयं तो गाया ही, वीरगाथाएं गाने वाले चारणों अथवा भाटों को भी सिखाया. अन्यथा यह महाकाव्य हमें उपलब्ध नहीं होता, क्योंकि उन दिनों किसी काव्य को लिपिबद्ध करने के लिए अर्थात् किसी एक पत्र पर लिख रखने के लिए, लिपि का अभाव था अतएव सब श्लोकों को कंठस्थ करना पड़ता था एक नहीं—दस नहीं—हजारों श्लोकों को एक-एक करके कंठस्थ करते हुए, फिर अन्य श्लोकों की रचना करते हुए काव्य सृष्टि करने का काल था वह इसी कारण वाल्मीकि ने अपने काव्य को स्वयं गाने के अलावा अपने शिष्यों को भी उसे गाने की शिक्षा दी.

आजकल जिस प्रकार हरिकथा का गान करने वालों को "हरिदास"

कहा जाता है, उसी प्रकार उन दिनों में वीर गाथाएं गाने वालों को "कुशीलव" कहकर पुकारते थे. वाल्मीकि महर्षि को भी रामायण गान करने से "कुशीलव" नाम मिला. वाल्मीकि ने रामायण महाकाव्य का गान किया तो उग्रश्रव, वैशंपायन तथा संजय ने महाभारत की गाथाएं सुनायीं ऐसी गाथाएं दूसरे देशों के पुराणों में भी उपलब्ध हैं. हमारे रामायण तथा महाभारत ग्रंथों की मूल कथाओं जैसी कथाएं ईसाइयों के ओल्ड-टेस्टामेंट में भी मिलती हैं

"राम" नामधारी व्यक्ति यूरोप तथा एशिया के आर्यों में ही नहीं, सेमेटिक और लैटिन भाषाभाषी जनता में भी थे "रामास्" नाम के तीन राजाओं ने मिश्र देश में शासन किया. यहूदियों के गावों में कुछ के तो "रामा" नाम थे यूदा के वंश में "राम्", "आराम्", "येहोराम्" नाम के व्यक्ति थे. अब्रहाम का असली नाम "अब्राम्" था इज्रायल के राजा बयेषा ने "रामा" नामक नगर का निर्माण करवाया था आज के दमास्कस नगर के प्रदेश का नाम किसी जमाने में "आरामदेश" था.

रामलोव, कुरल्गोव जैसे नाम वाले आज भी सोवियत संघ में मौजूद हैं. पेरू देश के इंका कबीले के लोग "रामसीत्वा" नामक त्यौहार मनाते हैं. उनकी स्त्रियां साड़ियां पहनती हैं. इस विषय पर अनुसंधान हुए कि इस "इंका" कबीले के लोगों का, आर्यों के साथ कोई संबंध था या नहीं ? इनके फलस्वरूप यह कहा जाता है कि इस "इंका" कबीले के लोग दक्षिण पूर्व एशिया के देशों से प्रशांत महासागर से होकर पेरू देश में पहुंचे थे.

लैटिन कबीलों में भी यह नाम प्रचलित था ई.पू. आठवीं सदी में रोम नगर को बसाने के लिए जिस व्यक्ति ने शिलान्यास किया था, वह "रामुलस" नामक चरवाहा था उसी के नाम पर इस नगर का नाम "रोम" पड़ा

सेमेटिक कबीलों के साहित्य में, अथवा लैटिन कबीलों के साहित्य में रामकथा तो नहीं है, किन्तु रामकथा से मिलती-जुलती एक कथा ओल्ड टेस्टामेंट में मिलती है

कथाओं में समानताएं

यदि दशरथ की तीन रानियां थीं तो अब्रहाम की भी तीन पत्नियां थीं. दशरथ ने अपने बड़े बेटे राम को वनवास के लिए भेजा तो अब्रहाम ने अपने बड़े बेटे इस्मायेलु को जंगल में भेजा. दशरथ ने कैकेयी की बात मानकर भरत को राज्य सौंपा तो अब्राहम ने शारा की बात स्वीकार करके इस्साक को सारी संपत्ति का मालिक बनाया. कैकेयी ने अपने पति को अपने मोहजाल में फंसाकर अपने सौतेले पुत्र को वन में भेजा तो शारा ने भी अपने पति पर अपना जादू चलाकर अपने सौतेले बेटे को जंगल में भेजा.

दशरथ को बुढ़ापे में संतान प्राप्त हुई थी, उसी तरह अब्राहम को भी बुढ़ापे में संतान प्राप्त हुई. यज्ञ-फल के रूप में दशरथ के पुत्रों के पैदा होने की बात कही गयी, तो यहोवा की मेहरबानी से अब्राहम के पुत्रों के जन्म लेने की बात कही गयी कैकेयी को दिये गये वरदानों का तिरस्कार न कर सकने के कारण दशरथ ने श्रीराम को वन में भेजा तो यहोवा की आज्ञा का उल्लंघन न कर सकने के कारण अब्राहम ने शारा की इच्छा के अनुसार इस्मायेल को जंगल में भेजा

फिर इस्साक के पुत्रों के विषय में भी यही बात हुई इस्साक की पत्नी रिब्का थी उसके जुड़वे बच्चे पैदा हुए उनमें बड़े का नाम एसाव और छोटे का नाम याकोब था. छोटे पुत्र के लिए रिब्का ने ऐसा उपाय किया कि अंधे इस्साक की सारी संपत्ति छोटे बेटे को ही मिल जाय इसलिए बेचारा बड़ा बेटा जंगलों में चला गया दशरथ की पत्नी सुमित्रा के भी जुड़वे बच्चे हुए. बड़ा बेटा लक्ष्मण और छोटा बेटा शत्रुघ्न था छोटा घर पर रह गया तो बड़ा राम के साथ वन में गया

जैसे भरत अपने मामा के यहां था, वैसे ही याकोब भी अपने मामा के यहां था भरत ने अपने को दिया गया राज्य राम को अर्पित किया तो याकोब ने भी अपने को मिली हुई संपत्ति एसाव को सौंप दी

राम की तरह एसाव भी तीरंदाजी में बेजोड़ था इसीलिए हिम्मत करके वह किसी बीहड़ इलाके में गया, वहां जंगल काटकर, खेती-बाड़ी और पशुपालन आरंभ किया उसने ऐसे स्थान पर अपना निवास बनाया जहां आसानी से पशुओं के लिए जरूरी चारा मिल सके जंगलों में जाते समय लक्ष्मण राम के साथ चला, तो राम ने अहल्या (बिना जोती जमीन) को सुधार कर, उसे जोतकर सुनहली फसलों को (धान्यलक्ष्मी को) उत्पन्न किया लगता है कि अहल्या के शाप-विमोचन की कहानी का यही अर्थ है शाप और वरदानों की कहानी जोड़ने से तथा बिजली का इंद्र, बंजर भूमि का (अहल्या को) के रूप में वर्णन करने से असली बात छिपी रह गयी

जो भी हो दोनों कहानियां एक ही प्रकार से चलीं इस कहानी के दशरथ के समान ही उस कहानी का अब्राहम था यहां भरत ने जो काम किया, वहां याकोब ने वही काम किया यहां कैकेयी की तरह वहां शारा और रिब्का थीं इस कथा के राम लक्ष्मण की तरह उस कथा में इस्मायल और एसाव दिखाई देते हैं यह एक ही पीढ़ी से संबंधित कहानी है तो वह दो पीढ़ियों से संबंधित कथा है. दोनों में बस यही अंतर है

फिर भी दोनों कथाओं ने रक्त संबंध को प्रधानता दी चाहे सही हो या गलत, पिता की बात बेटे को माननी ही चाहिए और उसके अनुसार चलना ही चाहिए जवान पत्नी के प्रति मोह के कारण परिवार का मुखिया भले ही गलती कर बैठे, पर बेटों को उसे निभाना चाहिए चूंकि विद्रोह करके झगड़ने से परिवार के हित में आघात लगता है, इसलिए

बड़े बेटे को जंगल में जाने का आदेश दिया जाय तो उसे जाना ही चाहिए

आर्यों के सोवियत संघ के दक्षिणी इलाके के मैदानों में और ईरान के आर्याना में पशु-पालन तथा सेमेटिक लोगों के इराक और उसके आस-पास के इलाकों में पशुपालन से दोनों के बीच कुछ आदान-प्रदान होना स्वाभाविक था इसी कारण दोनों कथाओं के मूल विषय में समानता है

किन्तु आर्यों की रामकथा की तरह सेमेटिक प्रजा की कथा का विस्तार नहीं हुआ शायद इजराइल की जनता के चार सौ साल तक एंगुप्तों के यहां गुलामों की तरह जीने के कारण उनकी कथा वीरगाथा के रूप में परिणत नहीं हो पायी होगी ? पर रामकथा ने विविध रूपों में विस्तृत होकर, अंत में एक महाकाव्य का रूप ग्रहण किया अत हमें इसका अनुशीलन करना होगा कि राम कथा कब उत्पन्न हुई और उसका प्रसार किस प्रकार हुआ

जब धन-दौलत न थी, तब राम कथा भी नहीं थी

फ्रेडरिक एंगेल्स ने लिखा है—"वन्य अवस्था में मानव ने पेड़ों की छालों से रेशे निकालकर, उनसे कपड़े बनाकर पहना उन्होंने छालों तथा टहनियों से टोकरियां बुनीं पत्थर की कुल्हाड़ियां तैयार होने पर उनकी मदद से किश्तियां बनाना संभव हुआ कुछ जगहों में लोगों ने लकड़ियों और बांसों के सहारे घर बनाना सीखा. जहां-तहां गदा और बर्छी जैसे साधारण हथियारों के साथ, विशेष हथियारों के रूप में तीर-कमान तैयार किये गये फिर भी उनको उस समय घड़े बनाना मालूम न था आज अमेरिका के रेड इंडियन इसी अवस्था में हैं"

मोर्गन ने कहा—"कुम्हार की चाक का आविष्कार करके घड़े बनाना सीख जाने पर मानव ने वन्य अवस्था को पारकर असभ्य दशा में प्रवेश किया"

अत केवल कुल्हाड़ियों, गदाओं और तीर-कमानों के होने से रामकथा जैसी कथाएं कहने का अवसर नहीं होता उसके लिए संपदा होनी चाहिए, अथवा राज्याधिकार होना चाहिए

कहना न होगा कि आर्य, सेमेट (सेम नामक पुरुष के वंशज) और शायद तूरानियन जैसे कबीलों के सभी लोग पशुपालन को अपना कर ही उन्नति कर सके इस कारण से असभ्य जनसाधारण से गोपालक-जातियां अलग हो गयीं यही सबसे पहला सामाजिक श्रम विभाजन था अन्य असभ्य जातियों की अपेक्षा गोपालक लोग अपने दैनिक जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं को अधिक मात्रा में कमा सके; दूध, दूध से बनी चीजें, ऊन, और ऊन कातकर बनाये गये कपड़े जैसी नयी-नयी वस्तुएं वे उपलब्ध कर सके.

सेमेंट कबीले के अब्राहम और इस्साक की संपत्ति केवल पशु संपत्ति थी. अब्राहम ने अपने बड़े बेटे को जंगल में भेजकर इस्साक को जो सौंपा, और एसाव को जंगल में भेजकर इस्साक ने जो याकोब के सुपुर्द किया, वह भी केवल पशु संपत्ति थी. इसी संपत्ति से संबंधित हैं अब्राहम, एसाव इत्यादि की कहानियां.

इसलिए कहा जा सकता है कि राम कथा भी पशु संपत्ति से संबंधित ही होगी और आर्य जब असभ्य दशा के मध्यकाल में थे, तब यह कथा जन्मी होगी

पशु संपत्ति को बढ़ाते हुए प्रगति करने वाली पशुपालक जातियों में स्त्रियों का महत्त्व कम हुआ और पुरुषों का महत्त्व बढ़ा हालांकि उन दिनों में पुत्र पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होता था, पर पुत्र के लिए पिता की आज्ञा का उल्लंघन करना संभव न था.

उन दिनों में धनी परिवार का मालिक चाहे कितनी ही स्त्रियों से विवाह कर सकता था इस उद्देश्य से कि जितने ज्यादा बेटे पैदा होंगे उतना ही फायदा है, वे यथासंभव अधिक से अधिक स्त्रियों से विवाह कर लेते थे उनमें जिन्हें पुत्र सन्तान नहीं होती थी उनकी स्थिति अच्छी नहीं मानी जाती थी पुत्रों के होने पर भी यदि उनके हाथ में संपत्ति नहीं होती थी तो उनके लिए गुलामी का जीवन अनिवार्य था

इस तरह संपत्ति के साथ उत्पन्न होने वाले आन्तरिक कलहों की रोक-थाम करते हुए, आर्य, सेमेंट विकसित समाजों ने पशुओं की बड़ी-बड़ी टोलियों का पालन-पोषण आरंभ किया चारे की कमी होने पर वे पशुओं को दूसरे स्थानों पर हांक ले जाते थे वहां भी यदि चारा कम पड़ता था तो फिर आगे बढ़कर किसी नये स्थान की खोज में निकलते जाते.

इस तरह प्रसार करते हुए अर्यानां से निकले हुए आर्य (अनु-द्रुह्यु-तुर्वय-यदु-पुरुव-वंशों के लोग) सिन्धु तथा सरस्वती नदियों के तटों पर पहुंचकर, वहां के हरी घास वाले मैदानी भागों में बस गये. उनके पीछे त्रुत्सु तथा भरत वंशों के लोग आये यदि कुछ आर्य यूरोप में फैल गये

एंगेल्स ने लिखा—"आर्य और सेमेंट पशुओं को पालतू बनाकर बड़ी-बड़ी टोलियों को पालते थे. दूसरी असभ्य जातियों की अपेक्षा उनके आगे बढ़ने का कारण यही मालूम होता है"

सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्री एस बी राय ने लिखा है—"वेदकाल के आर्यों का इतिहास, संस्कृति आदि सब कुछ अर्यानां में ही आरंभ हुआ."

इसलिए हम यह बेशक कह सकते हैं कि अर्यानां में और सोवियत तुर्कमेनिया में बहने वाली सिरदर्या, अमूदर्या नदियों के तटों पर जिन आर्यों ने पशुपालन का प्रारंभ किया, वे कालक्रम से दूसरे प्रान्तों में फैल गये

इस प्रकार हरी घास के मैदानों में पशु-चारण करके जीवन-यापन करने वाले पशुपालक लोगों ने काफी प्रगति की. दूध, मक्खन और मांस के पर्याप्त मात्रा में मिलने से आबादी में वृद्धि हुई. वे आंख की पुतली की तरह पशुओं की रक्षा करते थे. इसलिए पशुओं की टोलियों में वृद्धि हुई. उष्ण प्रदेशों में गर्मी के मौसम में और ठंडे प्रदेशों में जाड़े के मौसम में पशुओं का चारा काफी नहीं मिलता था. इसलिए ऐसे समय में पशुओं को चराने के लिए, उन्होंने फसलें उगाकर जमा करना आरंभ किया इस तरह खेती का प्रारंभ होने के कारण उन्हें खाने के लिए अनाज भी मिला. अब विकास और भी तीव्र गति से होने लगा

फिर भी पशुपालकों को एक समस्या का सामना करना पड़ा धीरे-धीरे इन आगे बढ़े हुए सब लोगों का एक ही जगह में रहना बहुत मुश्किल हो गया इसलिए कुछ लोगों को नये स्थानों में प्रवास के लिए जाना पड़ा. इसके लिए उन्होंने कुछ जगहें चुनीं. पहले कुछ लोग वहां गये उन्होंने वहां के झाड़-झंखाड़ों को कटकर जला दिया बाद में उन्होंने जमीन जोतकर उसमें बीज बोये फसलें बढ़ जाने के बाद वहां से वे वापस आकर पशुगणों को हांक ले चले

एंगेल्स ने कहा—"अनिवार्य परिस्थितियों में वे (आर्य, और सेमेंट) कभी पश्चिम दिशा में कभी उत्तर दिशा में निकले ; यूरोप में फैली जंगली जमीनों के झाड़-झंखाड़ों को काटकर उन्होंने खेती करके पशुगण के लिए जरूरी चारे का प्रबंध कर लिया इन लोगों ने पशुओं के चारे के लिए ही पहले-पहल फसलें पैदा की बाद में ही अनाज मनुष्यों के खाद्य पदार्थों में महत्वपूर्ण बनी."

भारतीय उपमहाद्वीप में भी ठीक यही हुआ पहले सिन्धु नदी के ऊपरी हिस्से में पहुंचकर जो आर्य वहां बस गये, वे क्रमश. कई दूसरे स्थानों में फैले. नये स्थानों में जाकर बसने के पहले उन्होंने वहां के जंगलों को जलाकर जमीन जोती कहीं किसी एक स्थान में कोई जंगली लोग बसे मिले तो उनको उन्होंने भगा दिया. अगर कहीं विकसित समाज के लोग मिले तो उन्होंने उनसे रिश्ते बढा लेने का प्रयास किया, जरूरत पड़ी तो लड़ाई भी की

ध्यान देने की बात यह है कि इस विस्तार को प्राप्त करने में कुछ ऋषि उनके मार्गदर्शक बने. ऋग्वेद में इसका उल्लेख है कि बुध, वासुदेव, अगस्त्य, अत्रि जैसे महर्षियों ने आगे बढकर, आश्रम कायम करके, किसानों की मदद की.

"मित्रो ! हल तैयार रखो. हल में बैलों को बांध कर खेत जोतो. हल की जुती जमीन की रेखाओं में बीज बोओ. हमारी मनोकामनाओं के साथ फसलें भी सफल हों. हमारे हंसिये पकी फसलों को काटें"

"दोस्तो ! पानी की बाल्टियां बनाओ. उनमें चमड़े के मजबूत रस्से बांधो कभी न घटने वाले पानी से भरे कुओं से पानी निकालो."

"होशियार लोगो ! घोड़ों और बैलों का पेट भर दाना खिलाकर पानी पिलाओ फसल के पौधों को ले चलने के लिए लायक गाड़ियों को तैयार बना रखो सभी गट्ठरों को एक जगह खिचवाकर समेट रखो" (ऋग्वेद, १०-१०१)

ये ऋषिगण किसानों को सलाह देने के अतिरिक्त आश्रमवासियों को शिक्षा भी देते थे. आर्येतर लोगों को अपने अनुकूल बनाने के लिए, अगर वह संभव न हो तो उनसे लड़कर उन्हें हराने के लिए भी वे अथक-प्रयत्न करते थे

उन दिनों में कुछ लोग मैदानों में रहकर पशुओं को चराते थे तो कुछ लोगों को जंगल कटकर, उन्हें जलाकर खेती-बाड़ी करनी पड़ती थी, जरूरत पड़ने पर उन्हें जंगली लोगों से लड़ना भी पड़ता था. अत: पशुगण को चराने की अपेक्षा खेती करना ज्यादा मुश्किल होता था इसी वजह से सारा और कैकेयी जैसी स्त्रियों ने अपने पतियों को अपने मोह-जाल में फंसाकर अपने पुत्रों को पशु-संपत्ति दिलवायी होगी और सौतेले पुत्रों को जंगलों में भेजकर उनसे खेतीबाड़ी करवायी होगी

हालांकि जंगलों में रहते हुए झाड़-झंखाड़ साफ करके बंजर जमीनों को जोतकर फसलें पैदा करना मुश्किल था फिर भी क्रमश इस प्रकार खेती करने वाले किसान ही उन्नति के पथ पर अग्रसर हुए पशुओं के चारे के साथ उन्हें अनाज भी मिला इसलिए वे खेती-बाड़ी करते हुए पशुगण का पालन-पोषण भी कर सके खेतीबाड़ी न करने वाले गोपालकों के पशुओं को काफी चारा नहीं मिलता था इसलिए उनको किसानों पर निर्भर रहना पड़ा इसी कारण से इस्साक के फिलिस्तीनियों के कब्जे वाली जमीनों में जाकर, उनकी अनुमति से वहां खेती चलायी और पशुओं का पालन-पोषण किया. खेती न करने वाला याकोब अपने पशुगण को एसाव के यहां हांक ले चला जो खेती-बाड़ी करता हुआ, और पशुगण को पालता हुआ शेबूर में अपना स्थायी मुकाम बना चुका था भागवत में कहा गया है कि छोटा भाई श्रीकृष्ण गायों को चराने ले जाता था तो बड़े भाई बलराम ने हल हाथ में लेकर खेत जोता ये कहानियां चाहे सच हों या झूठ, पर यह सच है कि पशुपालन के साथ खेतीबाड़ी करने से ही यादवों का उन्नति पाना संभव हो सका उसके पश्चात्, उनकी राज्य स्थापना के लिए रास्ता खुला.

यों कह सकते हैं कि पशुपालन करना हो तो उसके लिए खेती करने की जो आवश्यकता ऋग्वेदकाल में ही महसूस की गयी ऋग्वेद में कहा गया है, "अरे जुआरी! जुआ मत खेल ! खेती-बाड़ी कर ! खेती करने से गायें मिलती हैं और पत्नी भी प्राप्त होती है" यह एक जुआरी को एक तपस्वी की सलाह है इससे खेती की महत्ता का पता लगता है

इसलिए राम के लिए ही नहीं, उसकी तरह जंगल में भेजे गये किसी व्यक्ति के लिए उस दशा में झाड़-झंखाड़ काटकर खेती-बाड़ी करना स्वा-

भाविक ही था. किन्तु साधारण मानव से परे एक अलौकिक व्यक्ति के रूप में राम का वर्णन होने से असली बात आखों से ओझल हो गयी

यह कहने के बदले कि राम सीता (हल) को साथ ले गया, यह कहा गया कि सीता राम के साथ वन में गयी यह कहने के बदले कि राम ने जगल काटकर, बजर जमीन को जोत कर फसलें उगायी, यह कहा गया कि राम ने धान्य लक्ष्मी (सुनहली फसल) की सृष्टि की इतने से न रुककर यह कथा भी प्रचलित की गयी कि राम ने शिला को स्त्री के रूप में बदल दिया

इस तरह के परिवर्तनों से बढी हुई रामकथा क्षात्र (वीर) युग के प्रारभ में कुछ और बढी उन दिनों में क्षत्रियों की वीरता और पराक्रम का वर्णन करने वाली कई कहानिया अस्तित्व में आयी वैसी स्थिति में एक वीर गाथा के रूप में राम कथा का परिणत होना सहज ही था

उन दिनों में कई क्षत्रिय बर्बर लोगों से भी बदतर बर्ताव करते थे पिछडे हुए लोगों पर हमले करके, उनकी सपत्ति लूटकर और उनकी कन्याओं का अपहरण करके घमड से मूछों पर ताव देते फिरते थे चाहे किसी भी देश का इतिहास देखें, यही हाल दिखायी देता था वीर युग (क्षत्रिय युग) के यूनानियों की व्यवस्था के विषय में एगेल्स ने जो लिखा, उसे हम पढ़े तो पता लगता है कि वे वीर कैसे थे ?

एगेल्स ने लिखा है—"सपत्ति में कमी-बेशी होने से समाज निर्माण में भी परिवर्तन हो गया वश-परपरागत कुलीनता एव राज्यसत्ता के लिए नींव पडी गुलामी बढी आरभ में युद्ध-बदियों तक ही यह गुलामी सीमित थी किन्तु क्रमश अन्य लोगों के साथ अपने कबीले के लोगों को ही नहीं, बल्कि अपने गण के लोगों तक को भी गुलामी में धकेला जाने लगा. इससे पूर्व कबीलों के बीच में ही सघर्ष होते थे लेकिन अब ये लोग पशुओं तथा दूसरे प्रकार की सपत्ति को लूटने के लिए और गुलामों को पकडने के लिए हमले और चढाइयां होने लगी "

इसी प्रकार कार्ल मार्क्स ने लिखा है, "वीर युग की यूनानी स्त्रियों से पुराण युग की अप्सराओं ने अधिक गौरव प्राप्त किया गुलाम कन्याओं के साथ की स्पर्धा में वीरों की पत्नियों को कई प्रकार के अपमानों का शिकार बनना पड़ा."

महाभारत पढें, या उससे भी बढकर **ओल्ड टेस्टामेंट** पढ तो ऐसे कार्यों से संबंधित विवरण स्पष्ट होते हैं. अतएव रक्त-सबध का महत्व बताने के अतिरिक्त वाल्मीकि ने पितृवाक्यपालन, भ्रातृवात्सल्य, त्याग, पातिव्रत्य, एक पत्नी-व्रत, जैसे आदर्शों की शिक्षा देने के लिए कमर कस ली इसी की पूर्ति के लिए उन्होंने अपनी सुनी हुई छोटी सी राम कथा को काव्य वस्तु के रूप में परिणत कर **रामायण** महाकाव्य की सृष्टि की

वाल्मीकि रामायण

"इक्ष्वाकूणाम् इह तेषां राज्ञा वंश महात्मानाम्
महदुत्पन्नम् आख्यान रामायणम् इति श्रुतम्"

"सुना जाता है कि रामायण महाख्यान इक्ष्वाकु राजवंश में उत्पन्न हुआ" यह स्वयं वाल्मीकि की कही हुई बात है, जो ध्यान देने योग्य है. इससे स्पष्ट है कि उन्होंने अपनी सुनी राम कथा को एक महाकाव्य का रूप प्रदान किया

इसके अतिरिक्त राम-कथा को संक्षिप्त करके महाभारत में घुसाया गया, भागवत में भी जोड दिया गया भागवत में वर्णित इक्ष्वाकु राजवंश पर नजर डालें तो ऐसी अनेक कल्पनाएं उसमें दिखायी देती हैं, जिन पर विश्वास नहीं किया जा सकता

एक बार मनु छींका तो उसकी नाक से इक्ष्वाकु बाहर निकला उस तरह प्रकट हुए इक्ष्वाकु के सौ पुत्र उत्पन्न हुए उनमें बड़े बेटे का नाम था "निकुक्षि" और दूसरे बेटे का नाम था "निमि"

निकुक्षि के वंश में पंद्रह पीढियां गुजर जाने पर "युवनाश्व" पैदा हुआ उसके सौ पत्नियां थीं फिर भी सन्तान उत्पन्न न हुई अत मुनियों ने युवनाश्व से यज्ञ करवाया यज्ञ की परिसमाप्ति पर पवित्र जल को अभिमन्त्रित करके ऋषियों ने एक कलश में उसे छिपा रखा, ताकि युवनाश्व की बड़ी रानी को वह जल पिलाया जाय परन्तु उस दिन आधी रात के समय युवनाश्व को बहुत प्यास लगी तो उसने वह जल पी लिया इसके फलस्वरूप उसका पेट चीर कर मांधाता पैदा हुआ

मांधाता से छब्बीस पीढियों के बीत जाने पर "सुदास" पैदा हुआ. उसके भी सन्तान न थी. इस कारण उसकी पत्नी मदयन्ति ने वशिष्ट के साथ समागम करके गर्भधारण किया मगर साल साल बीतने पर भी प्रसव न होने से वह बहुत तकलीफ उठा रही थी तो वशिष्ट ने एक पत्थर के पैने औजार से उसका पेट चीरकर बच्चे को बाहर निकाला. इस प्रकार पैदा हुआ "अश्मक"

अश्मक से मूलक पैदा हुआ उस समय में परशुराम सारे क्षत्रियों का संहार कर रहा था तो स्त्रियों ने अश्मक को छिपा दिया यद्यपि परशुराम के हाथों में सारे क्षत्रियों का नाश हुआ, तथापि यह मूलक जीवित रहकर निर्मूलित क्षत्रिय वंश का मूल बना उसका मूलक नाम सार्थक हुआ मूलक के पश्चात् आठ पीढियों के गुजरने पर श्रीराम पैदा हुआ

इक्ष्वाकु के दूसरे पुत्र निमि ने वशिष्ट की अनुपस्थिति में यज्ञ किया इससे क्रुद्ध होकर वशिष्ठ ने निमि को शाप दिया तो निमि ने वशिष्ठ को प्रतिशाप दिया इसके परिणामस्वरूप दोनों की मृत्यु हो गयी फिर भी वशिष्ठ मित्रा-वरुणों के द्वारा उर्वशी के गर्भ से उत्पन्न हुआ यद्यपि देवों ने निमि को सजीव करने के लिए तय किया, तथापि निमि फिर से जीवित होने के लिए राजी नहीं हुआ

राजा जीवित नहीं हुआ इसके अलावा उसके सन्तान न थी इसलिए राज्य के अव्यवस्थित हो जाने के भय से मुनियों ने निमि के शव का मर्दन किया तो जनक का जन्म हुआ इस जनक के वैदेह और मिथुल नाम भी हैं. इस कारण इनके द्वारा निर्मित नगर का नाम मिथिला पड़ा.

मिथल के वंश में बीस पीढियों के बीतने पर नीरध्वज पैदा हुआ जब वह यज्ञ करने के लिए जमीन जोत रहा था तब हल के फलक के नीचे से सीता निकली, इस प्रकार लम्बी-चौड़ी कहानी गढी गयी तब क्या सीता नीरध्वज की बेटी थी ? या जनक की बेटी थी ? कौन जाने ? इन काल्पनिक गाथाओं का न सिर है, न पैर। सभी अभूत कल्पनाएं हैं । सभी असंभव जन्म हैं

खैर, इन जन्मों की बात कुछ भी हो, यह निश्चित रूप से विदित होता है कि सीता और राम दोनों इक्ष्वाकु वंश में पैदा हुए थे, अतः वे दोनों भाई-बहन ही थे, ऐसा कुछ लोगों का मत है उन्होंने यह भी लिखा कि इक्ष्वाकु के बड़े बेटे निकुक्षि के वंश में पचपन पीढियों के बीतने के पश्चात राम का जन्म हुआ तो इक्ष्वाकु के दूसरे बेटे निमि के वंश में बाईस पीढिया गुजरने पर सीता का जन्म होने की बात कही गयी है. इससे तो लगता है कि राम से सीता ही बड़ी थी

सीता और राम की वंश-तालिका भागवत में लिखी गयी तो रावण तथा कुम्भकर्ण के जन्मों की कथा महाभारत में यों कही गयी है

ब्रह्मा के अपने मन में कल्पना करते ही पुलस्त्य का जन्म हुआ उसके एक पुत्र कुबेर पैदा हुआ. उसने अपने पिता की परवाह किये बिना अपने दादा ब्रह्मा के प्रति ध्यान लगा कर तपस्या की और उनसे कई वरदान पाये कुबेर के उसकी परवाह न करने के कारण पुलस्त्य ने अपने पुत्र पर क्रुद्ध होकर अपने शरीर के अर्ध-भाग से निश्रवसु नामक व्यक्ति को पैदा करके उसे कुबेर पर हमला करने भेजा इस विपदा से बचने के लिए कुबेर ने उससे क्षमा माग कर, निश्रवसु को नृत्य-गीतविद्या विशारद तीन राक्षस स्त्रियों की भेंट दी

उन राक्षस स्त्रियों के द्वारा की गयी सेवाओं से प्रसन्न होकर विप्रवर निश्रवसु ने उन्हें गर्भ प्रदान किया उसके फलस्वरूप उन राक्षस स्त्रियों में पुष्पोत्कटा से रावण तथा कुंभकर्ण, मालिनी से विभीषण, और बका से खर तथा शूर्पणखा पैदा हुए इस प्रकार अपने द्वारा पैदा हुए चार-पुत्रों के जात कर्म आदि संस्कार विप्रवर निश्रवसु ने किये और बाद में उनका

उपनयन भी किया. उसके पश्चात् रावण, कुंभकर्ण और विभीषण इन तीनों ने तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न करके उनसे अनेक वरदान प्राप्त किया.

अत: उत्तर रामायण में लिखा गया है कि ऐसे ब्राह्मणों की हत्या करने से राम को ब्रह्महत्या का पाप लग गया, जिससे विमुक्त होने के लिए राम ने अश्वमेध यज्ञ किया मगर यह बात महाभारत की राम कथा में नहीं मिलती इस प्रकार एक दूसर से भिन्न मालूम होने वाली कितनी ही रामकथाए उपलब्ध हैं.

ई सन् ४१२ में चीनी भाषा में अनूदित रामायण में न सीताहरण का उल्लेख है और न रावण सहार का सीता को बाल्मीकि आश्रम में भेजने तथा लव और कुश के पैदा होने की बात भी उसमें नही लिखी गयी.

तेरवादियों के बौद्धों की राम कथा के अनुसार देखा जाय तो उसका दशरथ दस रथ वाला नहीं, दस प्रकार के व्यसनों का आदी था. इसी कारण से उसने अपनी प्रिय पत्नी से डर कर राम को वन में भेजा राम ने पितृ वाक्य का पालन किया बारह साल के उपरान्त राम, लक्ष्मण और सीता अयोध्या लौट आये जब भरत ने राम से राज्यपालन करने की प्रार्थना की, तब राम ने उसे स्वीकार नही किया अन्त में कई लोगों के आग्रह करने पर और भरत के बहुत ज्यादा अनुरोध करने पर राम राज्याभिषिक्त हुए.

दूसरी एक राम कथा के अनुसार ''दशरथ वृद्ध था और जवान पत्नी कैकई का दास था तो भी उसे राम के प्रति अपार प्रेम था इसलिए उसे शका थी कि कैकयी से राम को कोई खतरा हो सकता है अत उसने एक दिन एक ज्योतिषी को बुलाकर पूछा—''बताओ। मैं और कितने साल जीऊंगा?'' तब ज्योतिषी ने कोई हिसाब लगा कर, कुंडली खीचकर और ताराबल एव चन्द्रबल देखकर दावे के साथ कहा कि आप अवश्य और बारह साल जियेंगे''

उसके पश्चात् दशरथ ने अपनी अधीनता में रहने वाले जगली लोगों के यहा राम के रहने का प्रबध किया और यह कहकर उसे जगल में भेजा—''हे राम? यहा रहने से तुम्हें कोई खतरा हो सकता है इसलिए तुम बारह साल तक वन में जगली लोगों के यहा रहकर वापस आओ. तब तक मैं मर जाऊंगा और यह राज्य तुम्हें प्राप्त होगा'' लेकिन दशरथ तभी मर गया फिर भी राम वापस नही आये भरत के अनुनय-विनय करने पर भी वह नही लौटा बारह साल पूरे होने पर ही वह वापस लौटे''

ऐसी कहानिया ही नहीं, बल्कि यह कहने के लिए भी पर्याप्त प्रमाण मिले कि प्रारभ में राम कथा सिर्फ वनवास तक सीमित रहती थी. श्री एस. वी. राम ने घोषित किया—''चार हजार साल पहले बनी राम कहानी के विषय में ऐतिहासिक आधारों को उपलब्ध करना बडा मुश्किल

काम हैं तो भी राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से इसका समग्र अनुशीलन करना आवश्यक है. पांडवों से सबंधित कथा तो एक ही प्रकार से है किन्तु राम कथा एक ही प्रकार से नही है इतना ही नही, राम कथा को पूर्वी प्रदेशों में लिखने के पहले ही पश्चिम एशिया में खासकर, ईरान में राम कथा रची गयी फिर भी इन सब कथाओं में भारत देश में रचित राम कथा सबसे महान है."

ऐसा न होकर रामायण महाकाव्य त्रेतायुग में ही अर्थात् नौ लाख साल पहले ही—वाल्मीकि महर्षि ने लिखा होता, तो क्या वह बात पाणिनि या पतजलि को मालूम नही हुई होती? यदि उन्हें इसका पता था तो उन्होंने राम का नाम क्यों नही लिया? सोवियत सघ की सिरदर्या और अमूदर्या नदियों के तटों पर डॉन और नीपर नदियों के तटों पर फैले हुए आर्यों को अथवा जर्मनी में रहने वाले आर्यों को हाल ही तक रामायण का नाम भी मालूम न होने का कारण क्या है?

यह बात सच है कि जिस राम कथा को वाल्मीकि ने खुद सुना उसको एक महाकाव्य का रूप उसने दिया इसीलिए उपर्युक्त प्रश्नों का कोई उत्तर नही मिल रहा है चाहे कोई कितना ही घुमा-फिरा कर बतावे, चाहे कोई कितनी अभूत कल्पनाए जोड दे, तो भी वाल्मीकि की स्वय कही हुई इस बात को कोई इन्कार नही कर सकते कि यह रामायण महाख्यान इक्ष्वाकु राज वश में उत्पन्न कथा के रूप में विश्रुत है

आर्य, दानव, राक्षस आदि जातियों के बीच में जो झगडे चले, उनको ध्यान में रखकर वाल्मीकि महर्षि ने राम-रावण युद्ध का वर्णन किया रामायण में वानरों का एक विशेष स्थान है श्रीराम के साथ समझौता करके, अपने भाई वालि को जिस सुग्रीव ने मरवा डाला उसके नेतृत्व में सारे वानर श्रीराम का सहारा बनकर खडे हुए बन्दरों का युद्ध करना, अपनी पूछ में लपेट कर पहाडों को उखाड़ कर शत्रुओं पर फेकना, समुद्रों को लाघना जैसी कल्पनाए विश्वास कर सकने योग्य नहीं हैं तो भी वानरों का राम का सहारा बनना और विभीषण का अपने भाई के प्रति विद्रोह करके स्वार्थ बुद्धि से राम के पक्ष में पहुच जाना तत्कालीन परिस्थितियों को प्रकट करता है ये घटनाए यह सिद्ध करती हैं कि आर्य तथा आर्येतर जातियों के बीच में जो सघर्ष हुए उनमें कुछ आर्येतर लोगों ने अपने पक्ष के विरुद्ध विद्रोह करके आर्यों के साथ हाथ मिलाये

यदि ऐसे अनेक विभीषण आर्यों के पक्ष मे न मिलते तो दानव, राक्षस इत्यादि जातियों को जीतकर सिन्धु सभ्यता के केन्द्र बने हुए प्रान्तों को हस्तगत करना आर्यों के लिए सभव नही होता

सिन्धु घाटी सभ्यता

जब आर्य पशुचारण करते-करते पचनद (सिन्धु नदी के ऊपरी) प्रान्त में पहुचे, हड़प्पा तथा मोहनजोदडो में नगर सभ्यता उच्च दशा में

थी सिन्धु घाटी सभ्यता के नाम से प्रसिद्ध सभ्यता यही थी. इस पुरातन सभ्यता को कुल विद्वानों ने मिस्री, बेबीलोनी तथा सुमरी सभ्यताओं के समकक्ष कहा तो कुछ ने उनसे भी ऊंची कहकर इसकी प्रशंसा की

मोहनजोदड़ो और हड़प्पा में कई खुदाइयां हुईं. उनमें किले की चारदीवारियां, बहुमंजिले भवन, पक्की सडकें, गन्दे पानी की नालियां, पीने के पानी के नल, स्नानागार, धान्यागार, रंग-बिरंगे मिट्टी के घड़े, ताम्रपत्र, कासे के औजार, हथियार और आभूषण, हजार मुहरें, लगभग चार सौ वर्ण संकेतों से युक्त चित्रलिपि आदि प्राप्त हुए अयोध्या और हस्तिनापुर की खुदाइयों में मिट्टी के बर्तनों के सिवा वैसी कोई चीजें बाहर नहीं निकलीं. अत: यह स्पष्ट रूप से प्रकट हो गया कि सिन्धु घाटी सभ्यता आर्यों की नहीं थी फिर यह सभ्यता किसकी थी ?

सिन्धु घाटी की इन खुदाइयों में पाषाण युग के औजारों के साथ कृषि विकास के लिए आवश्यक उपकरण, और फसलों की खलिहानें भी बहिर्गत हुए. व्यापार-वाणिज्यों के लिए आवश्यक साधन भी यहा उपलब्ध हुए. इसलिए कहा जा सकता है कि इस सभ्यता को ऐसी उन्नत दशा में पहुचने के लिए कई हजार साल लगे होंगे किन्तु इसे किसी एक जाति की प्रजा की सभ्यता नहीं कह सकते. कई जातियों के लोगों ने उस सिन्धु घाटी सभ्यता के विकास में अपना योगदान प्रस्तुत किया होगा पाषाण युग के स्थानीय निवासियों से लेकर आर्यों तक कई जातियों की जनता का यहा निवास करना और अनेक कारणों से उनका वहा से अन्य प्रान्तों में चला जाना घटित हुआ होगा

तो भी हरान तथा मकदेवन ने उद्घोषित किया कि यह द्रविडों की ही सभ्यता है किन्तु एन बी राय का कथन है कि इस विषय में अभी अन्तिम निर्णय होना बाकी है

प्रो. के श्रीनिवास राघवन का वक्तव्य है—"द्रविड" शब्द प्राचीन संस्कृत वाड्मय में अथवा तमिल वाड्मय में दृष्टिगत नहीं होता ई सन् ५वीं सदी तक संस्कृत एव प्राकृत भाषाओं के साथ तमिल भाषा भी ब्राह्मी लिपि में लिखी गयी.

आचार्य के. लक्ष्मीरंजन ने अपने वक्तव्य में कहा कि कुछ समय तक तमिलों ने वेंगी लिपि (तेलुगु-कन्नड़ लिपि) का प्रयोग किया वेंगी लिपि चालुक्य राजाओं के जमाने में बनी. ऐसी हालत में यह कैसे कहा जा सकता है कि मोहनजोदडो तथा हड़प्पा की खुदाइयों में बहिर्गत चित्रलिपि द्रविड़ों की थी ? यदि चित्रलिपि उनकी न थी तो यह कहना अनिवार्य होगा कि सिन्धु घाटी सभ्यता द्रविडों की नहीं थी.

किन्तु यह बात सच है कि उत्तर से दक्षिण की ओर जो जातिया निकल आयीं, उनमें कुछ कबीलों की प्रजा द्राविड़ नाम की थी. कहते हैं कि दक्षिण दिशा की ओर जाने वाले लोगों को आर्यों ने "द्रविड़" कह कर संबोधन किया.

आचार्य खडवल्लि लक्ष्मी रंजन ने अपने "आन्ध्रों का इतिहास तथा

उनकी संस्कृति" नामक ग्रन्थ में लिखा—"तेन-अगु=तेनगु शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार दक्षिण दिशा में स्थित प्रजा अथवा दक्षिण-अभिमुखी होकर विचरने वाले ही "तेनगु" लोग हैं. भाषा विज्ञानियों का कहना है कि तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयालम और तुलु भाषायें द्राविड़ भाषा परिवार की हैं. इसलिए यह कह सकते हैं कि चाहे किसी भी कारण से हो उत्तर से दक्षिण की ओर निकलकर आये हुए लोग ही द्राविड़ थे. हां, यह भी कह सकते हैं कि जिन लोगों ने सिन्धु घाटी की सभ्यता के विकसित होने तथा विस्तृत होने के लिए अपना योगदान दिया, उनमें द्राविड़ भी थे. पर यह नहीं कह सकते कि सारी की सारी सिन्धु घाटी सभ्यता द्राविडों की थी

सिन्धु घाटी की सभ्यता सिर्फ हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो तक सीमित नहीं थी. उनके पूर्वी तथा दक्षिणी प्रान्तों में भी इस सभ्यता से संबंधित अवशेष दृष्टिगत हुए ये उत्तर में कश्मीर प्रान्त प्रान्त में भी मिले दिखायी पड़े, इसलिए कुछ अन्य शोधकर्ताओं का मत है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता में असुर, दानव, राक्षस आदि जातियों का भी पात्र है.

सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्री एस बी राय ने घोषणा की—"हड़प्पा राज्य दो सन्निकट सांस्कृतिक संबधों से युक्त हो सकता है उत्तर भाग की दानव संस्कृति का केन्द्र हड़प्पा, तो दक्षिण के दानव राज्य केन्द्र की राजधानी मोहंजोदड़ो रही होगी इन दोनों राज्यों की जनता ने शिव-पशुपति तथा आदिशक्ति की आराधना की थी"

शायद इसी कारण से वेदकाल के आर्यों ने अपने शत्रुओं के रूप में असुर और राक्षस जातियों के नाम लिये होंगे फिर भी उन्हीं लोगों के साथ उन्होंने सगे-संबध जोड़ लिये थे रावण, कुंभकर्ण, खर, दूषण आदि के अतिरिक्त अनेक अन्य असुरों को आर्यों के जीवन की कहानियों के साथ, ययाति और शर्मिष्ठा का संबध, भीमसेन और हिडिंबा का संबध, प्रभावति और उषा नामक असुर कन्याओं से प्रद्युक्त तथा अनिरुद्ध का विवाह कर लेना इत्यादि की कहानियां भी ध्यान देने योग्य हैं अतएव यह कह सकते हैं कि सिन्धु घाटी की सभ्यता के केन्द्र स्थानों में जातियों के तथा पंचनद प्रदेशों में आर्यों के रहने से इनके बीच में युद्ध और विवाह संबध दोनों भी हुए

ध्यान देने की दूसरी बात यह है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता केवल कृषि पर अवलंबित होकर विकसित नहीं हुई इन प्रदेशों में रहने वाले लोगों के अन्य देशियों के साथ बने व्यापारिक संबधों के कारण इनकी सभ्यता की उन्नति हुई.

खुर्शीद हसन शेख, शरूयद अश्फाक नामक दो पाकिस्तानी पुरातत्व-विदों ने "यूनेस्को" द्वारा प्रकाशित एक ग्रन्थ में लिखा—"सिन्धु घाटी में दौड़ती-कूदती फैली हुई कपास की फसल ही मोहंजोदड़ो की सभ्यता की मूल है. कपास के सूत से बने कपड़ों की ईरान और मेसोपोटामिया से मांग बढ़ने के कारण कपास की खेती बलूचिस्तान से सिन्धु घाटी में

फैली इसके फलस्वरूप हडप्पा तथा मोहजोंदडों की सभ्यताओं का मेल-मिलाप हुआ मेसोपोटेमिया में मिले व्यापार सबधी शिलालेखों में लिखा गया है कि मेल्लूहा से सामग्री का आयात हुआ. यह मेल्लूहा सिन्धु घाटी के कपास के व्यापक क्षेत्र के सिवा और कुछ नहीं है."

इस प्रकार विस्तृत बनी सिन्धु घाटी सभ्यता के निलय बने कुछ प्रान्तों को यद्द्यपि आर्यों ने जीता, तथापि यह कहने के लायक प्रमाण नहीं मिले कि उन्होंने मोहजोंदडों और हडप्पा को जीतकर, नष्ट किया. किन्तु यह निर्णय करने के अनुकूल कई सबूत मिले कि सिन्धु नदी की बाढों से फसलों के—खासकर कपास की फसल के—नष्ट होने से असुर जाति सहित कई समूह मोहंजोदडो प्रदेश से दूसरे प्रान्तों में चले गये इसलिए कहा जा सकता है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता के केन्द्र प्रदेशों से दक्षिण की ओर गये हुए आर्यतर जातियों को "द्रविद" कहकर आर्यों ने सबोधन किया और कालक्रम से वही "द्रविद" शब्द "द्रविड" के रूप में परिवर्तित हुआ होगा इसी प्रकार दक्षिण की ओर अभिमुख होकर फैले हुए लोगों को "तेलुगु" नाम दिया गया होगा

यद्द्यपि सिन्धु घाटी सभ्यता आखों से ओझल हो गयी, तथापि उससे सबधित जानकारी तो कुछ हद तक वैदिक वाङ्मय में उपलब्ध है

श्री के दामोदरन ने लिखा—"इन लोगों के शरीर का रंग काला था इनकी नाके चपटी थी आज से चार हजार साल पहले ही इनके अच्छे मजबूत किले, और विशाल नगर थे खेती की उपजाऊ जमीनें थी धनी व्यापारी थे खेती करना, सूत कातना, कपडे बुनना, मिट्टी के घड़े, ताबे के बर्तन, चादी-सोने के गहने बनाना इनको अच्छी तरह मालूम था इन सब बातों का उल्लेख वैदिक वाङ्मय में पाया जाता है."

प्रश्न है कि आर्यों ने इस अत्यत विकसित जाति पर किस प्रकार विजय प्राप्त की ?

आर्य लोग धनुर्विद्द्या में अत्यत निपुण थे शिरस्त्राण, कवच, लोहे की तलवारें जैसे हथियार उनके पास थे घोड़े और रथ भी उनके यहा थे.

जहा सिन्धु घाटी सभ्यता विकसित हुई, वहा रहने वाले आर्यतर जातियों के लोग कुशल तीरन्दाज नहीं थे लोहे के बने हथियार भी उनके यहा उतने ज्यादा नही थे. तब तक उन्हें अभी लोहे की खाने खोदकर लोहा बाहर निकालना और उसे पिघला कर साचे में ढालना ठीक तरह से मालूम न था इसके अतिरिक्त कितने ही विद्रोही विभीषणों ने उनके पक्ष में से निकलकर आर्यों के साथ हाथ मिलाये सारी वानर जाति आर्यों के पक्ष में खड़ी हो गयी. एक ओर सिन्धु नदी की घाटी की मुसीबतों का सामना करते हुए दूसरी ओर आर्यों के हमलों का मुकाबला करने की स्थिति में वे फस गये, उनकी धन-दौलत और विविध सपत्तिया उनकी आपसी फूट का मूल कारण बन गयी इसीलिए उन्हें

आर्यों के सामने झुकना पड़ा. तो भी उनकी संस्कृति को अपनाना आर्यों के लिए अनिवार्य हो गया.

वैभव-विलास एवं सुख-सुविधाओं से संपन्न रोम साम्राज्य लगातार तीन सौ साल तक जर्मन कबीलों के विद्रोह और हमलों का युद्ध और प्राकृतिक शक्तियों के तीव्र प्रकोप का शिकार होकर सिन्धु घाटी की सभ्यता के प्रमुख नगर उजड़ गये सिर्फ उनके खंडहर बचे हैं.

उस समय असुर, दानव, राक्षस आदि जातियों के लोगों के आर्यों के साथ घमासान युद्ध होते थे. इस कारण आर्यों ने उनको विकृत एवं भयंकर आकृति वालों के रूप में चित्रित किया तो भी वे सत्य को छिपा नहीं पाये अभेद्य किले और नगर वाले त्रिपुरासुर, रावण एवं बलि-चक्रवर्ती, तत्वज्ञ विरोचन तथा प्रह्लाद इत्यादि सब असुर, दानव, राक्षस जातियों के ही थे न ? क्या शुक्राचार्य दानव गुरु नहीं थे ? पुराणों में लिखा गया कि कश्यप ब्रह्मा से असुरों के पैदा होने के पश्चात् ही सुर पैदा हुए

तो फिर वह स्वर्णलंका अब कहां है ? श्री एस. बी राय ने एक लेख में लिखा—'सिन्धु नदी और नारारूप के बीच में मोहंजोदड़ो एक लंका की तरह थी ऐसे कुछ पुरावस्तु एवं साहित्य संबंधी प्रमाण प्राप्त हैं जिनके आधार पर सिद्ध किया जा सकता है कि मोहंजोदड़ो नगर ही रावण की स्वर्णलंका थी ''

यह बताने वाली एक कहानी है कि रेवा नदी के तट पर जो युद्ध हुआ, उस में कार्तवीर्यार्जुन ने रावण को बन्दी बनाया था और उस को खूब मरम्मत करके उसे छोड दिया. मध्य प्रदेश में रावणासुर का मन्दिर है रावणासुर की मूर्तियां तमिलनाडु में मौजूद हैं डा सकालिया, डा. पुसालकर आदि जैसे प्रमुख विद्वानों का मत है कि विन्ध्य के उत्तर में स्थित छोटानागपुर प्रदेश में अथवा उसके आसपास किसी दूसरी जगह पर रावण की स्वर्ण-लंका विद्यमान रही होगी

अतएव यह कहा जा सकता है कि रावण की लंका श्रीलंका नहीं है, हड़प्पा की सभ्यता जहां व्याप्त हुई, वहां के किन्हीं स्थानों में वह उपस्थित थी. हम यूं समझ सकते हैं कि जब दानव, राक्षस आदि जातियों पर आर्यों का आधिपत्य जमा था, तब रामकथा में युद्ध की घटनाओं को जोड़कर वाल्मीकि महर्षि ने रामायण महाकाव्य का प्रणयन किया

महाभारत

रामायण की कथा से भिन्न है, महाभारत की कथा. रामायण का मूल त्याग है, तो महाभारत का मूल है स्वार्थ और राज्य का लोभ. राम कथा ने रक्तसबध का महत्व माना सजय द्वारा कथित युद्ध गाथा ने उसका तिरस्कार किया जब पशुगण की वृद्धि हुई और कृषि का आरम्भ हुआ तब निकली थी रामकथा जब खेती का विकास और नागर-सभ्यता का प्रारम्भ हुआ, तब प्रकट हुई थी महाभारत की कथा अतएव इनके दृष्टि-कोण तथा उद्देश्य अलग-अलग हैं.

जिस समय आर्य असुर, राक्षस आदि जातियों से लड रहे थे, तब उनमें बडी एकता थी रक्तसबध का महत्व था एक गोत्र के सभी लोग अपनी सारी गायों को एक ही जगह पर चराते थे अगर दूसरों से लडना पडा तो बारी-बारी से एक गोत्र के लोगों की मदद में दूसरे सब गोत्रों के लोग आकर लड़ते थे. यह एकता सिर्फ यहीं पर नहीं थी बल्कि पशुगण का पालन करने की दशा में रहने वाले सभी देशों में होती थी यूनान म रक्तसबध का जो महत्व था उसका वर्णन होमर महाकवि ने अपने काव्य में किया

होमर के काव्य में लिखा है कि ट्राजन युद्ध में सेनाओं का कबीलेवार और गणवार विभाजन करो ऐसा करने से कबीलों और गणों के लोग आपस में मिलजुल कर शत्रुओं से युद्ध करेंगे कबीले का एक गण दूसरे गण का सहारा बनेगा.

इतना महत्व रखने वाले रक्तसबध का कालान्तर में राज्य लोभ ने तिरस्कार कर दिया. जब अर्जुन ने गण धर्म की बात उठायी, तब कृष्ण ने क्षात्रधर्म की शिक्षा दी कृष्ण ने कहा कि चाहे पिता हो, या गुरु हो, किसी का भी ख्याल किये बिना, जो कोई तुम्हारे आड़े आये, उसे तुम खतम कर डालो.

कार्ल मार्क्स ने कहा—"जैसे-जैसे जमाना बदलता जाएगा वैसे-वैसे रक्त सबध बरफ-सा घनीभूत हो जाएगा किन्तु जब-जब समाज में प्रधान परि-वर्तन होंगे, तब-तब तो वह जरा-सा पिघलेगा."

हा ! ठीक वैसे ही हुआ जगली दशा में यदि मानव गणों तथा कबीलों के रूप में मिलजुल कर नहीं जीते तो उनका अस्तित्व ही असंभव हो जाता. इसी कारण से तब रक्त संबंध ने उतनी महत्ता प्राप्त की पशुगण पालन की दशा में भी वही स्थिति जारी रही. किन्तु कृषि-दशा में आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन होने से संपत्ति की वृद्धि हुई. इसके फलस्वरूप

समाज में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ रक्त संबध का प्राधान्य घट गया. इसका विवरण देते हुए कि यह परिवर्तन कैसे हुआ, एंगेल्स ने लिखा है

"जब से मानव ने कच्चा लोहा पिघलाकर ढालने की कला सीखी, तब से असभ्यता युग के बाद की दशा आरम्भ हुई मानव समाज के विकास क्रम में तब तक बीती हुई दशाओं में जो उत्पादन हुआ, उससे असभ्य दशा के बाद की दशा में किया गया उत्पादन कई गुना अधिक था. उस युग के यूनानी, रामनगर के निर्माण काल के पहले के इटालियन, टासि-टस के काल के जर्मन, तथा वैकिंग के समय के नार्सिमन जैसे लोग इसी दशा के थे."

"होमर के गीतों में—खास कर इलियड महाकाव्य में—हमें दृष्टिगत होता है कि असभ्य दशा के बाद की दशा बहुत ही उच्च स्थिति में थी उस समय तक लोहे के औजारों का अत्यधिक विकास हुआ लुहार की धौंकनी, हस्त-कला, कुम्हार का चाक इत्यादि का आविष्कार हुआ. तैल निकालना भी उस जमाने के लोगों ने सीख लिया लोहे का उद्योग एक कला के रूप में विकसित हो रहा था गाड़ी और रथ भी बन गये लकड़ी के तख्तों तथा पेड़ के तनों से जहाज निर्मित हुए पड़ोसी देशों से ही नहीं, समुद्रों के पार वाले देशों से भी व्यापार आरम्भ हुआ गृह निर्माण की विद्या भी एक कला के रूप में परिणत हो रही थी बुर्ज और कुम्बजों के साथ किलों का निर्माण होने लगा होमर के काव्य जैसे महाकाव्य तथा पुराण लिखे गये"

इस प्रकार सभी क्षेत्रों में विकास हुआ इस विकास के साथ समाज में वर्ग बने. यूनान के समाज के लोग कुलीन (पंचायत) के प्रमुख तथा (वीर योद्धा) किसान तथा हस्त-कलाकार (दस्तगीर) इन तीनों वर्गों में सगठित हुए इनकी बेगारी करने वाले गुलाम होते थे. ध्यान देने की बात यह है कि इन गुलामों में कुछ आर्य जाति के भी थे

वर्ण व्यवस्था का आरम्भ

यह वर्ण विभाजन यहा तक न रुका आर्यो से हारी हुए आर्येतर जातियों के साथ, वैदिक कर्मानुष्ठान न करने वाले आर्यो को भी शूद्र वर्ण में शामिल किया गया. कहा गया कि इन शूद्र वर्ण के लोगों को अग्र वर्णो के लोगों के समान जीने तथा शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नही है. ऐसे दण्ड निर्णय करने वाले धर्म-सूत्रों का निर्माण किया गया कि शूद्र यदि तपस्या करे तो उसका सिर काट दिया जाना चाहिए, वेद-पाठ सुने तो सीसा पिघलाकर उसके कान में डाल दिया जाना चाहिए और वेद-पाठ करे तो जीभ काट दी जानी चाहिए ऐसी कहानिया लिखी गयीं कि अग्र वर्ण वाले की सेवा करे, तो बस, शूद्रों को मुक्ति मिल जाती है. यह कैसा

अन्याय है? पूछने वालों की जबान बन्द करने के लिए पुरुषसूक्त की रचना की गयी—

"ब्राह्मणोस्यमुख मासीत् बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरुतदस्य यद्वैस्यः पद्भ्या शूद्रो अजायत ॥

इस ऋचा के साथ "पुरुषसूक्त" को ऋग्वेद में जोड़ा गया यह कहकर वर्णाश्रम धर्म जनता के सिर पर मढ़ दिया गया "वेद ब्रह्मा के मुख से निकला, अतः कोई उसका तिरस्कार नहीं कर सकते" फिर भी क्या सच्चाई छिप सकती है?

श्री मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री ने अपने वैदिक वाङमय के इतिहास में लिखा—"ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि की वर्ण व्यवस्था ऋग्वेद काल के अंतिम भाग में बनी, न कि आरम्भ काल में—कहकर इतिहासकारों ने जो कल्पना की वह समुचित ही मालूम होती है" उनका यह कथन ध्यान देने योग्य है

पुरुषसूक्त के निर्माता वैदिक पुरोहित यदि यह कहकर डींग मारते थे कि हम ब्रह्मज्ञानी हैं, ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न ब्राह्मण हैं तथा देवों से भी समुन्नत हैं तो हाथ में तलवार लेकर लड़ने वाले क्षत्रिय योद्धा अपनी छाती ठोंककर कहते थे कि हम क्षत्रिय हैं, हमने सुर-असुर युद्धों में सुरों के पक्ष में डटकर असुरों को पराजित किया इस प्रकार कहते हुए वे लोग सामान्य जनता को अपने दास-दासियों के रूप में इस्तेमाल कर लेते थे

तब तक कृषि तथा गोपालन करने वाले वैश्य धीरे-धीरे वे काम छोड़कर लाभदायक व्यापार में लग गये अतः खेतीबारी करना, पशु-पालन करना और उनका फल उच्च वर्णवालों को सौंप देना शूद्रों का कर्तव्य बन गया अगर शूद्र उस कर्तव्य का पालन न करते तो क्षत्रिय कार्यक्षेत्र में उतरकर उनकी चमड़ी उधेड़ देते थे

एक ओर उच्च वर्णों के आर्य सामान्य जनता का शोषण करते थे तो कुछ कबीलों के लोग लूट-मार करते थे आंध्र, पुण्ड्र, पुलिंद, शबर और मूतिब दस्युओं (चोर-लुटेरों) में अधिक प्रमुख हैं इस सम्बन्ध में ऐतरेय ब्राह्मण में जो उल्लिखित है, वह ध्यान देने योग्य है

इन परिस्थितियों में कुछ क्षत्रिय वंश शक्तिसंपन्न बन गये. उनके मुकाबले में कोई ठहर न सकते थे उन्होंने रथ, गज तुरग दलों के साथ पैदल सिपाहियों के रूप में इन शूद्रों को भर्ती करके चढ़ाइयां करने के लिए तैयार होते थे और आर्य, आर्येतर का भेद किये बिना सबको लूटते थे संपत्ति का अपहरण करने के साथ वे कन्याओं का भी अपहरण करते थे इतना ही नहीं, दूसरे प्रकार की वैवाहिक पद्धतियों की अपेक्षा कन्याओं का अपहरण करके किये जाने वाले विवाह (राक्षस विवाह) की पद्धति को उत्तम कहकर प्रशंसा करते थे दूसरों पर हमले करना क्षत्रिय धर्म के रूप में वर्णित होता था (इन चढ़ाइयों तथा राक्षस विवाहों से संबंधित कितनी ही कहानियां महाभारत और भागवत ग्रंथों में प्रस्तुत हैं)

गणतंत्रों की व्यवस्था तथा शासकों का चुनाव

इस प्रकार मनमाने ढंग से चलने वाली लूट-मारों तथा हमलों से बचने के लिए सगे-संबंध और दोस्ती रखने वाले सभी कबीले एक साथ जुड़ गये. अतः उन कबीलों के अधीनस्थ सारे प्रांत एक ही सामूहिक सरकार के शासन में एकत्रित हुए. अपनी सुरक्षा के साथ विविध वस्तुओं का उत्पादन, और उनकी अदली-बदली करना जैसे सभी काम वे स्वयं करने के लिए समर्थ हुए. इस मेल-जोल से संबंधित जानकारी महाभारत तथा भागवत में कहानियों के रूप में प्राप्त होती है.

उन कहानियों का विस्तृत विवेचन करके देखने से पता लगता है कि यदु, वृष्णि, भोज, कुकुर, अंधक, तथा केकय वंशों के लोग मिल-कर एकता से रहे. उग्रसेन उनके समूह का अधिपति था. कृष्ण, बलराम, सात्यकि, कृतवर्मा जैसे वीर उन वंशों के नेता थे. जब उग्रसेन के पुत्र कंस ने सैनिक अधिनायक तथा दुराचारी के रूप में व्यवहार किया, तब वसुदेव के पुत्र वासुदेव ने उसका वध किया. फिर भी यादवों ने राज्य-सत्ता को अपने हस्तगत नहीं किया. वासुदेव ने फिर से उग्रसेन को ही अधिपति के रूप में नियुक्त किया और सबके बीच में एकता साधी. उसके उपरांत उन्होंने कई शत्रुओं पर विजय प्राप्त की.

किन्तु कुरु-पाण्डव युद्ध में जिसने जिसके पक्ष में शामिल होना चाहा, वह उसके दल में जा मिला. सात्यकि के नेतृत्व में वृष्णि वीर पांडवों के पक्ष में लड़े तो कृतवर्मा के नेतृत्व में भोजों ने कौरवों की तरफ से युद्ध किया. वासुदेव ने पांडवों की जिम्मेदारी सम्हाली, किन्तु दुर्योधन आदि कौरवों का प्रेमी बलराम तीर्थयात्रा करने चला गया. केकय आधे उस तरफ, आधे इस तरफ बंट गये. महाभारत में स्पष्ट लिखा है कि महाभारत युद्ध की समाप्ति के थोड़े दिन बाद ही यादव कुल में मूसल (फूट) पैदा हुआ. यदु, वृष्णि, कांभोज इत्यादि सभी लोगों ने प्रतिस्पर्धी बनकर एक दूसरे का वध किया.

समाज विकास के क्रम में, किसी एक दशा में ऐसे कुछ गणतंत्रों के बनने तथा अपने गणमुख्यों को चुनने की जो घटना हुई, उसका ठीक पता न लगने का कारण हमारे विद्वानों की लिखी हुई रचनाएं ही हैं. उस दशा के इतिहास की जानकारी देने वाली कथाएं या गाथाएं हमें उप-लब्ध नहीं हैं. यदि हम पुराणों को देखें तो वे शापों और वरदानों की अभूत कल्पनाओं से भरे हैं.

आंध्र प्रदेश में आज एक खास कुल के सभी व्यक्ति राजा ही कहलाते हैं. इसी प्रकार उपर्युक्त सभी लोग उस जमाने में राजा ही थे. किन्तु उनमें कोई भी चंद्रगुप्त, समुद्रगुप्त जैसे सर्वतंत्र-स्वतंत्र राजा नहीं थे. एकच्छत्र अधिपति बनकर उन्होंने राज्य-शासन भी नहीं किया. यह कहने के लिए निम्नलिखित उदाहरण पर्याप्त हैं.

बहुश्री मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री ने लिखा—"ऋग्वेद का 'राजा'

शब्द—केवल दशममंडल की एक ऋचा में छोड़कर—दूसरे सारे मंडलों में सिर्फ गणतंत्र शासक, कुल प्रमुख, अथवा प्रभु का अर्थ ही प्रकट करता है"

महाभारत में यह बात स्पष्ट है—"कुलीन, शौर्यसपन्न और अधिक सेना का अधिपति ये तीनों प्रकार के व्यक्ति इस भूतल में राजा के नाम से विख्यात होने के लिए योग्य हैं." इसलिए यह कह सकते हैं कि महाभारत काल में जो क्षत्रिय कुल में पैदा हुए जो वीर तथा सेनापति थे, वे राजा के नाम से पुकारे गये. अब चुनाव की बात देखें

अपने राजा को चुनकर उस राजा की विजय प्राप्ति के लिए प्रजा ने जो प्रार्थना की वह अथर्व वेद में लिखी है. (अथर्व.-३-४) उस तरह चुनने की रीति उस समय में थी, इसी कारण से यह कहानी कही गयी कि देवों ने नहुष को अपना राजा चुना

अत. हम कह सकते हैं कि उस जमाने के राजा सिर्फ कुल प्रमुख, गण शासक अथवा सेनानायक ही थे और जनता उन्हें चुनती थी इनके साथ क्षत्रिय वर्ण के लोगों के भी अपने को राजा कहकर मूछों पर ताव देने से असली तथ्य आखों से ओझल हो गया

चद्रगुप्त मौर्य के दरबार में यूनानी राजदूत मैंगास्थनीज ने जो लिखा उसके अनुसार मालूम होता है कि आध्रों के एक लाख पैदल सिपाही, दो हजार अश्वों की सेना, हजार हाथी और चारों ओर चहार दीवारवाले तीस नगर थे. फिर भी यह विदित नही होता कि तब का राजा कौन था ? यदि सर्वसम्पूर्ण अधिकारों से सम्पन्न कोई राजा होता तो मेगास्थनीज उसका नाम नहीं लिखता ? इसके अलावा हमें ऐसे कुछ ऐतिहासिक प्रमाण मिलते हैं कि चद्रगुप्त ने कुछ गणतत्रों को जीता ?

इसमें कोई शक नहीं है कि अशोक के शासनकाल में मगध के बाद गिनने लायक राज्य आध्रों का राज्य ही था तो भी इसका पता नहीं लगता कि तब आध्रों का राजा कौन था ? इसके प्रबल प्रमाण हैं कि अशोक ने बडी मुश्किल से कलिंग राज्य जीता परन्तु यह कही नही दिखायी देता कि तब कलिंग का राजा कौन था ?

अत यह कह सकते हैं कि उस दशा में कई नेताओं से युक्त उच्च पदाधिकारियों के समुदाय के शासन में कलिंग तथा आध्र राज्य थे उसके पश्चात स्वल्पकाल में ही कलिंग तथा आध्र में श्रीमुख सातवाहन के सर्वतंत्र-स्वतत्र शासको के रूप में सिहासन पर अधिष्ठित होने का पता लगता है.

इस प्रकार सम्पूर्ण स्वतत्र सत्ता वाले शासकों का शासन शुरू होते ही पचायत शासन पद्धति पूर्ण रूप से नष्ट हो गयी राजपद तथा अन्य पद उनके वशानुगत अधिकारो के रूप मे परिणत हो गये यूनान, इटली आदि देशों में राजपद मौरूसी हक के रूप में कैसे परिणत हो गया, इसका विवरण देते हुए एगेल्स ने इस प्रकार लिखा—"असभ्यता-युग के बाद की दशा में कई कबीले छोटे गणतत्रों (कान्फेडरेशनों) के रूप में बने भिन्न-भिन्न कबीलों की जमीनो के मिल जाने से वह सारा प्रदेश

एक ही जाति के देश के रूप में मान्यता प्राप्त कर सका. उसकी सुरक्षा के लिए सेनापति आवश्यक समझे गये."

"सेनानायक, उसके ऊपर परिषद (कौंसिल), उसके ऊपर प्रजा सभा (या लोक सभा) ये ही उस समय की गण व्यवस्था के शासन के अंग थे ये क्रमश: सैनिक प्रजातंत्रों के रूप में परिणत हुए. सेना तथा युद्ध की तैयारियां, जाति के जीवन के प्रधान अंग बने संपत्ति का संग्रह करना ही जिनके लिए अपने जीवन का परम ध्येय होता है उनको अपने पड़ोसी की संपत्ति देखने की जलन होती है. पुरुषार्थ रहित असभ्य लोग मेहनत करके कमाने की अपेक्षा लूट-मार करके संपन्न बनना सुलभ तथा सम्मानप्रद समझते हैं. इस प्रवृत्ति के कारण, उसके पहले आत्मरक्षा के लिए अथवा अपने कबीले की बढ़ी हुई जनसंख्या के वास्ते नयी जगहों की जरूरत पड़ने पर उनकी प्राप्ति के लिए जो युद्ध किये गये, वे एक धंधे के रूप में परिणत हुए केवल लूट-मार के लिए ही युद्ध हुए. किलों की सुरक्षा के लिए नगर बने किले की चहारदिवारी की बुनियादों के लिए खोदी गयी खंदकों में गण-व्यवस्था की समाधि बन गयी किले की दीवारों पर जो बुर्जियाँ बनी उन्होंने सभ्यता की सीमाओं को छुआ आंतरिक परिस्थिति भी यही थी लूट मार के लिए किये गये युद्धों में सेनापति तथा उनके अनुयायी सशक्त बने उनका चुनाव करने वाली जनता का हक सिर्फ नाम के वास्ते हो गया. उसके पश्चात कुछ सेनापति राजा बन गये तो कुछ सामंत राजा बन सके"

एंगेल्स ने जिन चढ़ाइयों और युद्ध की तैयारियों के बारे में कहा, वे सब हमारे महाभारत में भी हमें दिखायी देती हैं. चढ़ाइयां चलाना, कन्याओं का अपहरण करना, उत्तर-गोग्रहण दक्षिण-गोग्रहण जैसी बातें उसमें मौजूद हैं खाण्डव वन जलाकर, नागों को भगा देने की घटना भी उसमें वर्णित है राजसूय यज्ञ के नाम पर हमले करके कई जातियों से कर वसूल करने की बात भी उसमें मिलती है निवात, कवच, कालकेयादि दानव जातियों का सर्वनाश किये जाने का उल्लेख उसमें पाया जाता है धर्म-संस्थापना के नाम से कई अधर्म कार्य हुए भागवत आदि पुराणों को पढ़ने से इनकी सीमा नहीं दिखती. असंभव कल्पनाएं, अशाप और वर-दानों के बीच में इन्हें सुंदर रूप में जड़ने के कारण ये ठीक तरह से पहचाने नहीं जा सकते किन्तु इसमें शक नहीं है कि असभ्य दशा के बाद की दशा में यूनान, इटली आदि देशों में जो घटित हुआ वह हमारे देश में भी घटित हुआ

असंभव कल्पना

महाभारत ग्रंथ में लिखा है कि महाभारत युद्ध द्वापर युग में हुआ, अठारह अक्षौहिणियों की सेना उस युद्ध में भूशायी हो गयी और अन्त में केवल पंच पांडवों के अलावा वासुदेव, सात्यकि और कृतवर्मा, अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा युयुत्सु जीवित रहे

यदि महाभारत युद्ध द्वापर युग के अंत में हुआ होता तो उसका समाचार सूत्रकार अश्वलायन और शांखायन के पहले किसी को मालूम न होने का कारण क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता. ब्राह्मण ग्रंथों में कुरुक्षेत्र के यज्ञ-याग आदि की कर्मभूमि के रूप में वर्णित हुआ है, न कि महाभारत की तरह युद्ध क्षेत्र के रूप में. कौरवों के नाम, पाडवों के नाम अथवा द्रोण, कर्ण, धृष्टद्युम्न आदि वीरों के नाम ब्राह्मण ग्रंथों में उपलब्ध नहीं हैं. उनमें कौरव, पांडवों के नामों का कोई उल्लेख नहीं है. किसी एक ब्राह्मण ग्रंथ में अर्जुन का नाम मिलता है, किन्तु उसे इन्द्र का प्रच्छन्न नाम कहा गया है. धृतराष्ट्र का नाम यजुर्वेद में है, एक यज्ञ करने की प्रक्रिया के वर्णन के सिलसिले में वह नाम दिखायी देता है. बौद्धों की जातक कथाओं में विदुर, धनंजय, युधिष्ठिर तथा धृतराष्ट्र के नाम मिलते हैं किन्तु वहा महाभारत का कोई जिक्र नहीं है.

युधिष्ठिर, भीम और विदुर के नाम पाणिनीय ग्रन्थ में हैं, किन्तु वहा भी कुरुक्षेत्र की बात नहीं है. सबसे पहले कुरुक्षेत्र युद्ध का उल्लेख केवल शांखायन के श्रौतसूत्र में मिलता है. उसके उपरात महाभारत की कथा का ई.पू. दूसरी शताब्दी में पतजंलि ने विवरण दिया. उस समय से वह कथा शाखोपशाखाओं में विस्तृत होकर महाभारत ग्रन्थ के रूप में परिणत हुई.

और यदि हम देखें कि इतने विशेष रूप से वर्णित महाभारत युद्ध से सम्बन्धित कोई विश्वसनीय प्रमाण हमारे पुरातत्त्व शास्त्रज्ञों को मिले हैं क्या ? तो नकारात्मक उत्तर ही मिलता है. आर्कियलाजिकल सर्वे आफ इंडिया वालों ने हस्तिनापुर, मथुरा और कुरुक्षेत्र में जो खुदाइया की उनमें यह कहने के लिए कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिले कि तीन हजार साल पहले वहा नगर-सभ्यता थी. पाचाल प्रदेश में कुछ ताम्रपत्रों तथा हस्तिनापुर प्रदेश में कुछ भूरे रंग के मिट्टी के घड़ों के मिलने का पता लगता है. इसी कारण से श्री जगत्पति जोशी ने कहा—"यह कहना सभव नहीं कि ई.पू. नौ सौ साल के आसपास कुरुक्षेत्र युद्ध हुआ". डा० सकालिया ने भी इसी प्रकार का मत प्रकट किया. डा. सरकार ने कहा—"कुरुक्षेत्र का युद्ध केवल अभूत कल्पना है." तो भी क्या वेदपंडित चुप रहेंगे ?

कुछ वेद पंडितों का दावे के साथ कहना है—"वेद व्यास ने जो कहा वह अभूत कल्पना कैसे हो सकती है? भूमि का भार घटाने के लिए अवतरित सुर-असुरों के बीच में चला युद्ध था वह. वे बन्दूकों और तोपों से लड़े नहीं. दिव्य अस्त्र-शस्त्रों को लेकर वे लड़े, अतएव सब कुछ भस्मीभूत हो गया. अब आज के मानव जाकर वहा सबूत ढूंढें तो क्या मिलेंगे?"

यह बताने की कोई खास जरूरत नहीं है कि जिन पर विश्वास कर सकना असभव है, ऐसे अवतारों तथा दिव्य अस्त्रों का सहारा लेकर किया जाने वाला यह तर्क कितना हास्यास्पद है? उत्तर गोग्रहण के अवसर पर जिस अर्जुन ने क्षणमात्र में सारे कौरव वीरों के छक्के छुड़ा दिये, उसको बाद के कुरुक्षेत्र युद्ध में कौरव वीरों को हटाने के लिए अधर्म पद्धतियों का अव-

जन्म लेने पर भी अठारह दिन का समय क्यों आवश्यक हुआ ? यह समझ में नहीं आता

इस प्रकार जो कहानियां अन्योन्य विरुद्ध हैं, वे सब वेद-व्यास के सिर मढ़ दी गयी यह भी कोई निश्चित रूप से कह नहीं पा रहे हैं कि असल में वह वेद-व्यास कौन था फिर भी वैदिक पंडित चुप नहीं रहते

महाभारत में यह बात स्पष्ट है कि दरअसल यह युद्ध राज्य-भाग के लिए हुआ था, वह भी सिर्फ पांच गावों के लिए था संजय से धर्मराज की कही ये बातें ध्यान देने योग्य हैं—"यदि आधा भाग देना दुर्योधन को पसंद नहीं तो हम पांचों पांडवों के बसने के लिए पांच स्थान दिये जायें तो भी बस है." एक ओर जिस महाभारत में दुर्योधन का राजाधिकार कहकर वर्णन किया गया, उसी में उसके गोगण होने का भी जिक्र किया गया घातुक मृगों की शिकार बनने से गायों को बचाने के बहाने से दुर्योधन ने अपने साथियों को लेकर घोष यात्रा की दक्षिण गोग्रहण तथा उत्तर गोग्रहण की कथाएं उन्हीं से सम्बंधित हैं अब फिर गोकुल वासियों के विषय में कहना ही क्या है ? उनकी सारी संपत्ति आंध्र के काअंराजु के गोगण की संपत्ति जैसी ही थी न । इसके अतिरिक्त शास्त्रज्ञों का कथन है कि आज से तीन हजार साल पहले कुरु तथा पांचाल प्रदेशों में कृषि का विकास हुआ ही न था

श्री जगत्पति जोशी ने अपना विचार यों प्रकट किया—"आज से पांच हजार वर्ष पूर्व कुरु तथा पांचाल प्रदेश घने जंगलों से भरे थे ई.पू. नौ सौ साल पहले पशुगणों को चराते हुए एक प्रांत से दूसरे प्रांत में जाने वाले खानाबदोश कबीलों ने थोडी-बहुत खेती-बारी का काम भी वहां शुरू किया इसके सबूत (कार्बन १४ के निर्णय के अनुसार) हमें मिले"

इसलिए यह कहा जा सकता है कि द्वापर युग में अठारह अक्षौहिणियों की सेना के कुरुक्षेत्र संग्राम में भिड़कर पाशुपत, नारायण तथा बृहशर नामक अस्त्रों से युद्ध करने का वर्णन करते हुए जो रचनाएं लिखी गयीं, व सब कवि की कल्पनाएं ही थीं, न कि वास्तविक

तो फिर क्या हम सोचें कि कुरु-पांडव युद्ध असभ्य दशा के युग के मध्य में, पशुगणों का पालन करने की दशा में हुआ था ? किन्तु वह भी ठीक नहीं बनता, क्योंकि चाहे किसी भी प्रदेश में हो, कृषि का विकास जिस दशा में हुआ सिर्फ उसी दशा में नगर निर्माण का आरम्भ हुआ. अत हम यह कैसे कह सकते हैं कि नगर निर्माण के पहले ही कौरव-पांडव युद्ध हुआ ?

पुरावस्तुशास्त्र के अनुसार, ई.पू. नौ साल के समय में कुरु तथा पांचाल प्रांतों में कृषि का प्रारम्भ हुआ इसलिए वहां उसके एक सौ या दो सौ साल बाद कृषि का विकास होने पर हस्तिनापुर और इन्द्रप्रस्थ नगर निर्मित हुए होंगे इस प्रकार शहरी सभ्यता का प्रारम्भ होने के बाद ही कौरव-पांडव युद्ध जैसे युद्ध होने के अनुकूल परिस्थितियां बनती हैं फिर भी कह

सकते हैं कि अगर कौरव-पांडव युद्ध सचमुच हुआ तो वह असभ्यता युग के बाद की दशा में ही हुआ होगा

असभ्यता युग के बाद की दशा में कृषि का विकास हुआ स्थिर निवास स्थान बने जैसे एंगेल्स ने कहा—विविध वस्तुओं का उत्पादन तथा अन्य देशों से व्यापार का प्रारम्भ हुआ अपनी धन-दौलत की सुरक्षा के लिए गावों के चारों ओर चहारदीवारियों का निर्माण किया गया. उन चहार-दीवारियों के मध्य में नगरों का विकास हुआ शस्त्र प्रयोग में सुशिक्षित वीर योद्धाओं की जरूरत पड़ी युद्धव्यूहों की रचना की गयी. व्यूहों के अनुकूल विविध सेनाओं के सचालन के लिए सेनापतियों का चुनाव किया गया प्रजा की सेवा करने की क्षमता रखने वाले प्रमुखों को राजाओं के रूप में नियुक्त कर लिया गया कालक्रम से यह राजपद वंश-परम्परागत अधि-कार के रूप में परिणत हो गया

इस प्रकार बदलती दशा में रक्त सम्बन्ध का महत्व मानने वाले गण-धर्म का तिरस्कार हो गया क्षात्रधर्म के नाम पर सगे-सम्बन्धियों पर भी तलवारें उठायी गयीं स्वार्थ ही सर्व-समर्थ बन गया तब तक घनिष्ठ बना हुआ रक्त सम्बन्ध पिघल गया इस वजह से सगे-सम्बन्धियों के बीच में भी युद्ध हुए इसी परिस्थिति को महाभारत हमें दर्पण में दिखा रहा है यही हमारे लिए आवश्यक तथ्य है

महाभारत की कथा इस दशा से सम्बन्धित है इसीलिए उसने यह संदेश उद्घोषित किया—"राज्य वीर भोज्यं", चाहे कितने ही ज्वार-भाटे आये, तो भी कौरव या पाण्डवों ने राज्य का लोभ नहीं छोड़ा कुरुक्षेत्र युद्ध में दोनों पक्षों के योद्धा अधर्म युद्ध पर उतारू हुए भाई-भाई, बाप-बेटे, गुरु-शिष्य, एक-दूसरे से भिड़े, और एक-दूसरे को मार कर मरे इसी का विवरण उस ग्रन्थ में मिलता है

उस दशा में राज्य-लोभ से युद्ध के लिए तैयार होने के अतिरिक्त उप-जाऊ खेतों के लिए, गायों के लिए, आखिर में कन्याओं के लिए भी हमले किये गये

चाहे किसी भी देश का इतिहास देखें तो भी असभ्यता वाले युग के बाद की दशा में यही परिस्थिति थी अगर हम **ओल्ड टेस्टामेंट** पढ़ें तो राजपद के वंश परम्परागत अधिकार के रूप परिणत होने के लिए रास्ता निकालने वाली परिस्थितियां हमारी आंखों के सामने प्रत्यक्ष होती हैं

इज़ायल का युद्ध

यहोवा के मंदिर में याजक (पुजारी) के रूप में रहने वाले "एली" सज्जन ही थे, किन्तु उसके बेटे दुर्जन थे नैवेद्य को चुपचाप अपने मुंह में डालकर निगल जाते थे. और मंदिर में चढ़ाई गयी भेंटों को अपनी जेब में डाल लेते थे. अगर मौका मिले तो बस, व्यभिचार भी करते थे अतएव जनता ने उनको हटाकर समूयेल को याजक (प्रीस्ट) के रूप में नियुक्त कर दिया.

सम्येल सज्जन था. बुद्धिकुशल न्यायमूर्ति था फिर भी उसके बेटे रिश्वत-खोर थे इस कारण से धार्मिक पदाधिकारियों का गौरव तथा प्रभाव घट गये

उसी समय फिलिस्तीनियों से जो युद्ध हुआ, उसमें इज्रायल के योद्धाओं ने अपना कदम पीछे हटाया इस भय ने उन्हें घेर लिया कि कहीं हम हार न जायें. उन दिनों में पराजय का अर्थ सर्वनाश ही था विजयी पक्ष के लोग हारे हुए पक्ष के लोगों की कन्याओं का अपहरण करके बाकी सबको अनेक नरक यातनाओं के शिकार बनाते थे. नहीं तो गुलामों के रूप में पकड ले जाकर उनसे बेगार करवाते थे. जितना मिले, उतना लूट लेने के बाद गाव और शहरों को जला देते थे. इनके अतिरिक्त डाकुओं के गिरोहों की डकैतियों की झंझट तथा माड़ की सेनाओं के घातक अत्याचारों के मारे बहुत-से कबीले बर्बाद हो गये

अत: इज्रायल की जनता ने निश्चय कर लिया कि जो हमें युद्ध में विजयी बना सके और जो पक्षपात-रहित न्याय की दृष्टि से हमारा शासन कर सके, उसी को हम अपना राजा नियुक्त कर लेंगे इसके लिए सम्येल राजी नहीं हुआ उसने जनता को चेतावनी दी कि चाहे किसी भी व्यक्ति को हम राजा नियुक्त कर लें तो भी जनता को वह जो कुछ मांगे, वह सब कुछ देना पड़ेगा और वह जो कुछ कहे, वह सब कुछ करना पड़ेगा. फिर भी जनता ने उसकी चेतावनी की परवाह नहीं की. इसलिए जनता के दबाव से हार मानकर सम्येल को सॉल का राज्याभिषेक करना पड़ा

उसके पश्चात फिलिस्तीनियों से जो युद्ध हुआ उसमें इज्रायल के लोगों की जीत हुई सॉल की कीर्ति तथा प्रतिष्ठा बढी परन्तु याजक सम्येल के आदर और प्रेम को सॉल ने खो दिया इसके दो कारण हैं

राजा ने एक दिन यहोवा के निमित्त बलिदान समर्पित करने के लिए तैयार होकर सम्येल को निमंत्रित किया परन्तु ठीक समय पर प्रस्तुत हुए बिना सम्येल ने दो दिन का विलंब किया. लाचार होकर सॉल ने बलिदान समर्पण करने की विधि का स्वयं संचालन किया. बाद में आया हुआ सम्येल यह जानकर सॉल पर आग बबूला हो गया. (भागवत में भी लिखा है कि अपने आने तक बिना यज्ञ करने के कारण निमि को वशिष्ट ने शाप दिया ये शाप और कोप राजाओं तथा पुरोहितों के मध्य अधिकार के लिए जो संघर्ष चले, उन्हीं से सम्बन्धित हैं.)

एक बार सम्येल ने सॉल से मिलकर मांग की कि सब अमालेकियों को शिशु, बाल और वृद्धों सहित मार डालो तथा उनकी सारी संपत्ति नष्ट करके, उनके सब शहर और गावों को जला डालो. उसने सॉल को समझाया कि यह मांग मेरी नहीं है, यहोवा ने स्वयं यह आदेश दिया है. तुरन्त सॉल ने अपनी सेनाओं को भेजकर सारे अमालेकियों का कत्लेआम करवा दिया. उसने उनके घर-बार जलवा दिये और फसलों को बर्बाद कराके पशुओं का वध करवा दिया. किन्तु वह उनके राजा को मारे बिना उसे बंदी के रूप में पकड़कर लाया इसके अतिरिक्त भगवान यहोवा को बलि देने के लिए

कुछ गाय के बछड़ों और मोटी-ताजी भेड़ों को भी वह अपने साथ ले आया इससे सम्यूयेल क्रोध के मारे उबल पड़ा उसने सौल की भर्त्सना की कि यहोवा की आज्ञा का ज्यों का त्यों पालन किये बिना शत्रु राजा तथा कुछ बछड़े और भेड़ों को जिंदा छोड़कर तुम यहोवा के गुस्से का शिकार बन गये. बदी के रूप में लाये गये राजा का सिर उसने स्वयं काट दिया. इतने से न रुककर यूदा के वंशज दावीद को उसने गुप्त रूप से राज्याभिषिक्त कर दिया इसके कारण इजायल में सगे-सम्बन्धियों के बीच युद्ध शुरू हो गये. जैसे यहा पर कौरवों के विरुद्ध पांडव उठ खड़े हुए, वैसे ही वहा इजायलियों के खिलाफ यूदा वंशजों ने तलवार उठायी.

दोनों पक्षों के बीच कुछ युद्ध हुआ अत में दावीद की जीत हुई. तो उसे संतोष न हुआ अब्राहम के भाई के वंशज मोयाबियों को तितर-बितर करके और अम्मोनियों को कत्लेआम का शिकार बनाकर उसने उनकी सब जमीनों पर कब्जा कर लिया

जैसे-जैसे दावीद का राज्य बढ़ता गया, वैसे-वैसे उसकी पत्नियों की सख्या भी बढ़ती गयी. अपने दाहिने हाथ की तरह रहकर जिस वीर योद्धा "ऊरिया" ने साथ दिया, उसी की हत्या करवाने के लिए दावीद ने षड्यंत्र रचाया "ऊरिया" के मरते ही उसकी अत्यत सुन्दरी पत्नी "बत्शेब" को बुलवाकर उसे उसने अपनी पत्नी बना लिया इस स्त्री से उत्पन्न पुत्र ही था "सोलमन"

उस समय राज्य-लोभ ने और एक मोड लिया दावीद के पुत्र "अब्सालोम" ने इजायल के योद्धाओं को सगठित करके अपने पिता के खिलाफ बगावत की इसके पहले ही उसने गुप्त रूप से अपने बड़े भाई को मरवा डाला. "अब्सालोम" से भयभीत होकर दावीद अपनी जान बचाने के लिए जगलों में भाग खड़ा हुआ.

जगलों में जा छिपकर दावीद ने वहा सेना इकट्ठी करके अपने पुत्र पर चढ़ाई की उस युद्ध में अब्सालोम की मृत्यु हो गयी अब्सालोम की मृत्यु के बाद राज्य का वारिस बनने योग्य व्यक्ति था, "अदोनिया" मगर राज्य उसे न मिला. दावीद के आदेश के अनुसार सोलमन राजा बना उसके पश्चात थोड़े समय में ही सोलमन ने अदोनिया को मरवा डाला इससे हमें यह स्पष्ट विदित होता है कि राजपद किस प्रकार वंशानुगत अधिकार बना पहले जनता से चुने गये सौल की राज सत्ता याजकों से नियुक्त दावीद के हाथ में पहुंचकर आखिर में मौरूसी हक के रूप में बदल गयी

इसी कारण महाभारत युद्ध और इजायल के युद्ध में कुछ समानताओं का आभास मिलता है यहा जिस प्रकार सगे-संबंधियों के बीच में युद्ध हुआ वैसे ही वहा भी हुआ धर्मराज ने कुछ समय तक धृतराष्ट्र का लाड-प्यार पाया उसी तरह दावीद ने भी सौल का आदर-सम्मान प्राप्त किया कहा जाता है कि जब दुर्योधन गंधर्वों के हाथ में बदी हुआ, तब धर्मराज ने उसे छुड़वाया सौल जब गुफा में दावीद के हाथ लगा, तब उसने सौल को रिहा कर दिया उत्तर-गोग्रहण के युद्ध में जब कौरव

योद्धा बेहोश पड़े थे, जब अर्जुन उनको मारे बिना सिर्फ उनकी पगड़ियां उतार ले चला जब सॉल अपने सेनानियों के साथ गहरी नींद में डूबा पड़ा था, तब दावीद उनका वध किये बिना सिर्फ उसकी बरछी और पानी भरने की चमड़ी की थैली उठा ले गया जिस तरह पाडवों ने कुछ समय तक अज्ञातवास के लिए विराट राजा की शरण ली, उसी तरह दावीद ने भी अपने भाइयों के साथ "गात" राजा के यहा आश्रय लिया अंत में, यहा अरण्यवास कर लौटे धर्मराज को राज्य मिला, तो वहा जगल में निवास करके वापस आये हुए दावीद को राज्याधिकार प्राप्त हुआ

वहा राज्यसत्ता की प्राप्ति के लिए इज़ायल और यूदा के योद्धाओं ने घोर अत्याचार किये, वैसे ही यहा कौरव-पाडव वीरो ने किया भीष्म, द्रोण, कर्ण, दुर्योधन इत्यादि का अधर्म रीति से वध करने में श्रीकृष्ण ने पाडवो की मदद की. आधी रात के समय सोते हुए पाडव पक्ष के वीरों के सिर निष्ठुरता से काटने मे कृपाचार्य तथा कृतवर्मा ने अश्वत्थामा को सहारा दिया

यह है उस जमाने का धर्म इस स्थिति में जिसकी लाठी थी उसी की भैंस थी जो बल सपन्न था, राज्य उसी का था किसी न किसी तरीके से शत्रु को मार डालना चाहिए, यही तब की राजनीति थी इसी-लिए यदि यहा चचेरे भाई कौरव तथा पाडवों ने एक दूसरे का गला काटा तो वहा यूदा वश के भाई-भाई और बाप-बेटे ने एक दूसरे का वध किया इस सिलसिले में इस प्रश्न की गुजाइश ही न थी कि इस प्रकार मारना धर्म है या अधर्म ?

सजय की युद्ध-गाथा

कहते हैं कि जिस कुरुक्षेत्र युद्ध के अठारह दिन तक होने का चित्रण किया गया, उसका सारा ब्यौरा सजय ने धृतराष्ट्र को सुनाया इसीलिए महाभारत की युद्ध-गाथा सजय के नाम पर निकली यही महाभारत का मूल है. इसमें कितनी ही अतिशयोक्तिया तथा अभूत-कल्पनाए पायी जाती है तो भी ध्यान देकर इसका अनुशीलन करे तो पता लगता है कि श्रीकृष्ण मार्गदर्शन में उत्साहित होकर पाडवो ने अधर्म युद्ध किया. पर युद्ध-समापन के दिन की अर्ध-रात्रि में अश्वत्थामा ने पाडव शिविर पर हमला करके जो दारुण काड किया, उसके लिए दुर्योधन की ओर से कोई प्रोत्साहन दिये जाने का पता नही लगाता इसलिए सजय की युद्ध-गाथा को बदलने की चेष्टाए की गयीं. किन्तु सजय जैसे सूत ने जो गाथा सुनायी और दूसरे कुछ सूतों ने जिसे कठस्थ करके जनता के बीच में पहुचाया, उसे बदलना उतना आसान काम नही है.

महाभारत में इस प्रकार का विवरण दिया गया—"सजय सूत था. वह धृतराष्ट्र का रथ-सारथी था. कौरवों की ओर से वह पाडवों के यहा दूत बनकर गया था. धृतराष्ट्र के अतरंग-परामर्शदाताओं में विदुर के बाद

उसका स्थान था. कौरवों और पाडवों के बीच जो युद्ध हुआ, उसका सारा ब्योरा उसने धृतराष्ट्र को सुनाया था जब गांधारी तथा धृतराष्ट्र वन में चले गये, तब भी उनके साथ ही साथ रहकर उसने उनकी सेवाए की थी '

कर्ण का पालन-पोषण जिसने किया, वह भी सूत था विराट राजा के साले कीचक सूत थे शौनक आदि महर्षियों को जिसने महाभारत की कथा सुनायी, वह उग्रश्रव सूत था

अमरकोश में लिखा गया कि सूत ब्राह्मण स्त्री तथा क्षत्रिय पुरुष से उत्पन्न सतान हैं इसलिए दोनों वर्णों की शक्ति तथा सामर्थ्य उन्हे विरासत में मिले इसी कारण महाभारत में सूत अत्यत प्रमुख व्यक्तियों के रूप में दृष्टिगत होते हैं वे राजाओं के सलाहकार तथा सारथियों के रूप में रहने वाले ब्राह्मणों को हटाकर उनके स्थानों पर पहुंच सके कीचक जैसे लोग अस्त्र-शस्त्र में कुशल बने तो सजय जैसे लोग वीरगाथाए सुनाने तथा राजाओं को सलाह देने में चतुर बने

उन दिनों में जबकि लिपि का अभाव था, वीरगाथाओं को कठस्थ करके सुनाने में निपुण होने के कारण सूतो ने सजय के द्वारा कही गयी महाभारत युद्ध कथा को कठस्थ किया उन्होंने उसे अपने शिष्यों को सिखाया और जनता को सुनाया इसी वजह से मूलकथा को कोई बदल न पाये. परन्तु कालातर मे भीष्म आदि का जन्म, लाक्षागृह का दहन, द्यूत क्रीडा, पाडवों का वनवास, कृष्ण का दौत्य, जैसे भागों को उग्रश्रव एव वैशंपायन ने लिखकर सजय की युद्ध-गाथा में जोड दिया यह लोकमत उत्पन्न करने का उन्होंने प्रयत्न किया कि प्रारभ से लेकर कौरवों के द्वारा जिन पाडवों ने अनेक यातनाए भोगी, उनके दुर्योधन आदि को अधर्म रीति से मारने पर भी कोई दोष नही हैं सजय की युद्ध-गाथा में अपनी लिखी कहानिया जोडकर उन्होंने उसे "जय" नाम दिया. जय किसकी ? पहले से जिन पाडवों ने अनेक कष्ट उठाये, अत में उनकी जय हुई यही अर्थ उसमें उन्होंने सूचित करने की चेष्टा की.

उग्रश्रव के द्वारा कही गयी महाभारत गाथा

"जय" नाम वाली महाभारत-गाथा को जिसने शौनक आदि महर्षियों को सुनाया, वह था उग्रश्रव नामक सूत उग्रश्रव ने यह विवरण भी दिया है कि उसे यह गाथा कैसे मालूम हुई ?

उसने कहा—जनमेजय के नागयज्ञ मैंने स्वय अपनी आंखों से देखा उसके पश्चात, उद्योग पर्व तक की कथा मैंने जनमेजय से वैशंपायन को कहते सुनी उसके उपरात सजय के द्वारा कही गयी युद्ध घटनाओं को भी वैशपायन के द्वारा सुनकर मैं बता रहा हू अतः यह कह सकते हैं कि "जय" नामक गाथा के तीन मुख्य भागों को कथाओं के रूप में उग्रश्रव, वैशपायन तथा सजय ने कहा.

इस प्रकार तीन वक्ताओं की कही कहानियों को जोड़ने से यह निंदा कुछ हद तक दूर हुई कि पाण्डव अधर्म-परायण थे. फिर भी महाभारत की कथा का विस्तार करना उतने से नहीं रुका और भी कुछ कहानियां उसमें जोडी गयीं उसके उपरांत शांति पर्व सहित सात पर्व उसमें मिल गये अरण्य पर्व विस्तृत किया गया उत्तर गोग्रहण की गाथा की सृष्टि हुई सांख्य, योग तथा ब्रह्म सूत्र मिलाकर उसे भगवद्गीता का रूप देकर युद्ध-गाथा के आगे रखा गया अंत में भागवतों के हरिवंश लिखकर महाभारत के परिशिष्ट के रूप में मिलाने से वासुदेव कृष्ण विष्णु के अवतार के रूप में बदल गये फिर क्या! यह कहने का अवसर मिल गया— भगवान के आदेश के अनुसार पांडव चले. दुर्योधन आदि ने अपने कर्मों का फल भोगा बस। इतना ही हुआ वैसे तो पांडव अधर्मात्मा नहीं थे."

उन दिनों में राजवंशों से तथा क्षत्रियों के वीर कृत्यों से संबंधित कथाओं को राजाओं के दरबारों में रहने वाले सूत सुनाया करते थे. इनकी कथाओं में नीति, धर्म, प्रकृति-वर्णन तथा लौकिक दृष्टिकोण संबंधी बातें भी अंतर्भूत रहती थीं. इसी कारण इनकी कथाओं में कुछ संशोधन एवं सम्मिश्रण होने पर भी उनकी कीमत कम नहीं हुई

ब्राह्मण-क्षत्रिय वर्गों के बीच संघर्ष

उपनिषद् काल में क्षत्रियों के ज्ञान की वृद्धि हुई उपनिषदों में दृष्टिगत होने वाले जनक, अजातशत्रु, अश्वपति कैकेय इत्यादि क्षत्रिय ही थे. उस दशा में बड़प्पन के लिए ब्राह्मण तथा क्षत्रियों में कई संघर्ष हुए. अत: हर किसी ने स्वयं अपने बड़प्पन की घोषणा करने वाली कहानियां सुनायीं

ब्राह्मणों ने एक कहानी सुनायी : "यदि ब्राह्मण क्रोधित होते हैं तो शत्रु को अग्नि की तरह जला देते हैं. तेज तलवार की तरह टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं. सर्प के विष की तरह जान लेते हैं. यदि कोई उनकी पूजा करें तो सर्व सुख देते हैं. इसलिए ब्राह्मणों की पूजा करो. उनको क्रुद्ध मत करो."

फिर सूतों ने एक दूसरी कहानी सुनायी—"अत्रि महामुनि ने धन की कामना से वैन्य भूपति के पास जाकर उसकी प्रशंसा का पुल बांध दिया कि तुम इंद्र हो, ब्रह्म हो, ईश्वर हो. तब गौतम मुनि ने इसका विरोध किया तब दोनों के बीच में वाद-विवाद बढ़े तो अंत में काश्यप मुनि की सलाह से मुनियों ने सनत्कुमार के पास जाकर उनका विचार जानना चाहा. तब तक सनत्कुमार ने मुनियों को अपना मत समझाया कि प्रजा का पोषण एवं रक्षण करने के लिए समर्थ राजा को विराट सम्राट, सत्यधर्मी इत्यादि नाम देकर लोग उसकी प्रशंसा करते हैं अत: वैन्य-भूपति जैसे राजा ही इंद्र हैं, वही ब्रह्म और वही ईश्वर हैं."

अगर ब्राह्मण डींग मारते थे कि ब्राह्मणों का धिक्कार करने वाले क्षत्रियों की वही गति होगी, जो वेन राजा की हुई तो क्षत्रिय डांटते थे कि याद रखो कि स्वार्थी विप्रों की पुरूरवा ने कैसी खबर ली !

यदि ब्राह्मणों ने आवाज उठायी कि हमारे वशिष्ठ असंभव को संभव बनाने वाले महिमान्वित हैं, तो क्षत्रियों ने दावे के साथ कहानी सुनायी कि हमारे विश्वामित्र ने सृष्टि की प्रतिसृष्टि की

रामायण में लिखा है कि श्रीराम के हाथ में परशुराम का गर्वभंग हुआ. इसलिए भृगुवंशजों ने एक कहानी गढ़ी कि कार्तवीर्यार्जुन सहित सभी क्षत्रियों का परशुराम ने वध कर दिया. यह कहानी भूटान की रामायण में है सूतों ने और एक कहानी सुनायी कि सब धनलोभी भृगु-वंशजों को मृतवीर्य संतति वाले क्षत्रियों ने मार डाला.

यदि ब्राह्मणों ने कहा कि कई क्षत्रिय ब्राह्मणों के द्वारा पैदा हुए तो सूतों ने कहा कि कई ब्राह्मण क्षत्रियों से पैदा हुए । क्षत्रियों के दरबारों में सुस्थिर स्थान प्राप्त करने के लिए सूतों ने षोडश राजाओं के बड़प्पन का वर्णन किया तो ब्राह्मणों ने कहा कि यज्ञ करके ब्राह्मणों को अपना सर्वस्व का दान देने से ही वे राजा उतने महान हुए भगीरथ ने जब अश्वमेध यज्ञ किया, तब दस लाख कन्याओं को सुसज्जित करके दस लाख रथों पर उन्हें बिठाकर, हर एक कन्या के लिए सौ हाथी, लाख घोड़े और दस करोड़ गायों को दहेज के रूप में देकर, उन्हें ब्राह्मणों को दान (शायद कन्यादान) दिया इसी प्रकार उन सोलहों राजाओं ने यज्ञ करके ब्राह्मणों को दक्षिणाएं दी, यही उनके महान बनने का कारण कहा गया

यादवों ने कहा कि भगवान विष्णु हमारे घर में कृष्ण के रूप में अवतरित हुए, तो भृगुवंशियों ने डींग मारी कि हमारे भृगु महर्षि ने विष्णु की छाती पर लात मारी, यदि शिव के माथे पर तीसरा नेत्र है तो हमारे भृगु महर्षि के तलुवे में तीसरी आंख है

इसके अतिरिक्त यद्यपि सारे वेद-वेदांग उन दिनों में वैदिक ब्राह्मणों की अधीनता में थे, तथापि **महाभारत, रामायण, सावित्री उपाख्यान, नल उपाख्यान** जैसी सारी कथाएं सूतों की जबानों पर थीं इसी कारण से डा ए वी. केतकर ने इन्हें "सौत साहित्य" नाम दिया

सूतों के द्वारा सुनायी जाने वाली कहानियों पर क्रमश जनता की रुचि बढ़ी, आदर अधिक हुआ तारापति-हरिश्चंद्र की, शकुन्तला-दुष्यंत की, सावित्री-सत्यवान की और नल-दमयंती की कहानियों के साथ वीरमाता विदुला की कहानी तथा ध्रुव की कहानी जैसी कथाएं भी लोग बड़े चाव से सुनते थे

सूतों की कहानियों की तुलना में वैदिक ब्राह्मणों की कथाएं फीकी लगती थीं कश्यप ब्रह्म की पत्नियों में दिति से दानव, अदिति से देव, कद्रू से सांप, विनता से पक्षी, और वशिष्ट की होम धेनु की पूंछ से तथा मल-मूत्रों से शबर, शक, यवन, पौंड्र, पुलिंद, द्रविड़, सिंहल, बर्बर जातियां पैदा हुईं इस तरह वैदिक ब्राह्मणों के द्वारा कही गयी कहा-

नियों की कोई कीमत नहीं रह गयी इसलिए वैदिकों ने सोचा उन्होंने समझ लिया कि वीर कथाएं और नीति कथाएं जिस प्रकार लोगों को आकर्षित कर सकी, उस प्रकार ऋतुओं तथा दान-धर्मों से संबंधित कहानियां आकर्षित नहीं कर सकी. अत: उन्होंने वीरकथाओं से उनको मिलाना अच्छा समझा इस कारण से सूतों के पास जो महाभारत की युद्ध कथा थी, उस पर भृगुवंशियों ने अपनी दृष्टि केंद्रित की और धीरे-धीरे उसे हस्तगत कर लिया

श्रीमती भारती कार्वे ने अपने युगांत नामक ग्रंथ में लिखा कि सिर्फ महाभारत कथा ही नहीं, बल्कि संस्कृत वाङमय के विकास के लिए आधारभूत सभी रचनाएं ब्राह्मणेतरों के हाथों से ब्राह्मणों के हाथों में पहुंच गयीं

फिर क्या ? संदर्भ का औचित्य न होने पर भी, उसकी परवाह किये बिना ब्राह्मणों ने वैदिक वाङमय की देव-दानव, ऋतु, भूदेव, दान-धर्म आदि से संबंधित कहानियों को महाभारत में जोड दिया कुछ को तो रामायण में भी उन्होंने मिला दिया इनके साथ कुछ अन्य कथाएं भी जुड गयीं

कथाएं, जिन्होंने जिज्ञासा जगायी

योगियों तथा विरागियों ने यह शिक्षा देते हुए कि यज्ञ करके दान देने से स्वर्ण-शरव मिलते हैं तो भी कोई लाभ नहीं है क्योंकि जो कुछ पुण्य कमाया जाता है उसके समाप्त होते ही पुन जन्म लेना पडता है अतएव सर्व-संग-परित्याग करके जन्म साहित्य को साध लेना अच्छा है कुछ कहानियां सुनायीं उनमें मुद्गल की कथा भी एक है

मुद्गल सद्गुण संपन्न व्यक्ति तथा पुण्यमूर्ति था. अत: स्वर्ग से एक देवदूत ने उसके पास आकर उसे स्वर्ग में आने का निमंत्रण दिया उस दूत ने यह कहकर उसका जी ललचाने की कोशिश की कि स्वर्ग में अप्सराएं, मंदाकिनी नदी, सुनहले कमल आदि न जाने कितने भोग-विलास के लिए आवश्यक वस्तुएं हैं. तब मुद्गल ने सवाल पूछा कि क्या सदा के लिए इन सब का उपभोग करते हुए रहा जा सकता है ? तब देवदूत ने उत्तर दिया कि "नहीं, जब तक जमा किया हुआ पुण्य समाप्त नहीं होता तभी तक इन सब सुख-भोगों का अनुभव किया जा सकता है, उसके उपरांत फिर कोई न कोई जन्म लेना अनिवार्य है" यह सुनकर मुद्गल ने कहा कि ऐसा हो तो तुम्हारे स्वर्गसुख मुझे नहीं चाहिए इसलिए देवदूत वापस चला गया. उसके पश्चात मुद्गल ने ध्यान योग में निमग्न होकर और सर्व-संग-परित्यागी रहकर अंत में मोक्ष को प्राप्त किया.

मुद्गल की कथा से भी बढ़ कर विस्तार से कही गयी एक और कहानी है—वही है "मेधावी" की कथा.

किसी वेदपंडित ब्राह्मण का पुत्र था मेधावी एक दिन मेधावी ने अपने पिता से एक सलाह मांगी. वैसे तो जो कोई पैदा होता है, उसका मरना तो अनिवार्य है अत: आप कहें कि जिंदा रहते हुए करने योग्य कौन-कौन अच्छे काम हैं ?

पिता ने अपने बेटे मेधावी को आश्रम धर्मों का विवरण देते हुए कहा—पहले अच्छी तरह वेद का अध्ययन करो उसके उपरात विवाहित होकर गृहस्थ आश्रम के कर्तव्यों का पालन करो पुत्र-सतान से वश की परपरा सुरक्षित रहती है. पितृ देवों के लिए विधिपूर्वक श्राद्ध कर्म सपन्न होते हैं उन कर्मों से पितरों को ऊर्ध्वगतिया प्राप्त होती हैं.

यौवन-अवस्था के बीतने पर वानप्रस्थ आश्रम स्वीकार करके यज्ञ करो अथवा कराओ वृद्धावस्था का प्रारम्भ होते ही सन्यास स्वीकार करके तपस्या करो उससे तुम्हे मुक्ति मिलती है.

पिता ने जो विचार बताये, वे उसे पसद नही आये इसलिए मेधावी ने अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए कहा—

'हे पिता ! क्या हम कह सकते हैं कि मानव अवश्य सौ साल तक जियेगा ? जबकि मृत्यु हमारे प्राण हरने की टोह मे है, तब हमारे जीवन के आधे हिस्से से अधिक समय वेदाध्ययन मे तथा निरर्थक क्रतुए करने मे बिता दे तो क्या लाभ है ? मानव किसी की सिद्धि के लिए साधना करता रहता है पत्नी और बच्चो की सुख-सुविधा की व्यवस्था के लिए छटपटाता रहता है इतने मे जिस प्रकार बकरी के बच्चे को भेडिया हडप लेता है उसी प्रकार मृत्यु मानव को निगल जाती है. मृत्यु यह नही सोचती कि मनुष्य की इच्छाओ की पूर्ति हुई कि नही ? चतुर्विध आश्रमों के कर्तव्यों की समाप्ति तक वह प्रतीक्षा नही करती अत यह सोचना भ्रम है कि अत मे सन्यास आश्रम स्वीकार करने तक हम जीवित रहेंगे

"पिताजी ! आपने मुझे विवाह कर लेने का आदेश दिया किसलिए ? धर्म-सतान के लिए ही है न ? तो, फिर एक बात बताइए ! आप मुझे समझाइए कि यहा हम जो श्राद्ध-कर्म आदि करते हैं, उनसे हमारे पितृ पितामहों को ऊर्ध्वलोकों की प्राप्ति कैसे होगी ? आप यह कहिए कि हमारे दिवगत पूर्वज कहा है ? आपके पिताजी कहा गये हैं ? आप ही नही प्रत्युत कोई भी नही कह सकते इसी कारण से मुझे यह विश्वास नही होता कि आपकी कही धर्म-सतान मेरा उद्धार करेगी.

"अब यज्ञ-याग आदि क्रतुओं की बात लें ! उन पर मेरा विश्वास नही है क्योंकि जो पशुओं का वध करके उनका रक्त-मास देवों को अर्पित करते हैं, उनमें कोई एक भी परिशुद्ध नही हो सकते. भले ही उनसे धन-दौलत मिले तो भी ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मणों को उनकी कामना नही करनी चाहिए

"ब्राह्मण के चाहने योग्य हैं एकातवास, शाति, सत्य, समता, निश्चलता आदि ही, न कि धन दौलत, दारा-पुत्र आदि, बधु-मित्र आदि मुक्ति का मार्ग नही दिखा सकते. इसलिए 'अपने आपको पहचानो, अपने मे

जो आत्मा (या ब्रह्म) है, उसके दर्शन के लिए तपस्या करो. वही मुक्ति का साधन है' यह शिक्षा देने वाला उपनिषद्-वाक्य ही शरण्य है."

यह कथा ज्ञान मार्ग की शिक्षा देने वाली प्रतीत होती है. अतएव कर्म मार्ग का समर्थन करने वाली कुछ कहानियां निकलीं. उनमें प्रमुख है धर्मव्याध की कहानी धर्मव्याध किरात जाति का था मांस बेचकर अपनी गुजर करता था ऐसे व्यक्ति ने श्रेष्ठ तपस्वी ब्राह्मण को धर्म के रहस्यों का विवरण देकर समझाया

कौशिक ब्राह्मण था वह तपस्वी और वेदविद् था. एक दिन जब वह किसी पेड़ की छाह में बैठकर वेद-पाठ कर रहा था तब पेड़ पर बैठे एक बगुले ने उस ब्राह्मण पर बीट डाल दी उसने क्रुद्ध होकर जब ऊपर देखा तो पेड़ पर बैठा बगुला ढेर होकर जमीन पर गिर पड़ा

उसके पश्चात ब्राह्मण भिक्षाटन के लिए गाव में गया वहा एक ब्राह्मण के घर के दरवाजे पर खड़े होकर उसने कहा—'भिक्षादेहि' ज्यों ही उस घर की गृहिणी भिक्षा देने आ रही थी, त्यो ही उसका पति घर पहुचा

अत वह स्त्री कौशिक को भिक्षा दिये बिना अपने पति की सेवा करने में लग गयी. जब अपने पति के स्नान के लिए पानी देकर, उसे भोजन खिलाकर और उसे पान देकर अत में भिक्षा देने आयी, तब कौशिक ने आखें लाल करके देखा और पूछा—'यदि तुम पहले ही कह देती कि अब फुरसत नही है तो मैं चला जाता मुझे तुमने इतनी देर तक क्यो खड़ा किया ? क्या तुमको मालूम है कि ब्राह्मणों का इस प्रकार अपमान करने का कौन-सा नतीजा निकलेगा ?'

उस स्त्री ने कहा कि मुझे मालूम है लेकिन मैं पतिव्रता हू, अत पति सेवा ही मेरा प्रथम कर्तव्य है फिर उसने कौशिक को भिक्षा दी और कहा, 'तुम ब्राह्मण हो ब्राह्मणो के लिए इतना क्रोध उचित नही है इसलिए उसे छोड़ देना अच्छा है' उसके क्रोध का शिकार होकर उस बगुले के भस्म होने की घटना की भी उस स्त्री ने याद दिलायी उसने ब्राह्मण को चेतावनी भी दी कि पतिव्रता होने के कारण मैं वह घटना जान सकी, धर्म का सूक्ष्म-ज्ञान समझे बिना तपस्या तथा वेदाध्ययन सब निष्फल है. इसके अतिरिक्त उसने कौशिक को धर्म और अधर्म के विलक्षण युक्त ज्ञान की प्राप्ति के लिए, मिथिला नगर में रहने वाले धर्मव्याध के पास जाने का रास्ता भी बताया

तुरत कौशिक मिथिला नगर चला गया. मास-विक्रय करने वाले धर्मव्याध को देखकर कौशिक थोड़ी दूर पर खड़ा रहा उसके बाद धर्मव्याध ही उसके पास आकर, उसे नमस्कार करके अपने घर बुला ले गया. दोनो में कुछ आपसी चर्चाए हुई इस सिलसिले में कौशिक ने पूछा—'धर्मज्ञ होकर भी तुम मास विक्रय करके क्यों जी रहे हो ?' इस प्रश्न के उत्तर में धर्मव्याध ने विस्तार से बताया—

"ऐसा कहना कि यह हिंसा है, यह अहिंसा है किसी के लिए संभव नही है फसल उगानेवाला किसान जब खेत जोतता है तब कितने ही

जीव मर जाते हैं जब हम इधर-उधर चलते फिरते हैं तब हमारे पैरों के नीचे दबकर मरने वाले जीवों की गिनती हम नहीं कर सकते. यज्ञ-याग आदि क्रतुए करते समय हम पशुओं का वध करते हैं. पितरों के श्राद्ध-कार्यों में मांस पकाकर खिलाते हैं. अहिंसाव्रत का अवलंबन करके जगलों में तपस्या करने वाले ऋषि-मुनि कद-मूल, फलों का भक्षण करते हैं क्या यह भी हिंसा नहीं हैं ? बछडों के मुंह का दूध छीनकर, गायों को दुहकर दूध पीना हिंसा नहीं हैं ? अत इस ससार में हिंसा किये बिना जीने वाला कोई नहीं हैं ? जितना हो सके, उतनी हद तक हिसा का त्याग करना जरूरी हैं जो भूतदया रखता हैं, वह सर्व प्राणियों को सम-दृष्टि से देख सकता हैं, जहा तक सभव हैं, वहा तक वह हिंसा से दूर रह सकता हैं"

"मैं जतुओं को नहीं मारता कोई दूसरा मारकर लाता हैं तो उन्हें खरीदकर उनका मास मैं समुचित मूल्य पर बेचकर अपनी गुजर कर रहा हू. इसके अलावा यह मेरे कुल का परपरागत व्यवसाय हैं, अत. इसे करने में कोई दोष नहीं हैं."

जब धर्मव्याध ने यह कहा, तब यह सुनकर कौशिक ने दो और प्रश्न पूछे—"जीव का लक्षण क्या हैं ? इंद्रियों का निग्रह कैसे सभव होता हैं ?" इनके उत्तर देने के उपरात धर्मव्याध कौशिक को अपने घर में ले गया वहा धर्मव्याध के माता-पिता को अपने पुत्र की देख-भाल में अत्यत सुखी जीवन बिताते देखकर कौशिक अचम्भे में पड गया तब धर्म-व्याध ने फिर से कहा—

"मैं अपने वृद्ध माता-पिता की भक्तिपूर्वक पूजा करता हुआ, उनका पालन-पोषण कर रहा हू मैं अपनी धर्मपत्नी के साथ दांपत्य जीवन बिता रहा हू अपने पुत्रों के प्रति वात्सल्य, अपनी पत्नी के प्रति प्रेम तथा अपने मा-बाप के प्रति भक्ति के सिवा मेरी और कोई चिंता नहीं हैं किन्तु आप ? अपने वृद्ध माता-पिता को छोडकर तपस्या करने में लग गये अत. आप अपने निस्सहाय तथा दुर्बल बनकर तडपते हुए बूढे मा-बाप के पास फौरन चले जाइये और उनकी सेवा कीजिये अपने माता-पिता के ऋण से आप उऋण हो जाइये ऐसा न करने पर, आप चाहे कितनी भी तपस्या कर लीजिए सब कुछ व्यर्थ हो जायगा" इस प्रकार धर्मव्याध ने जो सलाह दी, उसे सिर आखो पर लेकर कौशिक अपने मा-बाप के पास चला गया और उनकी सेवा में दत्तचित्त हो गया

इस तरह अपने-अपने सिद्धातों के अनुकूल विभिन्न मार्गों के अनु-यायियों ने कहानिया सुनाई हैं किन्तु जो कथा विदुर ने धृतराष्ट्र को सुनायी, वह सर्वजनसम्मत प्रतीत होती हैं.

"किसी दिन एक ब्राह्मण जगल में कही भटक गया उसे अपने चारों ओर, जहा भी उसने देखा हिंस्र जानवर दिखाई पडे ब्राह्मण इधर-उधर दौडने लगा उसने देखा कि एक अत्यत भयकर स्त्री ने अपने कबध-

हस्त फैलाकर सारे जगल को अपने चक्र-बधन में जकड रखा है जंगल के चारों ओर पांच सिरवाले सर्पों ने फण फैलाकर एकदम ऊपर उठकर फुफकारना शुरू कर दिया है वहां एक कुआं था दहशत के मारे इधर-उधर दौडता वह ब्राह्मण, रास्ता दिखायी न देने के कारण, उस कुएं में उल्टा गिर पडा पर गिरते-गिरते वह उस कुए में झुकी हुई वृक्ष-शाखाओं के बीच में अटक गया जब ब्राह्मण ने कुए में नीचे देखा तो उसकी तह के पानी में उसे एक विकराल साप फुफकारता हुआ दिखायी दिया फिर उसने ऊपर देखा तो वहा छ सूडों तथा बारह पैरों वाला भयकर मस्त हाथी था. काले और सफेद चूहे उस पेड की उन शाखाओं के मूल को कुतर रहे थे जिन में वह अटका हुआ था ऊपर की बेलों के बीच एक शहद का छत्ता था, जिसके इर्द-गिर्द बड़ी-बडी मधु-मक्खियां मडरा रही थी. ऐसी भयकर परिस्थिति में भी उस ब्राह्मण ने मधु के छत्ते से अपनी चूसते हुए जाने की आशा नही छोडी" जब धृतराष्ट्र ने कथा का आशय पूछा तो विदुर ने इस प्रकार विवेचन किया—"ससार ही वह जगल है व्याधिया कुआ है काल अदर का सर्प है, छ ऋतुओं और बारह मासों वाला साल ही वह छ मुडों और बारह पैरों वाला हाथी है दिन और रात सफेद और काले चूहे हैं ब्राह्मण जिनमे अटक गया, वे शाखाए जीवन की आशा हैं वे मधु की बूदे सम्सार के सुख हैं"

इस कहानी ने वैदिक, जैन, बौद्ध, मुसलमान, ईसाई, यहूदी, आदि सबका आदर पाया ससार की सभी भाषाओं में इस कहानी का अनुवाद किया गया यही कथा फारसी भाषा मे जलालुद्दीन तथा जर्मन भाषा में रुखर्टस ने जो सुंदर गेय कविताए लिखी उनका मूल आधार बनी.

बौद्ध गाथाएं

बौद्ध धर्म के विस्तार की प्रक्रिया में कई गाथाए निकलीं, बौद्ध धर्मावलबियों ने मुख्य रूप से अहिंसा तथा मानव सेवा को प्राधान्य दिया. अबपाली, अगुलिमाल, शिबि चक्रवर्ती इत्यादि की कहानिया उन्होंने सुनायीं

बौद्धों ने एक कहानी बतायी कि एक अधे भिक्षुक की दीनदशा को देखकर शिबि चक्रवर्ती इतने विचलित हुए कि उन्होंने उस भिखारी को अपनी दोनों आखें निकाल कर दान में दी यह कहानी अत्यधिक लोकप्रिय हुई.

ब्राह्मणों ने भी शिबि चक्रवर्ती का अपने ढग से वर्णन किया. शिबि चक्रवर्ती के यहा एक भयभीत कबूतर ने आकर अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की शिबि ने उसे अभयदान दिया. इतने में एक बाज उसका पीछा करता हुआ वहा आया उसने उनसे कबूतर को छोड देने की प्रार्थना की उसने कहा—यदि आप इसे नही छोडेंगे तो मुझे, मेरी पत्नी और मेरे बच्चों को भूखों मरना पडेगा यह बात सुनकर शिबि चक्रवर्ती धर्म-सकट में फस गये अगर कबूतर को छोड दिया जाय तो इसके माने होंगे

प्राण-रक्षा के लिए शरण में आये हुए प्राणी को उसके शत्रु के हाथ में सौंप देना. अगर उसे न छोड़ा जाय तो वह बाज की मृत्यु का कारण बनेगा इसलिए शिबि चक्रवर्ती ने कोई दूसरा मांस लाकर उसे खिलाने का वादा किया. पर बाज राजी न हुआ उसने कहा—यदि आपके शरीर से काट कर दिया हुआ मांस हो तो उसे लेने के लिए मैं राजी होऊंगा शिबि चक्रवर्ती तुरन्त कबूतर के शरीर के तौल के बराबर का मांस अपने शरीर से काटकर देने के लिए तैयार हो गये किन्तु उनके शरीर का सारा मांस काटकर तराजू में रखने पर भी वह कबूतर के भार के बराबर न हुआ उन्होंने अपना सारा शरीर बाज के सुपुर्द कर दिया तब बाज इन्द्र के रूप में तथा कबूतर अग्नि-देव के रूप में प्रकट हुए उन्होंने शिबि चक्रवर्ती को जीवित किया और उन्हें कई वरदान देकर अदृश्य हो गये इस प्रकार ब्राह्मणों ने शिबि चक्रवर्ती की कथा बदल कर बतायी

इस तरह बतायी गयी और बदली गयी कितनी ही और कहानिया भी हैं. यदि ब्राह्मणों ने कुछ जैन-बौद्ध गाथाओं को अपने अनुकूल बदलकर **महाभारत** में जोड़ दिया तो बौद्धों ने **महाभारत** और **रामायण** की कुछ कथाओं को अपने अनुकूल बदल कर अपनी जातक कथाओं में मिला लिया

इस तरह क्षत्रिय, ब्राह्मण, योगी, बौद्ध, जैन इत्यादि ने जो कथाएं बतायीं, उनके साथ वैदिक वाङ्मय की कुछ कहानियां भी **महाभारत** में जुड़ गयीं. **हरिवंश** उसका परिशिष्ट बना वैष्णवों ने विष्णु लीलाओं को उसमें मिलाया तो शैवों ने शिव लीलाओं को जोड़ दिया दुर्गा देवी ने भी उसमें आसन जमा लिया मनुधर्म-सूत्रों ने एक पूरे पर्व में अपना स्थान बना लिया यही कारण है कि कुछ लोग **महाभारत** को पंचम वेद कहते हैं, तो कुछ दूसरे उसे इतिहास पुराण कहते हैं और यह बात पृष्ठभूमि में चली गयी कि यह वीरगाथा है

पशु-बलि का विरोध

जब अपने-अपने बड़प्पन के लिए बाहमण तथा क्षत्रिय वर्णों के बीच में संघर्ष चल रहे थे, तब भी यज्ञ-यागों का बोलबाला बढ़ता रहा, कम नहीं हुआ जिस समय राजा लोग यज्ञ करते थे तब उनके सिपाही और कर्मचारी गावों पर धावे बोलकर वहा से पशुगण के साथ अनाज, मक्खन, दाल, नमक आदि भी जबर्दस्ती उठा ले जाते थे. ऋतुओं के लिए जरूरी चीजें राजा की सेवा में समर्पित कर बाकी सब वे आपस में बाट लेते थे राजा के हाथों से बाहमणों को गायें तथा सोना दान में मिलते थे

फिर क्या ! पानी न बरसा तो यज्ञ बच्चे पैदा न हुए तो यज्ञ सामत राजाओं की सपत्ति छीनने के लिए यज्ञ अपने किये हुए पापों से छुटकारा पाने के लिए यज्ञ. मोक्ष की प्राप्ति के लिए यज्ञ सभी प्रकार से यज्ञों का बोलबाला था. इनके लिए आवश्यक पशुओं, अनाज तथा धन का समर्पण करने वाले पशुपालक, किसान और व्यापारी नारकीय यातनाओं के शिकार बनते थे कृषि तथा पशु सम्पदा की बर्बादी होती थी

अत सात्वतों (वासुदेव भक्तों) ने पशु-बलि का विरोध किया. महावीर एव बुद्ध ने यज्ञ-याग आदि का विरोध करते हुए जैन-बौद्ध धर्म को प्रस्तुत किया चूकि बौद्ध भिक्षुओं ने दीन-दुःखी जनों के उद्धार का बीड़ा उठाया था, इसलिए आम जनता बौद्ध धर्म की ओर आकृष्ट हुई. पशुपालक तथा कृषकों ने ही नहीं, कुछ व्यापारी लोगों ने भी ऋतुओं का विरोध किया और बौद्ध धर्म का समर्थन किया.

अशोक चक्रवर्ती के बौद्ध धर्म स्वीकार करने से बौद्ध धर्म ने अपनी जड़ें खूब जमा ली उनके प्रोत्साहन से वह धर्म दक्षिण-पूर्वी एशिया तथा श्रीलका तक व्याप्त हुआ. इसके फलस्वरूप प्रमुख वैदिक धर्मावलंबी ऐसे निःसहाय हो गये

बौद्ध धर्म की सबलता के इस दौर में वासुदेव, नारायण तथा विष्णुभक्त सब मिलकर एक हो गये. ये ही भागवत के नाम से विख्यात हुए. इनका धर्म वैष्णव धर्म था. इनके द्वारा भी पशुबलि का विरोध हुआ, जिससे लोग वैष्णव धर्म की ओर भी आकर्षित हुए. अत· जब देश के पूर्वी और दक्षिणी प्रातों में बौद्ध धर्म का प्रसार हो रहा था, तब पश्चिम में वैष्णव धर्म व्याप्त हुआ

यद्यपि वैष्णव धर्म ने पशुबलि का विरोध किया, तथापि आध्यात्मवाद का समर्थन किया इस दृष्टि से वह बौद्ध और जैन धर्मों का विरोधी था अतएव वैदिक धर्मावलंबियों के हाथ मानो बह्मास्त्र लग गया. पशुबलि का

विरोध करने के कारण अब तक जिन वैदिकों ने विरोध की तलवार उठायी थी, उन्होंने अब वह विरोध छोड़ दिया. यह कहकर उन्होंने विष्णु की पूजा आरम्भ की कि विष्णु कोई पराया नहीं हैं, इन्द्र का छोटा भाई उपेन्द्र ही हैं इन्द्र से छोटा होने पर भी वह अपने बड़े भाई से महान हैं.

दूसरी ओर इन वैदिकों ने मौर्य सम्राटों के विरुद्ध षड्यन्त्र प्रारम्भ किये ई.पू. १७८ में मौर्य सम्राट की हत्या जिस पुष्यमित्र ने की, उसे उन्होंने अपना पूरा सहयोग दिया धीरे-धीरे पुष्यमित्र दरबार में पहुँचकर पतंजलि के नेतृत्व में भगवान के अवतारों के सिद्धान्त की कल्पना करके, कृष्ण वासुदेव की स्तुति करते हुए उन्होंने बौद्ध धर्म का सामना किया. यादवों के वासुदेव तथा अहीरों (आभीरों) से कृष्ण का सम्बन्ध जोड़कर, उन्होंने दोनों वर्गों की जनता का समर्थन प्राप्त किया

फिर भी मिलिंद के नेतृत्व में यूनानियों के सियालकोट को अपना केन्द्र बनाकर राज्य की स्थापना करके बौद्ध धर्म को स्वीकार करने से, उज्जयिनी के शासक शकों के बौद्ध धर्मावलंबी होने से तथा शातवाहन चक्रवर्तियों के बौद्ध और वैदिक धर्मों का समान आदर करने से बौद्ध धर्म ने ऊंचा दर्जा हासिल किया

इस परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए वैदिक धर्म के प्रमुखों ने क्षत्रियों के महत्व को पूर्णरूप से स्वीकार नहीं किया, बल्कि राजा चाहे देशी हों या विदेशी, चाहे क्षत्रिय हों या नहीं, फिर भी उनका आश्रय प्राप्त करने के लिए यह कह कर उनकी स्तुति की—"ना विष्णु पृथ्वीपति"—अर्थात राजा से बढ़कर कोई विष्णु नहीं हैं

राजाओं का आश्रय पाने के लिए प्रयास करने के साथ-साथ वैदिक धर्म के प्रमुखों ने यज्ञ-याग आदि करना तथा पशुबलि देना कम कर दिया आर्य तथा आर्येतर का भेद किये बिना जिन-जिन लोगों ने बौद्ध, जैन धर्मों का विरोध किया, उन्होंने उन सबके साथ हाथ मिलाया उन्होंने शैव, वैष्णव धर्मों का खूब प्रचार किया कर्म एव पुनर्जन्म सिद्धांतों का समर्थन करते हुए उन्होंने कहानियां लिखीं, यह विश्वास दिलाने के लिए कि जो लोग भगवान पर भरोसा रखते हैं, उन्हें इहलोक सुखों के साथ पर-लोक सुख भी उपलब्ध होंगे, उन्होंने बहुत कुछ लिखा

हिन्दू पंडितों ने पुराणों की रचना की, तो बौद्ध विद्वानों ने जातक कथाएं लिखीं कुछ जातक कथाएं बौद्ध धर्म के अनुकूल रामचरित को बदलने में काम आयीं विमल सूरि नामक जैन सन्यासी ने जैन धर्म के अनुकूल राम कथा को बदला और वाल्मीकि रामायण को विस्तृत करने का काम भी बेरोक-टोक चलता गया.

वाल्मीकि रामायण का विस्तार

श्री नार्ल वेंकटेश्वर राव ने अपनी "जाबालि" में लिखा कि जब कुशीलव वाल्मीकि रामायण गाकर लोगों को सुनाते थे, तभी उसके वर्णनों का विस्तार हुआ होगा

मारिस विंटर विड्ज ने "इंडियन लिटरेचर—एपिक्स एण्ड पुराणाज" नामक अपनी पुस्तक में विवरण दिया—"रामकथा का गान करते समय वहां जमा हुए लोग सीता के कष्टों को सुनकर आंसू बहाते थे उन कष्टों का कुशीलवों ने बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया होगा"

यदि श्रोतागण युद्ध की घटनाओं को सुनकर उनकी तारीफ करते थे, तो कुशीलवों ने युद्ध की घटनाओं का वर्णन लम्बा चौंडा बना दिया होगा इसी कारण से रामायण में देखने को मिलता है कि जो राक्षस योद्धा युद्ध में मारे गये, वे ही फिर सजीव होकर लड़ने लगे अगर सभा में उपस्थित व्यक्ति हास्यपूर्ण बातें सुनकर लोट-पोट होते थे, तो कुशीलवों ने बन्दरों के नटखटपन के कामों का खूब वर्णन किया होगा. सभासद अगर पुराण कथाओं को सुनकर दाद देते थे, तो उन्होंने बीच-बीच में पुराणों की कथाओं को जोडकर सुनाया होगा

इस प्रकार बढ़ी हुई रामायण बौद्ध धर्म का आरम्भ होने पर कुछ और भी विस्तृत हुई बुद्ध से होड लगाकर राम की स्तुति करने का प्रयास ही इसका कारण है.

यदि बौद्धों ने मुक्ति-मार्ग की खोज में गौतम बुद्ध के जगलों में जाकर सात साल तक घोर कष्ट सहने की बात का प्रचार किया, तो धर्मरक्षा के लिए श्रीराम के जगलों में चौदह साल रहकर अनगिनत कष्टों का शिकार होने की बात का हिन्दुओं ने प्रचार किया

यदि बौद्धों ने कहा कि अबापाली नामक वेश्या को दर्शन देकर उसे एक बौद्ध-भिक्षुणी के रूप में बदलने की शक्ति रखने वाले महापुरुष भगवान बुद्ध थे, तो हिन्दुओं ने कठिन शिला को कोमल नारी के रूप में परिवर्तित करने की महिमा से सम्पन्न महापुरुष कहकर श्रीराम की प्रशसा की

बौद्धों ने यह प्रचार किया कि बुद्ध भगवान के दर्शन के लिए अबापाली ने कई वर्षों तक प्रतीक्षा की और उनका दर्शन भाग्य मिलते ही अपना सारी सम्पत्ति का समर्पण कर दिया तो हिन्दुओं ने प्रचार किया कि श्रीराम के दर्शन पाने के लिए शबरी ने सालों तक राह देखी और उनसे भेंट होते ही उन्हें जूठे बेर खिलाकर अपार आत्मसतोष का अनुभव प्राप्त किया

बौद्धों ने बताया कि अगुलिमाल नामक एक कुख्यात डाकू भगवान बुद्ध की उपदेश सुनकर बौद्ध भिक्षु बन गया, तो हिन्दुओं ने कहा कि प्राचेतस नामक व्याध रामकथा सुनकर वाल्मीकि महर्षि बना और उसने रामायण महाकाव्य की रचना करके ससार में अपार कीर्ति तथा प्रतिष्ठा अर्जित की

यदि बौद्धों ने प्रचार किया कि समस्त राजभोगों का परित्याग करके बुद्ध ने सर्व मानव-कल्याण की साधना में अनेक कष्ट उठाये, तो हिन्दुओं ने प्रचार किया कि श्रीराम ने सर्वभोगों का परित्याग ही नहीं किया, बल्कि लोकहित की साधना के लिए रामराज्य की स्थापना भी की

जब बौद्धों ने कहा कि बुद्ध सासारिक बन्धनों को तोड कर महात्मा बने थे, तब हिन्दुओं को हार मानकर पीछे हटना पडा इसीलिए बाद में उन्होंने उत्तर रामायण लिखकर रामकथा की कमी की पूर्ति की उन्होंने कहा कि

सांसारिक बन्धनों को तोड़ डालने के लिए ही राम ने सीता को वन में भेज दिया.

इस तरह की तुलनाओं का प्रचार चाहे कितनी अधिक मात्रा में हुआ हो, तो भी साधारण प्रजा को इससे कोई लाभ न था उन्हें चाहिए खाना और कपड़ा जिन पशुओं को उन्होंने पाला, जिन फसलों को उन्होंने उगाया, उनका फायदा उन्हें मिलना चाहिए जनता की चाह यही होती है. उन्होंने आशा की कि बौद्ध धर्म उन चीजों की प्राप्ति में उनकी मदद करेगा, इसलिए बड़ी संख्या में जनता ने उस धर्म का समर्थन किया

इससे अपना धीरज खोये, हिन्दू धर्म के प्रमुखों ने एक कहानी की कल्पना की—"बुद्ध कोई दूसरे नहीं, बल्कि विष्णु के अवतार ही थे अधर्म की शिक्षा देकर, मानवों से पाप कराके, उन्हें नरक में भेजने के लिए वह अवतरित हुए इसके पहले सभी मानव यज्ञ-याग आदि करके मरने के बाद स्वर्ग में जाते थे, जिसके फलस्वरूप स्वर्ग खचाखच भर गया और नरक रिक्त रह गया अतएव स्वर्ग में आबादी का दबाव कम करने के लिए इन्द्र ने और नरक में अपने को काम देने के लिए यम ने जब विष्णु के पास जाकर विनती की, तब विष्णु ने उनकी प्रार्थना मानकर बुद्ध के रूप में अवतार धारण किया उन्होंने जनता को अधर्म का उपदेश दिया इस कारण से सभी बौद्ध धर्मावलंबी नरक में जाने लगे स्वर्ग में आबादी का दबाव कम हुआ यही असली रहस्य है"

इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहकर प्रचार किया—"राम एक पत्नी-व्रती थे उसने दुष्टों को दण्ड दिया और शिष्टों की रक्षा की एक मामूली धोबी की निंदा की परवाह करके उन्होंने अग्नि को साक्षी बनाकर जिस सीता को अपनी धर्मपत्नी बना लिया, उसी सीता को जंगलों में भेज दिया, अश्व-मेध यज्ञ करके ब्राह्मणों को अपने सर्वस्व का दान दिया और लोकमंगल की सिद्धि के लिए रामराज्य की स्थापना की"

इसके प्रत्युत्तर में बौद्धों ने और एक कहानी गढ़ डाली—"राम कोई दूसरे नहीं, हमारे तथागत ही थे पिछले जन्म में वह राम के रूप में पैदा हुए तब उन्होंने अच्छे काम किये, किन्तु प्रजा को उसने मुक्ति का मार्ग नहीं दिखाया इसलिए गौतम बुद्ध के रूप में पैदा होकर उन्होंने जनता को मुक्ति का मार्ग दिखाया"

वैदिक धर्मावलम्बियों ने एक और कहानी का प्रचार किया कि असुर स्त्रियां पतिव्रताएं थीं इसलिए त्रिपुरासुरों का वध करना त्रिमूर्तियों के लिए भी सम्भव नहीं हो सका अतः बुद्ध का अवतार ग्रहण करके विष्णु ने छल-कपट करके उन असुर स्त्रियों का चरित्र बिगाड़ दिया, तब तक त्रिपुरासुर-संहार सम्भव न हो सका

इस प्रकार की तुलनाएं, स्पर्धाएं तथा प्रचार सिर्फ भारत उपमहाद्वीप तक सीमित न थे पहले बौद्ध-भिक्षु और बाद में हिन्दू सन्यासी जब मध्य-एशिया, दक्षिण-पूर्व एशिया, चीन तथा जापान आदि देशों में गये, तो उन देशों में भी इन सब का प्रचार हुआ उन-उन देशों की सामाजिक परि-

स्थितियों, आवश्यकताओं तथा रुचियों के अनुसार महाभारत, रामायण और जातक कथाओं में परिवर्तन एवं संशोधन हुए. इन सब में रामायण का रूप तो विशेष परिवर्तित हो गया.

जातक कथाओं में रामायण

चीनी भाषा की जातक कथाओं में एक राजा की कहानी है उस राजा का नाम उसमें उल्लिखित नहीं है. किन्तु कहा गया है कि किसी समय बुद्ध ने ही उस राजा के रूप में जन्म लिया था उसकी पत्नी को एक नाग जाति का व्यक्ति भगा ले गया तब उस राजा ने वानरों की सहायता से—खासकर "इन्द्रकपि" की मदद से—समुद्र पर सेतु बन्धन करके लंका को घेर लिया उसके पश्चात लड़ाई में उस नाग को मारकर वह अपनी रानी को वापस लाया

उसके उपरांत उस रानी ने अपने पातिव्रत्य को सिद्ध करने की तैयारी की उस समय भूमि फट गयी. इस अद्भुत कार्य होने के बाद व्यापारियों ने अधिक लाभार्जन करना छोड़ दिया, बलवानों ने दुर्बलों को सताना छोड़कर उनकी मदद करना शुरू किया कुलटाएं अपने चरित्र को सुधार कर सदाचारी बन गयीं, सारी प्रजा धर्मपरायण बनकर जीने लगी यह सब बोधिसत्व का ही प्रभाव था

यह सुनकर एक हिन्दू पंडित ने व्याख्या की कि हमारे इन्द्र के कपि के रूप में आकर सहायता करने से ही सेतु बाधना, नागों को मारना बोधिसत्व के लिए सम्भव हो सका.

भूटान की रामायण के अनुसार दशरथ एक वीर था. उसका पुत्र सहस्रबाहु और भी महावीर था जब उस सहस्रबाहु ने एक ब्राह्मण की कामधेनु का अपहरण किया, तब उस ब्राह्मण के पुत्र परशुराम ने सहस्रबाहु का संहार किया सहस्रबाहु के लक्ष्मण तथा राम नामक दो पुत्र थे उन्होंने बड़े होने के उपरांत परशुराम के साथ अठारह लाख ब्राह्मणों को मार डाला

उस समय दशग्रीव नाम के एक राक्षस के एक पुत्री पैदा हुई. ज्योतिषियों ने कहा कि उस लड़की से उस राक्षस राजा का अनर्थ होना अनिवार्य है इस कारण से दशग्रीव ने उस लड़की को एक संदूक में रखकर नदी में बहा दिया वह संदूक किसी ऋषि को मिला उस ऋषि ने उस लड़की को पाल-पोस कर बड़ा किया. वही सीता थी.

लक्ष्मण तथा राम, सीता से प्रेम करके उससे शादी करने की इच्छा से उसके लिए आवश्यक सुविधाओं का प्रबंध करते थे एक दिन जब वे दोनों अनुपस्थित थे, तब दशग्रीव ने आकर सीता को देखा इस बात से अनभिज्ञ कि वह उसी की पुत्री है, दशग्रीव उस लड़की को उठा ले गया

लक्ष्मण और राम, सीता की खोज करते-करते वानर राज्य में पहुंचे

उन्होंने वहां सुग्रीव का संहार करके नद को राज्याभिषिक्त करके, वानरों की सहायता से दशग्रीव को हराया और उससे लगान वसूल करके सीता को छुड़ा लाये. लक्ष्मण उत्तर जन्म में बुद्ध के रूप में अवतरित हुआ, तो राम ने मैत्रेय के रूप में जन्म लिया यह एक दूसरे प्रकार की जातक कथा है

लाओस में जो राम जातक कथा है, उसके अनुसार राम तथा रावण चचेरे भाई थे. राम की बहन शातादेवी को रावण भगा ले गया लेकिन राम से डरकर उसने शाता के साथ शादी कर ली

"दशरथ जातक" नाम की एक और कथा है कहा जाता है कि स्वय बुद्ध ने वह कहानी किसी गृहस्थ को सुनायी वह कहानी इस प्रकार है—

'दशरथ की सोलह हजार पत्निया थी उनमे पटरानी के गर्भ से राम पंडित, लक्ष्मण पंडित तथा सीता पैदा हुए कुछ समय बीतने पर पटरानी के मरने पर उनकी दूसरी पत्नी पटरानी बनी उसके गर्भ से भरत का जन्म हुआ इस ख्याल से कि यह दूसरी पटरानी कहीं राम पंडित की कोई हानि करने की कोशिश न करे, दशरथ ने राम पंडित से बारह साल तक कहीं रहकर आने के लिए कहा राम पंडित के साथ लक्ष्मण पंडित और सीता देवी भी हिमालय में चले गये. दशरथ के मरने के बाद वे लौट आये उसके पश्चात सीता देवी रानी के रूप में तथा श्रीराम राजा के रूप में अभिषिक्त हुए यही दशरथ शुद्धोदन है, सीता देवी यशोधरा है और राम पंडित मैं ही हू'

फिर एक जैन गाथा में इस प्रकार का विवरण दिया गया कि कुछ समय तक जगलों में रहकर आने के पश्चात् राम और लक्ष्मण एक कन्या को देखकर आकृष्ट हुए प्रत्येक ने अपने से ही विवाह करने के लिए उससे माग की अन्त में वे यह जानकर कि वह कन्या उनकी बहन सीता ही है, पश्चाताप करके वे काम-विमुख होकर और सिर मुडवाकर जैन साधुओं में शामिल हो गये

जैन सन्यासी विमलसूरि के प्राकृत भाषा में लिखे रामचरित को आधार बनाकर और दो-तीन जैन-कथाए निकलीं उनमें राम एक महान सन्यासी के रूप में दिखाई देता है और सीता रावण की पुत्री के रूप में दिखायी देती है बौद्धों की जातक कथाओं में भी है कि सीता रावण की बेटी थी, और रावण महान ऋषि शाक्तयों के द्वारा लिखित कथा में सीता मदोदरी की बेटी है

श्रीलका में प्रचलित रामकथा के अनुसार लका को जिसने जलाया वह बालि था, न कि हनुमान जब सीता की खोज में बालि ने लका में प्रवेश किया, तब अशोक वन में सीता के पास रावण बैठा था यह देखकर कि बालि उसके उद्यान को उजाड रहा है, रावण आग बबूला हो गया तो भी उसने सोचा कि वानर को मारना धर्मसम्मत नहीं है. उसने सीता की सलाह मागी कि क्या करना उचित है ? तब सीता ने सलाह दी कि

इस वानर को न मारा जाय अथवा न रस्सियों से बांधा जाय धीरे से उसको पकड़कर और उसकी पूंछ में दो कपड़े लपेटकर आग लगा दी जाय तो वह डरकर भाग जायगा फिर वह यहां फिर कभी नहीं आयेगा

रावण ने सीता की सलाह मान ली उसने बालि को पकड़कर उसकी पूंछ में कपड़े लपेटकर और आग लगाकर उसे छोड़ दिया तुरन्त बालि लंका नगर के एक मकान पर से दूसरे मकान पर छलांग मारने लगा, तो लंका नगर में कई जगहों पर आग की लपटें फैल गयी जब उन्हें बुझाने के लिए रावण भी अपने सेवकों के साथ घबराहट में इधर-उधर दौड़ने लगा, तब बालि को मौका मिला उसने सीता को अपने कंधों पर उठाया और एक ही उड़ान में राम के पास पहुंच गया

एक और रामकथा में है कि बालि के साथ रहते समय जब मंदोदरी गर्भवती हो गयी, तो उसने रावण के साथ विवाह कर लेने के बाद एक लड़की को जन्म दिया उस प्रकार पैदा हुई लड़की ही सीता थी दूसरी एक कहानी के अनुसार देखा जाय तो पता लगता है कि दशरथ के द्वारा मंदोदरी के गर्भ से ही सीता पैदा हुई

एक अन्य रामकथा के अनुसार हनुमान बहुत बड़ा दुष्ट था एक कहानी के अनुसार हनुमान राम का ही बेटा था और एक कथा के अनुसार हनुमान शंकर का बेटा था. एक और कथा में कहा गया है कि शंकर के वीर्य के वायुदेव के द्वारा अंजनी देवी के गर्भ में जाने से हनुमान का जन्म हुआ फिर किसी रामकथा में कहा गया कि श्रीराम ने सुग्रीव का वध करके बालि को अभिषिक्त किया इस प्रकार हर किसी ने अपने-अपने ढंग से रामकथा लिखी

इस प्रकार कहानियां लिखकर प्रचार करने के साथ यदि बौद्धों ने स्तूपों का निर्माण किया तो हिंदुओं ने मंदिरों का निर्माण किया बोध-गया, सांची, वैशाली जैसे क्षेत्र बौद्धों के पुण्य क्षेत्र बने तो काशी, रामेश्वर जैसे क्षेत्र हिंदुओं के पवित्र क्षेत्र.

जैसे-जैसे पुराण और जातक कथाओं की वृद्धि हुई, वैसे-वैसे अवतार सिद्धांत, कर्मसिद्धांत तथा पुनर्जन्म सिद्धांत प्रबल हुए यह कहने में परस्पर स्पर्धा बढ़ी कि हमारे ही सिद्धांत और धार्मिक नियम सबसे प्राचीन हैं

वैदिक धर्मानुयायियों ने दावे के साथ कहा कि स्वयं ब्रह्मा ने ही वेद को प्रकट किया तो बौद्धों ने जोर देकर घोषित किया कि अनेक जन्म लेने के पश्चात् ही तथागत सिद्धार्थ के रूप में पैदा होकर बुद्ध भगवान बने, फिर जैनों ने छाती पीटकर कहा कि तेईस तीर्थंकरों के अवतरित होकर जैन धर्म की शिक्षा देने के उपरांत महावीर पैदा हुए तो वैष्णवों ने जोरदार घोषणा की कि वैष्णव धर्म का स्वयं नारायण ने प्रजापति को उपदेश दिया और वह बृहस्पति के द्वारा उपरिचर वसु को प्राप्त हुआ.

इसी तरह शैव तथा शाक्तेय पंथियों ने भी अपनी प्राचीनता को सिद्ध करने वाली बातें कहीं.

यद्यपि इस प्रकार प्रत्येक धर्म के अनुयायी अपने धर्म की पुरातनता की स्पर्धा करते रहे तथापि जैन, बौद्ध धर्मों के विरुद्ध शैव, वैष्णव, वैदिक, शाक्तेय तथा गाणापत्य धर्मवालों ने आपस में हाथ मिलाये सांख्य, योग, वैशेषिक तथा न्याय दर्शनों में कुछ संशोधन तथा प्रक्षेपण करके उनको आध्यात्मिकवाद के अनुकूल उन्होंने बना लिया चार्वाक सिद्धांतों से संबंधित रचनाओं को उन्होंने जला दिया और विविध नक्षत्र तथा ग्रहमंडलों का खगोल शास्त्रज्ञों ने जो नाम दिये, उन नामों एवं स्थानों का उपयोग करके "गंगावतरण" जैसी पुराण कथाओं की रचना की

सांख्य, योग तथा ब्रह्मसूत्रों को जोडकर बनायी गयी भगवद्गीता, और विकासवादियों के द्वारा कही गयी दशाओं को जोडकर लिखे गये पुराण हिंदुओं के तेज हथियार सिद्ध हुए बौद्ध धर्म ने अपना कदम पीछे हटाया हिन्दू धर्म की प्रबलता बढी

पुराणों का युग

जैसे ही भारत उपमहाद्वीप में बौद्ध-जैन धर्मों की प्रबलता कम हुई, वैसे ही शैव-वैष्णव धर्मों के बीच में स्पर्धा बढी पुराणों की संख्या में वृद्धि हुई शैव, लैंग, तथा स्कन्द पुराणों ने शिव की स्तुति की तो वैष्णव, भागवत, तथा नारदीय पुराणों ने विष्णु देव की

एक पुराण की स्पर्धा में दूसरे पुराण की रचना की गयी, एक के विस्तार को देखकर दूसरे का विस्तार किया गया. नारदीय, बृहन्नारदीय, नंदीश्वर, बृहन्नंदीश्वर, धर्म, शिवधर्म, विष्णुधर्म, विष्णु धर्मोत्तर, भविष्य, भविष्योत्तर जैसे अनगिनत पुराण पैदा हुए

यदि वैष्णवों ने हनुमान की प्रशंसा में कहा कि वह अनन्य रामभक्त है, तो शैवों ने शिव का पुत्र कहकर उसकी स्तुति की फिर किसी ने यहां तक कहा कि वह राम का ही पुत्र है रामभक्तों ने प्रचार किया कि शिव धनुष को श्री राम ने बडी आसानी से तोड दिया, तो शिव भक्तों ने प्रचार किया कि शिव की पूजा करने से ही श्री राम के लिए समुद्र-तरण एवं रावण-संहार संभव हो सके

शैवों ने प्रचार किया कि नर-नारायण के अवतार अर्जुन तथा श्री कृष्ण शिव की पूजा करके और पाशुपतास्त्र पाकर उसकी मदद से युद्ध में विजयी बन सके तो भागवत धर्म के लोगों ने बताया कि बाणासुर की रक्षा में तत्पर शिव को कृष्ण के हाथ में बुरी तरह से हार खानी पडी शैवों ने शिव के बडप्पन के बारे में तथा भागवत धर्मियों ने कृष्ण की विशिष्टता के बारे में कहानियां लिखीं. इस प्रकार अगणित शिव-लीलाएं, विष्णु-लीलाएं एवं कृष्ण-लीलाएं प्रचलित हुईं.

गोपाल कृष्ण

गोपाल कृष्ण की लीलाएं अथवा वे घटनाएं जिनमें उनके गोकुल में होने की बात कही जाती है, महाभारत में नहीं है. नारायणीय ग्रन्थ में भी नहीं है. पतंजलि ने भी इनका उल्लेख नहीं किया किन्तु बाद में निकले हुए हरिवंश, भागवत, आदि ग्रन्थ कृष्ण की लीलाओं से भरे पड़े हैं इतना तो महाभारत में मिलता है कि शिशुपाल ने पूतना आदि राक्षसों को मारने के कारण कृष्ण की निन्दा की किन्तु प्रोफेसर भण्डारकर ने साबित किया कि वह प्रक्षिप्त अंश है. संस्कृत महाभारत में गोपाल कृष्ण है ही नहीं, वासुदेव ही उसमें दृष्टिगत होते हैं तो फिर यह गोपाल कृष्ण कौन थे ? इसकी पूजा किसने की ?

ई सन के आरम्भ के पहले से लेकर ई सन की दूसरी सदी तक भूमध्य सागर के तटीय प्रान्त से झुंड के झुंड भारत में आये हुए आभीर (आज-कल ये लोग अहीर कहलाते हैं) लोगों के आराध्य थे गोपाल कृष्ण

ये आभीर खानाबदोश जाति के थे पहले ये मथुरा के आसपास, फिर गोकुल, वृन्दावन के आसपास के प्रदेशों में पशुगण चराते हुए निवास करते थे उस दशा में ये यादवों को लगान चुकाते थे, कर देते थे कुछ समय इस स्थिति में रहते हुए इन आभीरों ने बाद में द्वारका पर कब्जा कर लिया महाराष्ट्र तथा कोंकण प्रान्तों में भी इन्होंने राज्यों की स्थापना भी की इसलिए आभीरों के आराध्य गोपाल कृष्ण और यादवों के वासुदेव को एक ही कहा जाने लगा इस प्रकार की कहानिया कल्पित हुईं कि देवकी-वासुदेव का पुत्र कृष्ण गोकुल के नंद यशोदा के घर पला, और वहा उसने अनेक लीलाओं का प्रदर्शन किया इन कहानियों के कारण वासुदेव कृष्ण तथा ईसा मसीह में कुछ समानताएं दृष्टिगत हुईं.

आकाशवाणी ने कहा कि कृष्ण पैदा होंगे देवदूतों ने कहा कि ईसा पैदा होगा कृष्ण जेल में पैदा हुए. ईसा सराय में पैदा हुए कृष्ण को गोकुल में ले जाते समय यमुना नदी ने रास्ता दिया ईसा समुद्र पर चलकर अपने शिष्यों के पास पहुंचे

कृष्ण को खोजने के क्रम में कंस ने अनेक बालकों को मरवा डाला ईसा का सही स्थान मालूम न होने से, हेरोद ने कई बच्चों का वध करवाया कृष्ण यादव था, ईसा यहूदी था इनके पिता का नाम वासु-देव था, उनके पिता का नाम योसेफ था इसका नाम वासु था, तो उसका नाम ईसा (एसु) था इस प्रकार इधर कृष्ण के संबध में भागवत में वर्णन मिलता है, तो उधर क्राइस्ट के विषय में बाइबिल बताता है

कृष्ण लीला मानुष-विग्रह है. इसलिए उसने गायों को चराया, मक्खन की चोरी की, राक्षसों का वध किया, पांडवों को विजयी बनाया, विश्व रूप का प्रदर्शन किया और कर्म-ज्ञान-भक्ति योगों का उपदेश दिया इनके अलावा, गोप बालकों के साथ आंख-मिचौनी के खेल, सोलह हजार गोपियों के साथ रास-क्रीडाएं—इनके बारे में क्या कहना ! अद्भुत ! परम अद्भुत !

फिर धीरे-धीरे कृष्ण के बगल में राधा को खडा कर दिया गया राधा का प्रकृति तथा कृष्ण का परमात्मा कहकर वर्णन किया गया. जिन सोलह हजार गोपियों ने कृष्ण से प्रेम किया, उन सब को कृष्ण ने दर्शन दिये पुरुषों ने स्त्रियों से इस कृष्ण प्रेम में होड लगायी. मामला यहा तक बढा कि पुरुष स्त्रियो के वेष धारण भी करके प्रेम का स्वाग करने लगे.

पहले पुरुष परमात्मा की हैसियत से कृष्ण का ही स्थान ऊचा था परन्तु कुछ समय के बाद प्रकृति माता के रूप में राधा का ही स्थान ऊचा हो गया देश में शक्ति-पूजाओं तथा तांत्रिक विद्याओं का बढ़ना ही इसका कारण था इन शक्ति पूजाओं से वामाचार प्रबल हुआ. यह धारणा बन गयी कि म" कार पचक (मद्य, मत्स्य, मास, मिष्ठान्न, मैथुन) मोक्ष साधन हैं शैव, शाक्तेय, वैष्णव तथा बौद्धों ने होड़ लगाकर तांत्रिक विद्याओं की वृद्धि की

विलासी राजा तथा जमीदारों ने तांत्रिक-मांत्रिक पद्धतियों को प्रोत्साहित किया राजाओं की मनोकामनाओं के अनुकूल जिन धार्मिक प्रमुखों ने व्यवहार किया तथा जिन पंडितों ने ग्रन्थ लिखे, वे सुख-सुविधा से जीते रहे फलत भ्रष्टाचार बढा शोषण अधिक हुआ

अकाल और दुर्भिक्ष के शिकार बनकर साधारण प्रजा के दाने-दाने के लिए तरसते रहने पर भी शासकों या धार्मिक प्रमुखों के कानों पर जू तक न रेंगी बौद्ध पंडितों ने "सर्व मिथ्या" कहा तो ब्राह्मण पंडितों ने "जगन्मिथ्या" कहा कहा गया कि ये सारे कष्ट पूर्व जन्मों में किये गये पापों के परिणाम हैं, यह कहकर भोली जनता को तथाकथित धार्मिक उपदेश दिया गया कि चू किये बिना सभी कष्टों को सहन करो

इसके फलस्वरूप जनता की सहन-शक्ति की हद हो गयी जाति भेदों तांत्रिक-मांत्रिक पद्धतियों तथा शोषण के विरुद्ध आन्दोलन शुरू हो गये. जाति या कुल भेद की परवाह किये बिना वेद की शिक्षा देने के लिए रामानुजाचार्य ने कमर कसी उनका शिष्य तिरुप्पन्नाल्वार हरिजन था उसने वैष्णवों का पचम कहलाने योग्य "**तिरुवैमोलि**" ग्रथ की रचना की तेलघानी पेरते हुए अपनी गुजर-बसर करने वाले एजुदाचन ने मलयालम भाषा में **महाभारत** और **रामायण** की रचना करके नवीन धार्मिक सिद्धात प्रस्तुत किये कपडे सीते हुए आजीविका चलाने वाले नामदेव ने महाराष्ट्र में कुल भेद (जाति भेद) तथा मूर्तिपूजा का विरोध किया रामानद ने भी जाति भेद का विरोध करते हुए सारे देश में भ्रमण किया रामानद के शिष्यों में रैदास (चमार), कबीर (जुलाहा), दादू (कत्तिन), सना (नाई) जैसे लोग प्रमुख थे

इस प्रकार के सब सन्तों ने जाति भेद का विरोध करते हुए समाज सुधार का आन्दोलन चलाया तथा आम जनता की समझ में आने वाली लोक भाषा में पदों की रचना की उन दिनों में धार्मिक सिद्धान्तों के नाम पर, रीति-रिवाजों की आड में सामतवादी वर्गों की ओर से जो शोषण चल पड़ा और जो अत्याचार हुए उनका मुकाबला करने के लिए आम जनता को

अपने हथियार के रूप में भक्ति मार्ग को अपनाना पड़ा अतएव "शिव शंकर-शिव शंकर" कहते हुए रामानन्द, रामदास आदि ने प्रचार किया. "शरम-शरम" कहते हुए बीर शैवों ने धूम मचायी.

हिन्दुओं के भक्ति मार्ग के लिए मुसलमानों का सूफी मार्ग सहायक बन गया ख्वाजा मोहिउद्दीन चिस्ती, शेख निजामुद्दीन औलिया जैसे सूफी-सन्तों ने इस्लाम धर्म के मौलवी-मुल्लाओं तथा सुल्तानों के ऐशो-आराम व लूट-मार के खिलाफ आवाज बुलद की. उन्होंने कहा कि राम-रहीम एक ही हैं. उन्होंने ऐलान किया कि हिन्दू-मुसलमान सब एक ही खुदा के औलाद हैं. इग्लैंड, फ्रांस तथा जर्मनी देशों में प्रोटेस्टेण्टों ने जनता को संगठित करके शासक वर्ग तथा धार्मिक नेताओं द्वारा होने वाले शोषण का जिस प्रकार विरोध किया, उसी प्रकार भारत में भक्तिमार्गियों और सूफी पंथियों ने किया अत भक्ति मार्ग क्रमश प्रबल बना और जमीन्दार वर्गों द्वारा होने वाले शोषण का सामना करने की शक्ति से सपन्न जन आन्दोलन के रूप में परिणत हुआ

जनता के लिए राम नाम तारक मत्र बन गया आधू प्रांत के गाव-गाव में राम-नाम भजन का बोलबाला शुरू हुआ. राम सेना के दल के दल बनकर गावों में प्रचार करने लगे. साड खेलाने वाले तथा जगली कोय जाति के लोग भी राम-भक्त बने गोस्वामी तुलसीदास के लिखे रामचरित-मानस ने "रामराज्य" का नारा गूजा दिया

तब तक जनता में यह धारणा नही बनी कि श्रीराम भगवान का अवतार हैं यद्यपि दशावतारों में राम अवतार की गणना की जाती थी तथापि पाणिनीय ग्रन्थ में रामावतार का उल्लेख नही मिलता, अमर कोश मे भी उसका पता नही लगता आज तक भी सभी शुभाशुभ कर्मकांड मे "माधवाय नम., गोविंदाय नम, हरे श्री कृष्णाय नम" कहकर विष्णु की ही पूजा करते हैं, न कि "रामाय नम." कहकर पूजा करते हैं इसलिए यह कह सकते हैं कि राम के भगवान होने का विश्वास सामती वर्गों को शोषण तथा भ्रष्टा-चार के विरुद्ध चले हुए आन्दोलन के समय में ही पैदा हुआ होगा इसी दशा में उत्तर भारत में राम लीला की तथा दक्षिण भारत मे राम मंदिर निर्माण का प्रारम्भ हुआ. महाराष्ट्र में कृष्ण की बगल में से राधा को हटाकर रुक्मिणी को जोडने का काम भी उसी दशा में हुआ. इसी अवस्था में श्रृगार रस को हटाकर, भक्तिरस को प्रमुख स्थान देते हुए त्यागरूया ने श्रृगार रस को हटाकर, भक्तिरस को प्रमुख स्थान दिया गया चैतन्य महाप्रभु, वेमना, तुकाराम, रामदास, गुरुनानक जैसे महापुरुषो ने जन चेतना को जागृत करने तथा बढाने के द्वारा सामतवादी व्यवस्था के प्रति विद्रोह को प्रबल बनाया

पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य भारत, दक्षिण भारत, महाराष्ट्र और बंगाल के किसानों ने सघर्ष शुरू किये. दस्तगीर तथा व्यापारियों ने भी इन सघर्षों का समर्थन किया. तो भी जैसे पश्चिम यूरोप में जमीन्दार वर्गों के आधिपत्य को वहा की जनता ने पदच्युत किया, वैसे ये कर नहीं पाये.

इसका कारण भारत देश में ईस्ट इंडिया कम्पनी का अड्डा जमा लेना ही था. फिर भी जनता का श्रीराम को अवतार मानकर उसका कीर्तन, भजन तथा पूजन करना कम नहीं हुआ. इसके अतिरिक्त, कृष्ण से बढ़कर राम को ही महान कहकर साबित करने के कुछ प्रयत्न हुए

महाभारत तथा रामायण के बीच स्पर्धा

महाभारत की भगवद्गीता के मुकाबले राम गीता लिखी गयी किसी ने लिखा कि राम गीता को श्रीराम ने लक्ष्मण को सुनाया तो किसी दूसरे ने लिखा कि श्रीराम ने हनुमान को. कहा जाता है कि सीता ने हनुमान से इस तरह कहा—"मैं ही प्रकृति हू, रामायण की सारी घटनाएं मेरी इच्छा के अनुसार ही हुई राम का क्या है ? वे तो केवल निमित्त ही हैं" इस प्रकार सीता से कहलाकर राधा के मुकाबले में सीता को खडा किया गया

महाभारत में लिखा गया कि धर्मराज ने चार्वाक का वध किया. इसलिए रामायण में लिखा गया कि श्रीराम ने बुद्ध की भर्त्सना की तथा शम्बूक का वध किया. जिन पौराणिक विद्वानों ने कहा कि धर्मराज द्वापर-युगात के थे, और श्रीराम त्रेतायुग के थे, उन्होंने ही कहा कि कलियुग में उत्पन्न चार्वाक को धर्मराज ने मारा और राम ने बुद्ध की निंदा की **महाभारत** में स्पष्ट की गयी राजनीति का रामायण में अभाव होने से इसे एक कमी समझकर रामायण में लिखा गया कि राम ने भरत को राजधर्म की शिक्षा दी

चूकि **रामायण** में लिखा गया कि राम ने शिव धनुष तोडकर सीता से परिणय कर लिया, इसलिए **महाभारत** में लिखा गया कि मत्स्य को बंधकर अर्जुन ने द्रौपदी से पाणिग्रहण किया यदि रामायण में सीता को रावण के उठा ले जाने की बात थी, तो महाभारत में द्रौपदी को सैन्धव के उठा ले जाने की बात कही गयी

वैदिक वाङमय में कल्पित एक कथा मिलती है कि ब्राह्मण वृत्रासुर को मारने से इन्द्र को ब्रह्महत्या का पाप लग गया, जिसके फलस्वरूप इन्द्र को राज्यच्युत होकर अनेक विपत्तियों का शिकार बनना पडा, इसलिए **रामायण** में लिखा गया कि रावण ब्रह्म का वध करने से श्रीराम को भी ब्रह्म-हत्या के पाप ने घेर लिया, जिससे छुटकारा पाने के लिए श्रीराम ने अश्व-मेध यज्ञ करके भूसुरों को गोदान, भूदान तथा हिरण्य दान दिये

महाभारत में लिखा गया कि कुरुक्षेत्र युद्ध में ब्राह्मण द्रोण का ही नहीं, प्रत्युत समस्त बन्धु मित्र परिवार का भी सहार करने से धर्मराज को जो पाप लग गया, उससे मुक्त होने के लिए उन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया और भूदेवों को अन्यदानों के साथ अपना राज्य तक दान में दे दिया.

रामायण का नायक श्रीराम है, अत. श्रीकृष्ण को **महाभारत** कथा के सचालक के रूप में चित्रित किया गया यदि रावण एव कुम्भकर्ण का सहार श्रीराम ने किया तो कहा गया कि श्रीकृष्ण ने शिशुपाल का वध किया. अगर राम ने त्रेतायुग में पैदा होकर दुष्टों का अन्त करके शिष्यों की रक्षा की तो

श्रीकृष्ण के द्वापर युग में जन्म लेकर दुष्टों को दण्ड देने तथा शिष्यों को सहारा देने की बात कही गयी. ऋष्य श्रृंग, वशिष्ट, विश्वामित्र, परशुराम जैसे ऋषियों की कहानिया तो दोनो में भी जोड़ी गयीं.

इतना ही नहीं, शाखोपशाखाओं के विस्तार के बिना राम-उपाख्यान महाभारत में जोड़ा गया, इतना ही पुराणों में भी जोडा गया कुछ दूसरे कवियों ने उर्मिला देवी की, कुशलवों की, वाल्मीकि-चरित्र, जैसी कथाएं लिखीं.

पूर्व राम तपोवनानुगमन, हत्वामृग कांचनं
वैदेही हरण, जटायु मरण, सुग्रीव संभाषणं
वाली निग्रहण, समुद्रतरणं, लंकापुरी दाहनं
पश्चाद्रवण कुम्भकर्ण मरणं, चेंदट्रि रामायण ॥

इस प्रकार पंडितों ने एक ही श्लोक में पूरी रामायण कथा को निबद्ध कर दिया तो गवारों ने इसे सिर्फ तीन ही शब्दों में समाकर कह दिया—"बाधा, मारा और लाया।" और इसका विवरण यों दिया कि बाधा समुद्र को, मारा रावण को और लाया सीता को

इस तरह छोटी-बडी कितनी ही राम कथाएं निकलीं जिनमें कुछ तो मूलकथा से मिलती हैं और कुछ भिन्न हैं फिर भी यह बेशक कह सकते हैं कि जनता के दिलों पर जिसने अमिट छाप लगा दी वह वाल्मीकि द्वारा रची गयी रामायण ही हैं.

वाल्मीकि रामायण ने रक्त-सम्बन्ध को महत्व प्रदान किया उन्होंने इस बात की घोषणा की कि अगर कोई राज्य के लिए या संपत्ति के लिए षड्यंत्र रचें और उसके फलस्वरूप पारिवारिक झगड़े बढ़ें तो उनके कारण परायों की गुलामी में हमें फसना पड़ता है. इसके उदाहरण के रूप में सुग्रीव और विभीषण को उन्होंने दिखाया. पितृवाक्य-पालन, भ्रातृवात्सल्य, राज्य परि-त्याग इत्यादि को सबसे उत्तम आदर्श गुणों के रूप में उसने चित्रित किया. उसने यह सन्देश दिया कि पातिव्रत्य के साथ एकपत्नीव्रत भी न हो तो कोई लाभ नहीं होगा. दशरथ के पत्नी-भक्त होने के कारण ही उनके परिवार के सभी सदस्यों को कष्ट उठाना पड़ा अन्य की पत्नियों का अपहरण करने से ही वाली तथा रावण का सर्वनाश अनिवार्य हो गया.

इसके अतिरिक्त वह महाकाव्य था—आदिकाव्य था उसने नवीन छन्द को पुष्टि प्रदान की इतना ही नहीं, उसने लौकिक वाङ्मय का श्रीगणेश किया इसलिए सहृदय विद्वानों ने उनकी प्रशंसा की. इसी कारण कुछ स्वार्थ धनिक प्रमुखों तथा पंडितों ने अपने अनुकूल रामायण को मोड़ने के लिए उपयुक्त कथाओं को रचकर उसमें घुसा दिया बालकांड का विस्तार किया गया उत्तरकांड की सृष्टि की गयी. कुल मिलाकर वाल्मीकि के लिखे छ. हजार श्लोकों में अठारह हजार श्लोक मिलाये गये विष्णु के अवतार के रूप में राम का वर्णन किया गया. अन्यों के लिखे श्लोकों को वाल्मीकि के सिर मढ़ दिया गया प्रोफेसर भण्डारकर, जैकोबी जैसे विद्वानों ने भी ये बातें कही हैं

कुछ दूसरे विद्वानों ने दूसरे प्रकार से लिखा. अगस्त्य रामायण, दौर्वास रामायण, वशिष्ट रामायण आदि में दिखायी देने वाले राम बहुपत्नीक थे, सीता को मिलाकर उनकी कुल एक सौ उनतीस पत्नियां थीं. अथवा कम से कम तीन पत्नियां और अनेक दासियां थीं. इसलिए राम भी साधारण क्षत्रियों की तरह थे. ऐसा ही विश्वास दिलाने के लिए कुछ लोगों ने प्रयत्न किया. जैन, बौद्ध पंडितों ने यह धारणा फैलाने की कोशिश की कि राम की अपेक्षा रावण ही महान था

इस प्रकार की रचनाओं से वाल्मीकि का कोई सरोकार नहीं है. उन्होंने यह नहीं कहा कि श्रीराम, लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न यज्ञफल के रूप में पैदा हुए, अथवा श्रीराम विष्णु के अवतार थे उन्होंने इस जमाने के रीति-रिवाजों पर पर्दा डालने की चेष्टा भी नहीं की सुरापान से लेकर गोमांस-भक्षण तक वाल्मीकि रामायण में दृष्टिगत होते ही हैं

आलोचकों की बात चाहे कैसी भी हो, किन्तु साधारण जनता ने वाल्मीकि रामायण तथा उसके पात्रों को कैसे समझा ? इसका पता हमें निम्नलिखित गीत पढ़ने से लगता है

> श्रीराम हैं एक त्यागी, रावण हैं एक भोगी ।
> लक्ष्मण हैं एक योगी, भरत हैं एक विरागी ।
> कैकेई के वरदान शूर्पणखा के प्रणय जाल ।
> सीता माई का अशोकवास, लंका राज्य का सर्वविनाश ।

अगर इस प्रकार सामान्य जनता गाया करती है तो इससे हमें स्पष्ट विदित होता है कि वाल्मीकि-रामायण का किस प्रकार स्थायी प्रभाव देश में फैला

रामायण से महाभारत सहमत नहीं दीखता. महाभारत ने घोषित किया कि हमको चाहिए राज्य-सत्ता न कि राज्य परित्याग राज्य वीर-भोज्य है, अतः किसी न किसी प्रकार से उसे प्राप्त करना ही राजनीति है. इस नीति का अनुसरण करके तुम राज्य का पालन करो सुख-चैन से जीवन व्यतीत करो इसके लिए रुकावट बनने वाले गणधर्म का परित्याग करो वर्णाश्रम व्यवस्था का अनुसरण करो क्षत्रिय के लिए वांछनीय है विजय अथवा वीर-स्वर्ग. इसके सिवा और कुछ नहीं

रामायण तथा महाभारत का यह मौलिक अंतर जनता जानती है. इसीलिए उनके द्वारा प्राप्त होने वाले संदेशों का तथा नीति का स्पष्टीकरण करते हुए वे लोग गीत गाते रहते हैं—

> पिताश्री की बात मानी है श्रीराम ने
> अग्रज की बात मानी है लक्ष्मण ने
> अनुज भरत को दिया राज्य श्रीराम ने

"नहीं चाहता मैं राज्य", कहा भरत ने
राज्य के लिए बिना झगड़े भाई-भाई मिले रहे.
सुख-चैन से जीते रहे.
मागा अपना आधा राज्य पांडवों ने
इनकार किया देने से राज्य कौरवों ने
भाई-भाई लड़े होकर निर्मम राज्य के लिए आपस में
बचा नही एक भी पुरुष कुरुक्षेत्र के संग्राम में

साराश के रूप में लोग कहते हैं कि यदि भाई-भाई मिलकर रहे तो वह रामायण है, अगर वे अलग-अलग होकर आपस में लड़ते हैं तो वह महा-भारत है. अत: हम कह सकते हैं कि जनता ने रामायण और महाभारत की कथाओ को ठीक ही समझा है.

यद्यपि महाभारत ने भाई-भाई के बीच युद्ध का समर्थन किया, तथापि पुराण कथाओं में उसका एक विशिष्ट स्थान है. उस जमाने में भारत उप-महाद्वीप में निवास किये हुए कई कबीलों और जातियों के रीति-रिवाज, सभ्यता-सस्कृति, नीति एव धार्मिक सिद्धान्तों के साथ भौतिक-आध्यात्मिक-वाद, तर्क-मीमासा शास्त्र, साख्य, योग, वैशेषिक, न्याय दर्शनों के सूत्र आदि अनगिनत विषय उसमें उपलब्ध हैं. नियति, स्वभाव, यादृच्छ एव परि-णाम वादों के सिद्धान्त उसमें मिलते हैं. तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्थाओं का विस्तृत परिचय उसमें मिलता है. आज भी अमल करने योग्य विदुर-नीतिया उसमें हैं भीष्म के द्वारा बताये गये धर्म-सूत्र उसमें हैं फिर भी यह कहकर उनसे घृणा करने वाले हमें दृष्टिगत होते हैं कि महाभारत झूठ है, रामायण राड है. वैसे लोगों को पहले हमारे समाज के गुण-दोषों का अनुशीलन करना जरूरी है

आज भी हमारे देश में जहा-तहा देवर-न्याय, बहुपतित्व के रिवाज मौजूद हैं जगली कबीले तथा असभ्य जातिया हैं. स्वच्छद सभोग हैं. गुप्त काम-लीलाए तो हमारे देश में ही नहीं, बल्कि ससार के अनेक देशों में दिन-प्रतिदिन बढ रही हैं हमारे देश मे भ्रष्टाचार, अधर्म, तात्रिक-मात्रिक क्रियाए, कुटिल राजनीति, कुटिल बुद्धिया, धोखाधडी, एक के परिश्रम का फल दूसरे का भोगना, कुल-भेद, जाति-भेद, धर्म-भेद आदि अत्यधिक मात्रा में दृष्टिगत हो रहे हैं अत्यधिक उच्च शिक्षित लोग ही नही, बल्कि विज्ञान-शास्त्र के विशेषज्ञ भी अपनी भाजियो से विवाह कर ले रहे हैं भाई-भाई अथवा भाई-बहन की सतानों के बीच में भी शादिया हो रही हैं. यद्यपि तीन हजार वर्ष पूर्व ही हमारे पूर्वजों ने मना किया कि सगोत्र तथा सपिंड विवाह अच्छे नहीं हैं तथापि हमने उन्हें नहीं छोड़ा फिर भी हम यदि कहें कि रामायण और महाभारत की कथाओं के पात्र अश्लील और असभ्य हैं, वे दोनों ग्रन्थ अभूत कल्पनाओं से भरे हैं, इसलिए उन्हें जमीन में गाड देना है तो कितना शोचनीय होगा

रामायण तथा महाभारत के शत अवतार ग्रहण करने पर भी ऐतिहासिक सूक्ष्म दृष्टि से उसका अनुशीलन करना आवश्यक है. ऐसा न करके यह समझना कि भगवान ने ही स्वयं वाल्मीकि महर्षि तथा वेदव्यास को उनकी कथाएं सुनायीं, अथवा उन दोनों ने दिव्य दृष्टि से सारी बातों को समझकर उन्हें लिखा है बिल्कुल गलत है. फिर भी यह सोचकर कि वे दोनों ग्रन्थ किसी काम के नहीं है अथवा लोगों के दिलों पर नशीली दवा छिड़क कर मूढ़ विश्वासों को बढ़ाने वाले हैं, उनको फेंक देना भी उचित नहीं है.

परिशिष्ट

हमारे पूर्वजों द्वारा कहे गये युगों, दिव्य युगों तथा मन्वंतरों का विवरण

१.	कृतयुग की काल अवधि	१७,२८,००० वर्ष
२	त्रेतायुग की काल अवधि	१२,९६,००० वर्ष
३	द्वापर युग की काल अवधि	८,६४,००० वर्ष
४	कलियुग की काल अवधि	४,३२,००० वर्ष
	इन चारों युगों का कुल समय मिलाने से एक दिव्य युग होता है अत एक दिव्य युग की काल अवधि	४३,२०,००० वर्ष

ऐसे ७१ दिव्य युग मिलकर एक मन्वंतर बनते हैं सृष्टि की आदि से लेकर स्वायम्भुव, स्वारोचिष आदि छ मन्वतर अब तक बीत गये. सातवें मन्वतर वैवस्वत मन्वतर में अब तक २७ दिव्य युग समाप्त हो गये. २८वें दिव्य युग में कृत, त्रेता, द्वापर युगों के बीतने पर कलियुग में आज तक सिर्फ ५०८२ साल गुजरे हैं.

अत इससे स्पष्ट है कि वैवस्वत मन्वतर में २८ द्वापर युग व्यतीत हुए कहा गया कि २४वें द्वापर युग में वाल्मीकि ने जन्म लेकर वेदविभाजन करके वेदव्यास के नाम से विख्यात होकर **रामायण** महाकाव्य भी लिखा था फिर यह भी कहा गया कि २६वें द्वापर युग में पराशर पैदा हुआ और २८वें द्वापर युग में उस पाराशर से कृष्ण द्वैपायन का जन्म हुआ उसने वेदविभाजन करके वेदव्यास नाम से प्रसिद्ध होने के अलावा महाभारत की रचना भी की थी.

●

- धर्म का प्रचार-प्रसार उस पर चलने से आचरण करने से होता है।

- धर्म को जानना अलग बात है किन्तु उसे जीवन में उतारना अलग बात। धर्म को अंगीकार करना श्रद्धा एवं विश्वास के बिना संभव नहीं।

- जिस प्रकार अंधकार और प्रकाश एक साथ नहीं रहते उसी प्रकार धर्म और अधर्म एक साथ नहीं रह सकते।

- आधुनिक विज्ञान ने आज तक मोह को क्षीण करने का कोई रसायन तैयार नहीं किया। धर्म ही वह रसायन है जो मोह को क्षीण कर देता है।

- धर्म और मोह ये दोनों विपक्षी दल है। मोह धर्म को दबाना चाहता है और धर्म मोह को।

- आज धर्म का नाम लेकर मोह का प्रचार-प्रसार खूब हो रहा है किन्तु वस्तुतः मोह के ऊपर प्रहार करने का नाम ही धर्म है।

- दीन-दुखी जीवो को देखकर जो व्यक्ति ऑखों में करुणा का पानी नहीं लाता, उस पाषाण जैसे हृदय से कभी भी धर्म की अपेक्षा नहीं रखी जा सकती।

- धर्म का अर्थ यही है कि दीन-दुखियों को देखकर आँखों में करुणा का जल छलके, अन्यथा नारियल में भी छिद्र हुआ करते है।

- शरणागत दीन-दुखी असहाय जीवों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना, उन्हें संकटों से बचाकर पथ प्रशस्त करना यही क्षत्रिय धर्म है।

- जिसने धर्म रूपी कील का सहारा लिया है, जिसने रत्नत्रय का सहारा लिया है वह तीन काल में पिस नहीं सकता क्योंकि केन्द्र में हमेशा सुरक्षा रहती है और परिधि में घुमाव।

> भाग्य भला वह क्या रहा उदय कर्म का भाव।
> वहाँ देख मत, देख ले, जहाँ धर्म का भाव ॥८८॥

- दो ही धर्म का व्याख्यान शास्त्रों में आता है एक अनगार और दूसरा सागार। तीसरा कोई धर्म नहीं है, हाँ! धर्मशाला अवश्य है ।

- श्रावक और मुनि दो तरह के धर्म हैं जिसमें श्रावक धर्म अनुष्ठान प्रधान होता है और मुनि धर्म अध्यात्म प्रधान ।

- धर्म से बढ़कर कोई भी नेकी नहीं और अधर्म से बढ़कर कोई बुराई नहीं ।

- धर्म के क्षेत्र में नाम नहीं काम जाना जाता है अन्यथा काम के अभाव में नाम भी बदनाम हो जाता है ।

- आप लोग जिस तरह धन की रक्षा करते हैं उससे भी बढ़कर आपको धर्म की रक्षा करना चाहिये । क्योंकि धर्म के द्वारा ही जीवन का निर्माण होता है।

- यह जड़ की पूजा, धन की पूजा ही संसारी प्राणी को पतन के गर्त में ढकेल रही है। आत्मा की, गुणों की पूजा ही धर्म का आधार है अतः हमें जड़ की नहीं चेतन की पूजा करनी चाहिये ।

- हम धर्म की ज्यादा प्रभावना कर रहे हैं दूसरे नहीं । इस प्रकार के भाव जिसके मन में हैं वह धर्म की बात समझ ही नहीं रहे हैं वह अभी धर्म से कोशों दूर हैं ।

- धर्म की प्रभावना परमत का खण्डन करते हुये नही किन्तु स्वमत का मण्डन करते हुये करना चाहिये ।

- गंधहीन पुष्प को व्यक्ति सूंघ रहा है और सोच रहा है कि गंध क्यों नहीं आ रही है, यानि व्यक्ति धर्म के बिना जीवन जी रहा है कि और सोचता है कि धर्म का फल क्यों नहीं मिल रहा है ।

दया धर्म का मर्म है अदया भाव अधर्म ।
अधर्म तज प्रभु धर्म ने समझाया मुनि धर्म ॥ ८६॥

- धर्म का फल कभी निष्फल नहीं जाता । यह बात अलग है, उसके स्वाद में अन्तर आ सकता है अपने हीनाधिक परिणामों के कारण ।

- धर्म के क्षेत्र में आस्था और सद्भावना के साथ यदि हम तप त्याग के छोटे-छोटे बीज भी बो देते हैं तो कुछ ही समय में वह शीतलता प्रदायी विशाल वटवृक्ष का रूप धारण कर लेता है ।

- यदि आकाश समुद्र के जल का पान एवं दान बंद कर दे तो स्वयं समुद्र काँप उठेगा। यदि धर्म, त्याग और दान कराना बंद कर दे तो मानव जीवन गंदगी और दुर्भावनाओं की अग्नि से जलकर खाक हो जायेगा।

- जैसे माँ अपने बच्चे को जबरदस्ती दूध नहीं पिला सकती यदि पिला भी दे तो वह वमन कर देता है । ठीक इसी तरह धर्म की स्थिति है, जबरदस्ती ग्रहण कराया गया धर्म अन्दर तक नहीं पहुँच पाता ।

- लघु बनकर नही गुरु बनकर ही धर्म का दान दिया जाता है किन्तु गुरु बनकर नहीं लघु बनकर ही कर्म का हान किया जाता है । यह तो बाहरी बात हुई, न लघु बनकर न गुरु बनकर बल्कि अगुरुलघु बनकर ही धर्म का पान किया जा सकता है ।

- हम "**अहिंसा परमो धर्मः**" का नारा तो बहुत लगाते हैं पर फिर भी हम जीवन में किनारा नही पाते, कारण सिर्फ इतना है कि समय आने पर हम धर्म से किनारा कर जाते हैं ।

- धर्म के बिना जीना भी क्या जीना ? नीतिकारों ने कहा है - मर जाना फिर भी अच्छा है लेकिन धर्म के बिना जीना अच्छा नहीं । धर्म के अभाव में जीवन, जीवन नहीं अभिनय मात्र है ।

- धर्मात्मा, अधर्मात्मा को भी अपने जैसा बनाने का भाव रखता है ।
- धर्मात्मा वही है जो किसी दूसरे धार्मिक व्यक्ति के धर्म भावों को ठेस न

पहुँचाये ।

- धर्मात्मा को धर्म प्रिय होना चाहिये, स्थान नहीं ।
- धर्मी के अभाव में धर्म और धर्म के अभाव में धर्मी नहीं रह सकता । **'न धर्मो धार्मिकैर्विना''** इसलिये यदि आप धर्म को चाहते हो तो धर्मात्मा के पास जाना ही होगा ।
- लोग कहते हैं धर्म संकट में है, धर्म गुरु संकट में हैं, जिनवाणी भी संकट में है किन्तु मैं कहता हूँ ये तीनों संकट मुक्त हैं तभी मुक्ति के साधन हैं । संकट तो हमारे ऊपर है । संकट तभी आते हैं जब हमारे भीतर ये तीनों जीवित नहीं रहते।
- दुख दूर हो तथा शान्ति की प्रस्थापना हो इसलिये धर्म का उपदेश होता है।
- विषयों में रुचि जगाने के लिये धर्मोपदेश नहीं है बल्कि मोक्षमार्ग में रुचि जगाने के लिये धर्मोपदेश है ।
- धार्मिक कार्यो में प्रारंभ से लेकर अंतिम दशा तक जितनी भी क्रियायें होती है, वे सब संसार से छूटने के लिये ही है ।
- अरहन्त पूजा, भक्ति, दान आदि प्रशस्त चर्या है । इसके द्वारा पुण्य का संचय तो होता ही है, साथ-साथ क्रमशः यानि परम्परा से निर्वाण की प्राप्ति भी होती है ।
- जिनेन्द्र भगवान् की पूजा करना, शील का पालन करना उपवास करना तथा सत्पात्रों को दान देना ये चारों धर्म श्रावकों के लिये नित्य करने योग्य कहे गये हैं ।

गुरु गुरुता तज गुरु चरण रज ता पा गुरुताय ।
यह मुनि-मन, गुरु भजन में निशि दिन क्यों न लगाया॥६९॥

- जो व्यक्ति दान, पूजा, शील और उपवास को जड़ की क्रिया कहता है, वह आगम का अपलाप कर रहा है । उसे अभी आगम का सही-सही ज्ञान नहीं है । वह तो अपना अहित कर ही रहा है किन्तु उसके उस उपदेश से सारी की सारी जनता भी अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जायेगी। बंधुओ! यह उपदेश प्रणाली ही आगम विरुद्ध है क्योंकि आचार्यों का कहना है कि यह सब जड़ की क्रियायें नहीं बल्कि धर्म की क्रियायें हैं।

- धर्म के माध्यम से ही जीवन में निखार आ सकता है धर्म के माध्यम से ही सारी की सारी योजनायें सफल होने वाली है, केवल एक शर्त है कि हमारी दृष्टि भीतर की ओर हो ।

- उत्सर्ग और अपवाद दोनों मार्गों का कथन आगम में आया है । जो व्यक्ति किसी एक मार्ग को भूल जाते हैं वह फेल हो जाते हैं, दोनों में साम्य होना जरूरी है ।

- यदि जीवन में धर्म है तो बाह्य वैभव सम्पदा से क्या प्रयोजन और यदि धर्म नहीं है तो भी अन्य वैभव सम्पदा से क्या प्रयोजन ।

- जिस प्रकार घर में आग लगने पर कुआँ खुदवाने से कोई लाभ नहीं होता उसी प्रकार वृद्धावस्था में धर्म का मार्ग अपनाने पर अपेक्षित लाभ नहीं होता ।

- देह से परे आत्मा के अस्तित्व का ज्ञान, विज्ञान की पकड़ से परे है । इसका विवरण मात्र धर्म ग्रंथों में ही मिलता है ।

- मोक्ष की ओर दौड़ लगाने वाला यह युग धर्म का नाम तो लेता है किन्तु धर्म की भावना नहीं रखता, सुख-शान्ति चाहते हुये भी उसके पथ पर चलना पसंद नहीं करता।

अपार गुण के पुंज हैं अघ बन्ध अवतार
पार पहुँचे तिन नमूँ प्रणाम बारम्बार ॥८२॥

गुरु गरिमा

- गुरुवचन आपत्तियों में भी पथ प्रदर्शित करते हैं ।
- गुरुवचन जिनशासन में उपकरण माने गये हैं ।
- पथ और पथप्रदर्शक के अभाव में पथिक भटक जाते हैं ।
- गुरु के अभाव में गुरु के पदचिन्ह ही हमारे लिये दर्पण का काम करते हैं ।
- गुरु के द्वारा दिये गये निर्देश दीपक की तरह हमारे पथ को आलोकित करते हैं ।
- जिसे गुरुओं द्वारा राह मिल जाती है फिर उसके लिये किसी तरह की परवाह नही होती है ।
- जीवन में गुरुओं से अपने लिये जो कुछ भी मिला है उसे दीपक की भाँति प्रकाशमान रखे एवं प्रकाश में ही जियें ।
- वास्तव में गुरु वही हैं जो अन्तरंग में छाये हुये अंधकार को दूर कर प्रकाश प्रदान करते है ।
- दृष्टि और चरण दोनों के लड़खड़ाने पर जो सहारा देते है, वास्तव में वे ही प्राज्ञ हैं वे ही गुरु हैं ।
- यह बात ठीक है कि आँखे हमारी है, दृष्टि हमारी है लेकिन उसका उपयोग कैसे करना है? यह हमें गुरु ही सिखलाते हैं, यही तो गुरु की महिमा है ।

खारे सागर क्षार है मम गुरु मधुर अपार ।
क्यूँ ज्ञानसागर गहूँ भवसागर का पार ॥६३॥

- सावधानी से चोट देकर पतितों के जीवन की खोटों को निकालने वाले पतितोद्धारक वे शिल्पी गुरु ही हैं जो बदले में कुछ भी नहीं चाहते। धन्य हैं उन गुरुओं की महती अनुकम्पा को।

- मिट्टी के अन्दर कई तरह की शक्तियाँ विद्यमान हैं वह यदि दलदल बन सकती है तो कुंभ भी। कुशल कुंभकार का योग पाकर वह पतित मिट्टी भी पावन कुम्भ बन जाती है।

- हमारे गुरु आशावान नहीं बल्कि आशा पर नियंत्रण रखने वाले होते हैं।

- गुरु कृपा के उपरान्त भी आलसी की कभी उन्नति नहीं हो सकती।

- शिष्य वही कुशल है जो उपदेश में भी आज्ञा/आदेश को निकाल लेता है।

- सच्चा शिष्य गुरु आज्ञा मिलने पर अहो भाग्य की अनुभूति करता है।

- शिष्य के द्वारा की गई विनय भक्ति को प्रसन्नता से स्वीकारना ही गुरु के द्वारा किया गया शिष्य का बहुमान है।

- हमें सबकी बातें तो सुनना है लेकिन सबका जबाव नहीं देना। गुरु ने सुनना सिखाया है बोलना नही।

- गुरु से दूसरों को क्या-क्या आदेश मिले हैं। इसकी ओर ध्यान न देकर गुरु ने हमें क्या आदेश दिये है, इसका ध्यान रखे तथा उत्साह पूर्वक पूर्ण करने का प्रयास करें।

- गुरु स्वयं तो सत्पथ पर चलते ही है, दूसरों को भी चलाते हैं। चलने वाले की अपेक्षा चलाने वाले का काम अधिक कठिन है।

युगों युगों से युग बना विषम अघों का गेह।
युग दृष्टा युग में रहे पर ना अघ से नेह ॥८६॥

- यद्यपि बच्चा चलता अपने पैरों से है तथापि माता-पिता की अँगुली उसे सहायक होती है । इसी तरह शिष्य स्वयं मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति करता है परन्तु गुरु की अँगुली, गुरु का संकेत उसे आगे बढ़ने में सहायक होता है ।
- भगवान् की वाणी को हमारे पास तक पहुँचाने वाले वे गुरु गणधर ही हैं । उन्हीं से गुरु परम्परा प्रारंभ हुई है गुरु पूर्णिमा के रूप में ।
- इन्हीं महान गुरुओं ने ही उस दिव्य वाणी को शास्त्र रूप प्रदान कर आगम परम्परा को सुरक्षित किया है अतः इस गुरु परम्परा का हम सब पर महान उपकार है ।
- जिनवाणी और सच्चे गुरुओं की शरण हमें मिली इससे बड़ा सौभाग्य और क्या हो सकता है ? हमारे जैसा बड़भागी और कौन हो सकता है । लेकिन अकेले बड़भागी मानकर यहीं पर बैठना नहीं किन्तु उस ओर कदम जरूर बढ़ाना जिसका कि हमें संकेत मिल रहा है ।
- गुरु का उपकार शिष्य को दीक्षा-शिक्षा देने में है और शिष्य का उपकार गुरु द्वारा बताये मार्ग पर सही-सही निर्देशन के अनुसार चलने में है । जब तक उनके अनुसार नहीं चलेंगे तब तक अपने गुरुओं के द्वारा किये गये उपकार को हम प्रति उपकार में नहीं बदल सकते ।

शास्ता/शासन

- "तीर्थं करोति इति तीर्थंकरः" जो तीर्थ का प्रवर्तन करने वाले होते हैं वे तीर्थंकर कहलाते है ।
- जिनके माध्यम से सारा का सारा संसार तिर जाता है उसे तीर्थंकर कहते हैं।

- महावीर भगवान् उस जन्म को इष्ट बुद्धि से नहीं देखा करते थे। आप लोगों को जो पसंद आ रहा है स्वयं सोचिये क्या वह महावीर को पसंद था।

- महावीर ने किसी बात पर अपने जीवन को बाँधा नहीं था। महावीर का जीवन तटस्थ नहीं किंतु आत्मस्थ था, स्वस्थ था। तटों को बाँधने वाले महावीर नहीं थे तट अवश्य उन महावीर प्रभु को चाहते थे।

- दुनिया की ओर मत देखो, अपने आपको देखो। भगवान् महावीर ने कभी दुनिया की ओर दृष्टिपात नहीं किया, यदि किया है तो दुनिया के पास जो गुण हैं उन्हें लेने का प्रयास किया। महावीर में अपने को देखो, अपने 'मैं'' को देखो महावीर में।

- हमारे सामने केवल "मैं" ही रह जाये तो उसमें से अनेक महावीर फूट सकते हैं, अनेक राम अवतरित हो सकते हैं। अनेक पाण्डव उस "मैं" की गहराई से जन्म ले सकते हैं।

- जिस व्यक्ति के जीवन में शासन के प्रति प्रेम नहीं अर्थात् जिन शासन के प्रति गौरव नहीं, उसके जीवन में प्रभावना होना तीन काल में भी संभव नहीं।

- जैन शासन में किसी व्यक्ति विशेष की पूजा नहीं है क्योंकि यहाँ पर नाम की नहीं गुणों की पूजा होती है।

- जैन शासन में जो पंथ चलते है वे सागार और अनगार के हैं। अविरत सम्यग्दृष्टि का कोई पंथ नहीं होता वह तो उन दोनों पंथों का उपासक मात्र है।

- जिन भगवान् की उपासना करने वाले जैन माने जाते हैं यानि हमारे साथ ऐसे भगवान् का नाम जुडा हुआ है जो राग-द्वेष, विषय-कषाय और आरंभ परिग्रह से रहित हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि हम जैन हैं तो जैनों जैसा कार्य भी होना चाहिये। जिनोपदिष्ट सिद्धान्तों का अनुकरण भी करना चाहिये।

- सपूत 'कुल का दीपक' माना गया है। देश की, वंश की, धर्म की परम्परा में जो चार चाँद लगा देता है वही सपूत है। हम अपने आपसे पूछ लें कि हम अरहंत भगवान् के पूत हैं, सपूत हैं या - - -। कहने की आवश्यकता नहीं हमारी जीवन चर्या ही हमारा आचरण बता देगी।

- देशना आदेश नहीं परामर्श है, आज्ञा नहीं राय है मात्र सलाह है।

- सत् सन्तों का लक्षण आगम की आज्ञा पालने में है। पूत का लक्षण पालने में नही गुरु की आज्ञा पालने (मानने) में है।

- महापुरुषों ने अनुभवों के आधार पर जैसा प्रतिपादन किया है हमें वैसा ही अपना जीवन बनाना चाहिये।

- हमारे पास क्या है? केवल छोड़ने के लिये राग-द्वेष विषय-कषयों के अलावा और कुछ भी तो नही है। आपको हम किन वस्तुओं को दिखाकर खुश कर सकते हैं भगवन्? आप हमारी वस्तुओं से खुश भी नहीं होंगे - - - लेकिन उन वस्तुओं के त्याग से अवश्य खुश होंगे।

- अहिंसा आदि व्रत संकल्पों को साकार रूप देने से ही हम भगवान् महावीर के सिद्धान्त तथा पथ को अक्षुण्ण बनाये रख सकते हैं।

- साधु का रास्ता तो मनन और चिन्तन का रास्ता है। उसकी यात्रा अपरिचित वस्तु से परिचय प्राप्त करने का उत्कृष्ट प्रयास है।

- जिस दिन आत्मदर्शन की खोज में निकलोगे उस दिन सभी पोथियां बन्द हो जायेंगी। फिर दृष्टा बन जाओगे वैज्ञानिक नहीं।

- जिसे दर्शन का सार मिल गया उसे देखना मात्र नहीं है अपितु अनुभव में लाना चाहिये और बाह्य प्रदर्शनों के चक्करों से स्वयं को पृथक् रखना चाहिये।

- लक्ष्य बनाओ भार उतारने का और यह तभी हो सकता है जब याद रखोगे - तेरा सो एक, जो तेरा है सो वह एक आत्म तत्त्व है।

- केन्द्र तक पहुँचने के लिये परिधि का त्याग परमावश्यक है। प्रायः करके परिधि में जो घूमता है उसे केन्द्रबिन्दु प्राप्त नहीं हो पाता। आनंद, केन्द्र में है परिधि में नहीं।

- बाहरी चमक-दमक के कारण ही भीतरी आभा का परिचय नहीं हो पा रहा है। ध्यान रखिये वह आत्म आभा भौतिक साधनों की पकड़ से परे है। उसका मात्र संवेदन किया जा सकता है।

- यह मुनि का पद मुनि की मुद्रा अपने आपमें सर्वोत्कृष्ट है। इससे बढ़कर कोई पद नहीं है, अतः इस पद के साथ दीनता और विद्रूपता नहीं आनी चाहिये।

- दिगम्बर मुनि मुद्रा ही एक ऐसी मुद्रा रह गयी है इस संसार में जिसके पीछे रोटी है और बाकी जितने भी हैं वे सब रोटी के पीछे हैं।

- अकेले दिगम्बरत्व और पिच्छी कमण्डल लेने मात्र से मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती, जितना यह सत्य है उससे भी बड़ा सत्य यह है कि इसके बिना भी कभी मुक्ति नहीं हो सकती।

- मात्र साहित्य से ही प्रभावना का काम नहीं चलता। यदि हमारे पास क्रिया है, दिगम्बर मुद्रा है तो साक्षात् महावीर भगवान् को हम देख सकते हैं।

- विश्व में बहुत सारे मार्ग (परम्पराओं) को बताने वाले साहित्यमात्र हैं किन्तु श्रमण संस्कृति में साहित्य के अनुरूप आदित्य (चर्या) भी है। इस चर्या की वजह से ही यह दिगम्बर परम्परा आज तक जीवित है यह हम सभी के महान पुण्य एवं सौभाग्य का विषय है।

- इस श्रमण चर्या को देखकर ही हम यह अंदाज लगा सकते हैं कि तीर्थंकर आदिनाथ और भगवान् महावीर कैसे थे।

- दिगम्बरत्व ही एक ऐसा बाँध है जिसे लाँघने का साहस परवादियों में नहीं हो सकता। ज्यों ही यह बाँध टूटेगा त्यों ही धर्म का निर्मल स्वरूप नष्ट हो जायेगा।

- दिगम्बरत्व धूप के समान है। उसका उपयोग चाहे जितना करें, मगर उसे बाँधने का प्रयास न करें, वह धूप है बाँधने से बँधेगी नहीं।

- दिगम्बर मुनियों की चर्या ऐसी है जिसका मूल्य नहीं आंका जा सकता। वह अनमोल है। आज भी दिगम्बर संत उसका पालन कर रहे हैं। आचार्य कुंदकुंद स्वामी ने तो इस चर्या (मुद्रा) के लिये महान से महानतम उपमायें दी हैं। जैसे कि यही जिनागम है यही तीर्थ है, यही सर्वस्व है। अतः इस चर्या का कभी भी अनादर नही करना चाहिये।

- सिर्फ प्रासुक आहार ही नहीं अपितु प्रासुक जमीन की ओर भी श्रावकों का ध्यान जाना चाहिये तभी यह निर्ग्रन्थ चर्या जीवित रह सकेगी।

संस्कृति-प्रवाह

- कृति और कर्म की उतनी कीमत नहीं जितनी की संस्कृति की।
- संस्कृति की रक्षा और देश की उन्नति हमारी सुमति पर ही आधारित है।
- प्रकृति की रक्षा करने पर ही संस्कृति की रक्षा संभव है।
- भारतीय संस्कृति एवं मानवता को आज सिंहों से नहीं नरसिंहों से ज्यादा खतरा है।
- अर्थ के विकास में अनर्थ न हो और सहयोग का भाव बनाये रखें यही तो हमारी संस्कृति है।
- अपनी संस्कृति की बातों का ध्यान रखो, हम जैन हैं अतः जैन होने के नाते अपनी प्रवृत्तियों को संयमित रखना चाहिये।
- ईमानदारी, न्यायनीति व धर्म संस्कृति की रक्षा में अपने दायित्व को कभी नहीं भूलना चाहिये। उसे सही अर्थों में निभाना ही हमारा कर्त्तव्य है।
- जीवन की समृद्धि, कुल, वंश, धर्म, संस्कृति व राष्ट्रीय परम्परा को सुरक्षित रखने पर ही हो सकती है।

- भारतीय संस्कृति ज्ञान को महत्त्व न देकर, जिससे ज्ञान नियंत्रित होता है ऐसी आस्था को महत्त्व देती है।

- केवल आर्थिक दृष्टि ही भारतीय संस्कृति नहीं है बल्कि यहाँ परमार्थ का भी पुरुषार्थ होता है।

- पाश्चात्य के देश शब्दों को महत्त्व देते हैं जबकि भारत देश अनुभव को ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मानता है।

- कृति कभी कर्त्ता से बड़ी नहीं हो सकती किन्तु आज कर्त्ता मकड़ी की तरह अपने ही जाल में उलझ रहा है।

- जिस प्रकार नदी अपने अस्तित्व को खोकर ही समुद्र बनती है उसी प्रकार अपने क्षुद्र अस्तित्व को खोकर ही यह आत्मा परमात्मा बनती है।

- संस्कार के बिना संसार में कोई भी आत्मा पतित से पावन नही बन सकती।

- जैसे दुग्ध मे से निकला हुआ शुद्ध तत्त्व घृत पुनः दुग्ध रूप परिवर्तित नहीं होता ठीक इसी प्रकार मुक्त होने के बाद यह आत्मा लौटकर पुनः संसार में नहीं आती।

- जैसे दधि मन्थन के बिना नवनीत और घृत की उपलब्धि संभव नहीं, ठीक इसी तरह आत्ममंथन के बिना परमात्मपद की प्राप्ति नहीं।

- भगवान् का जन्म नही होता किंतु जो भगवान् बनने वाले होते हैं उनका जन्म होता है।

दृश्य हेय अदृश्य तजूँ ध्येय बना निज द्रव्य।
कीलित कर निज चित्त को पाऊ शिव सुख दिव्य॥१०३॥

- भगवान् जन्मते ही मुक्ति नहीं पाते किन्तु जन्म से ही मुक्ति पा लेते हैं।

- "कोई दुनिया के पीछे पड़े हैं व किसी के पीछे दुनिया पड़ी है ।" भगवान् कभी दुनिया के पीछे नहीं देखते, दुनिया भगवान् के पीछे देखती रहती है ।

- जो व्यक्ति मरण से डरता है वह तीन काल में जी नहीं सकता, यह मरण ही हमारे लिये प्रकाश प्रदान करने वाला है और यह उद्भव हमें भव-भव तक भटकाने वाला है । आप जन्म की पूजा नहीं करिये, जन्म संसार का प्रतीक है ।

- हमारी क्षणिक बाह्य भौतिक निधि को कोई भी ले सकता है नष्ट कर सकता है किन्तु भीतरी निधि को मिटाने वाला इस धरती पर कोई नहीं है । वह थी, है, और आगे भी रहेगी ।

- राग और अविद्या इन दोनों कारणों से ही यह संसारी प्राणी अंधा बना हुआ है । अगर ये दोनों नही हैं तो वह शीघ्र ही अपना आत्म कल्याण कर सकता है ।

- अग्नि की पिटाई तभी तक होती है जबतक वह लोहे की संगति करती है ठीक इसी प्रकार देह की संगति करने से आत्मा की पिटाई हो रही है और जब तक आत्मा देह की संगति करेगी तब तक उसकी पिटाई होती रहेगी ।

- विश्व में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो मोह की चपेट में नहीं आया हो लेकिन जो इसकी रहस्यपूर्ण शक्ति को पहचान कर उस पर प्रहार करता है वही संसार से पार हो जाता है ।

- पथ एक ही है, मार्ग एक ही है। जो सामने चलता है वह मुक्ति का पथ चाहता है और जो रिवर्स (उल्टा) में चलता है वह संसार का पथ चाहता है।

- आज जो यद्वा तद्वा व्यापार कर रहा है, घूसखोरी करके जो बड़ा बनने का प्रयास कर रहा है वह सन्मार्ग से पतित हो रहा है।

- जब तक भीतर आत्मा के परिणाम उज्ज्वल नहीं होंगे, हमारा आचार-विचार उज्ज्वल नहीं होगा तब तक हमारा संबंध महावीर भगवान् के साथ, आचार्य कुंदकुंद स्वामी, आचार्य समन्तभद्र आदि के साथ नहीं रहेगा।

- धार्मिक संस्कृति अभी वर्षो तक टिकेगी लेकिन वह अपने आप नहीं। उसे टिकने के लिये, स्थायी रूप प्रदान करने के लिये चारित्र निष्ठ, न्याय का पक्ष लेने वाले विभीषण, हनुमान जैसे महान पुरुषों की जरूरत है।

- दया प्रधान कृषि कर्म का रूप विकृत होता जा रहा है। आज अण्डों की खेती मछलियों की खेती (फार्मिंग) आरंभ हो रही है इसे भी कृषि का दर्जा दिया जा रहा है। कहाँ गई वह आदिनाथ महावीर और राम की संस्कृति। यह सब आधुनिकता का प्रभाव है।

- आधुनिक उपकरणों से सज्जित बूचडखाने खोले जा रहे हैं। जिनमें हजारों हजारों जानवरों का संहार किया जाता है। पर किसलिये ? केवल विदेशी मुद्रा पाने के लिये। इसी संहार से ही चहुँओर हिंसा आतंकवाद शोषण और न जाने क्या-क्या हो रहा है फिर अकेले शान्ति शासन की योजना बनाने से क्या लाभ ?

ज्यों-ज्यों चित थिर कर करें आतम ध्यान की बात।
पल में मिटती चिर बसी मोह अमा की रात ॥१०३॥

- अहिंसा भारतीय संस्कृति का मूल आधार है, इसीलिये स्वतंत्र भारत की प्रत्येक मुद्रा पर सम्राट अशोक का अहिंसक चिन्ह अंकित है किन्तु आज उसी मुद्रा को पाने के लिये बूचड़खाने आदि तरह-तरह के हिंसक साधन अपनाये जा रहे, यह लज्जा की बात है ।

- अरे जो ब्राह्म मुहूर्त में बांग देकर सबको उठा देता है, सोते हुये इन्सान को जगा देता है उस जीवन प्रदान करने वाले प्राणि की हत्या, मानव के द्वारा किया गया यह अक्षम्य अपराध है ।

- अहिंसा की पूजा हिंसा के द्वारा कभी नहीं हो सकती और न ही मात्र भावों के करने से किन्तु अहिंसा की पूजा तो वास्तव में अहिंसा को जीवंत रूप देने से होती है ।

- हिंसा से नहीं धरती पर शांति का साम्राज्य अहिंसा के बल पर ही होगा।

- राम, रहीम और महावीर के समय में जिस भारत भूमि पर दया बरसती थी, सभी जीवों को अभय था, उसी भारत भूमि पर आज अहिंसा खोजे-खोजे नहीं मिलती ।

- भारतीय सभ्यता मिटती सी जा रही है फिर भी हम लोगों की मान्यता है कि सतयुग आयेगा, विश्व में शाँति आयेगी और यदि हमारा आचरण शुद्ध नहीं है तो वह सतयुग, वह विश्व में शाँति "न भूतो न भविष्यति।"

- आज देश में सबसे बड़ी समस्या भूख, प्यास की नहीं बल्कि भीतरी विचारों के परिमार्जन करने की है । इसी से विश्व में त्राहि-त्राहि हो रही है । यह समस्या धर्म और दया के अभाव से ही है । एक दूसरे की रक्षा के लिये कोई तैयार नहीं । जो रक्षा के लिये नियुक्त किये गये वही भक्षक बनते जा रहे हैं ।

- आज का भारतीय नागरिक भोगों की ओर जा रहा है । भोग्य पदार्थों को जोड़ता हुआ वह योग को पाना चाह रहा है । किन्तु योग की प्राप्ति के लिये भोगों को तिलांजलि देनी होगी, उसे एकदम विस्मृत करना होगा तभी उस योग का आनंद आ सकता है । हमें उपयोग को भोग के धरातल से योग के शिखर तक लाना होगा ।

- यदि भारतीय संस्कृति से संस्कारित होकर विवाह संस्कार किया जाये तो दोनों पति पत्नि कुछ ही दिनों में भोगों से विरक्त होकर घर से निकलने का प्रयास करेंगे और कुछ ही समय में वह दंपति योग मार्ग पर आरूढ़ होकर अपने जीवन का निर्माण कर लेंगे ।

- विवाह का अर्थ भोग का समर्थन नहीं किन्तु भोग को सीमित करने की प्रक्रिया है । काम को जीतने का एक सीधा सरल तरीका है विवाह ।

- जैन दर्शन मे व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ-साथ सामूहिक शांति का भी संदेश है ।

- धार्मिक व्यक्तियों में संस्कृति के प्रति निष्ठा एवं राष्ट्रप्रेम स्वाभाविक होता है ।

- भारतीय संस्कृति में अधिकार नहीं कर्त्तव्य को महत्त्व दिया जाता है । यहाँ कर्त्तव्य पालन करने वाले को अधिकार स्वतः मिल जाते है ।

- भारत में तिथियों की नही अतिथियों की पूजा होती है यह बात पृथक् है कि उन अतिथियों के सानिध्य से तिथियों में भी पूज्यता आ जाती है ।

- यह भारतभूमि है, यहाँ पर त्यौहार हमेशा आते रहते हैं, उनमें हम पूजा-भक्ति करते हैं। भारतीय संस्कृति हमेशा पूजा करना सिखाती है।

- संस्कृति की अथ और इति संभव नहीं, वह तो निरन्तर प्रवहमान है। सभ्यता और समाज में परिवर्तन आते रहते हैं यह बात पृथक् है।

- आचार विचार के रूप में आज जो भारतीय संस्कृति प्रवर्तित है उसका आधार श्रमण और वैदिक परम्परा ही है।

- श्रमण संस्कृति, श्रम -पुरुषार्थ, शमन, समता पर जोर देती है।

- विचारों में अनेकान्त और आचरण में अहिंसा तथा अपरिग्रह का सिद्धांत जैन धर्म का आधार स्तंभ है।

- वस्तु स्वतंत्र है उसका परिणमन स्वाधीन है, इस बात का दिव्य संदेश हमें तीर्थंकरों ने दिया है।

- धर्म, दर्शन, सिद्धाँत और अध्यात्म विद्या के उपदेष्टा के रूप में श्रमण संस्कृति में अर्हत् तीर्थंकरों का प्रमुख स्थान है। इन्हीं प्रवर्तकों की परम्परा में आचार्यों की संतति प्रवाहित है जिसने भारतीय सुषुप्त चेतना को समय-समय पर जागृत किया है।

- अहिंसा, अपरिग्रह, इन्द्रिय निग्रह, त्याग और समाधि को साधना के काल में तीर्थंकरों ने जिस तरह से आचरित किया उसे केवलज्ञान पाने के बाद जनकल्याणार्थ उपदिष्ट भी किया। इसीलिये तीर्थंकर धर्म के उपदेष्टा और प्रतिष्ठाता कहे गये हैं।

[illegible]
निज अनुभव रस पी रहे उन मुनि का मैं दास ॥[illegible]॥

- शुरुआत से ही संस्कृति प्रवाह के दो प्रमुख पक्ष रहे हैं। एक विचार और दूसरा आचार। जहाँ विचारों में तत्व का दर्शन होता है तो वहीं आचरण से तीर्थ का। दोनों के मेल से ही संस्कृति की धारा प्रवाहित है।

- जैन संस्कृति में प्रतिपाद्य प्रवृत्ति और निवृत्ति में अद्‍भुत सापेक्षता है। यहाँ पर प्रवृत्ति में निवृत्ति और निवृत्ति में प्रवृत्ति का उद्देश्य अवश्य ही निहित रहा है।

- इतिहास, तीर्थक्षेत्र, पुरावैभव, मूर्तियाँ, मन्दिर, पाण्डुलिपियाँ, शिल्पकला, शिलालेख आदि हमारी संस्कृति के ऐसे अवयव हैं जिनकी सुरक्षा पर ही हमारा सांस्कृतिक ढाँचा टिका हुआ है।

- आगम और आचार्य गुरुओं से ही हमारी परम्परा का अभी तक अस्तित्व रहा है। यदि यह न होते तो परम्परा शब्द भले ही रह जाता पर किसी तरह की परम्परा न रहती।

- मैं जैन हूँ, मैं हिन्दू हूँ, मैं सिक्ख हूँ, मै ईसाई और मैं मुसलिम हूँ। इस प्रकार की मान्यता हमारे समाज रूपी सागर को नष्ट कर देगी। इस प्रकार का बिखरा अस्तित्व हमें एक बूंद का रूप दे देगा। जिसके सूखने के लिये सूर्य की एक किरण ही पर्याप्त है।

- हमारे बीच आपस में मतभेद भले ही हो जाय पर मनभेद नहीं होना चाहिये।

- राजसिक और तामसिक वृत्ति का त्यागकर सात्विक जीवन चर्या अपनाने की शिक्षा हमें भारतीय संस्कृति देती है।

- भारतीय आचार संहिता कहती है कि जब तक संकल्प न लिया जाय तब तक आचरण का कोई महत्व नहीं । प्रण-प्रतिज्ञा में बँधना और उसे प्राण रहते तक निभाना हमारी पुरानी परम्परा है ।

- वचन कदाचित परिवर्तित हो जाते हैं किन्तु प्रण/संकल्प अपरिवर्तनीय ही होते हैं ।

- जो व्यक्ति कर्त्तव्य के प्रति निष्ठावान होता है, प्रतिष्ठा उसके पीछे भागती है।

- वह संतान किस काम की जो माँ के द्वारा बताये हुए मार्ग पर विश्वास नहीं रखती ऐसी सन्तान का विकास अभी और आगे जाकर कभी भी संभव नहीं है ।

- मानव जीवन बहुत ही मूल्यवान है । यह बहुत ही प्रतीक्षा के बाद पुण्योदय से मिला है । इसे व्यर्थ ही इधर-उधर की बातों में मत गवांओ। इससे भुक्ति की नहीं मुक्ति की भूमिका का निर्माण कर निर्वाण को पाओ।

- उत्तर और दक्षिण भारत का समूचा इतिहास ही इस बात का साक्षी है कि जैनियों ने समय-समय पर भारतीय संस्कृति की सुरक्षा में बड़ा योगदान दिया है ।

तीर्थ

- जहाँ पर तीर्थंकर आदि महापुरुषों के बिहार और कल्याणक आदि होते हैं वह सभी स्थान तीर्थ माने जाते हैं ।

तीरथ जिसमें अघ धुले मिलता भव का तीर ।
कीरत जग भर में धुले मिटती भव की पीर ॥६०८॥

- जिसके माध्यम से हम तिर जाये पार हो जाये वह है तीर्थ ।

- तीर्थ घाट के समान है जहाँ पहुँचकर अपने जीवन बेड़ा को भवसागर से पार लगाया जा सकता है।

- नदी के घाट पर जाकर तो हम बाहरी मल का ही प्रक्षालन करते हैं किन्तु तीर्थों की शरण पाकर हम जन्म-जन्मान्तरों के पापों का प्रक्षालन कर लेते हैं।

- तीर्थंकर भगवन्तों की बिहार भूमि और कल्याणक स्थानों पर जाने से स्फूर्ति, प्रेरणा और मन को शान्ति मिलती है ।

- पुण्य-पुराण पुरुषों के द्वारा जो स्थान पवित्र हुये हैं, उन स्थानों पर जाकर ध्यान साधना करने से जीवन भी पवित्र बनता है ।

- साधक योगियों ने जिन स्थानों का आश्रय लेकर विभिन्न प्रकार की साधनायें की हैं वह स्थान भी तीर्थों की तरह ही पूज्य माने गये हैं ।

- यह सब बाहर के जड़ तीर्थ तो हैं ही किन्तु जिसके माध्यम से हम चैतन्य की ओर मुड़ जाये वस्तुतः वही तीर्थ है ।

- भगवान की दिव्य ध्वनि समवशरण सभा में जिस स्थान पर खिरी हो वह स्थान तीर्थ ही नहीं बल्कि शासन-तीर्थ माना जायेगा ।

- तीर्थ, मंदिर और मूर्तियाँ हमारे सदियों पुराने निर्मल इतिहास की गौरव गाथा गाते है।

अनल सलिल हो विष सुधा व्याल माल बन जाय ।
जिन बिम्बों के दरश से क्या का क्या हो जाय ॥१०८॥

- भारतीय मानस श्रद्धा भक्ति से भरा हुआ है, यही कारण है कि यहाँ के निवासियों ने मकानों के साथ-साथ पूजास्थल मंदिरों का निर्माण भी किया है। भारत में ऐसा कोई भी गांव नहीं जो मंदिर-मूर्तियों से विहीन हो ।

- मंदिर विशाल किन्तु द्वार छोटे, ऐसा क्यों ? कभी विचार किया, इसलिये कि भगवान् की शरण में जाने के पूर्व झुकना सीखो अर्थात् अहंकार को गलाकर श्रद्धा से अभिभूत होकर मंदिर में प्रवेश करो ।

- मंदिर और मूर्तियाँ मोक्षमार्ग में साधन तो है पर साध्य नहीं । साधनों का सम्यक् अवलम्बन तो होना चाहिये पर विवाद नहीं ।

- मंदिर और मूर्तियाँ उपयोग को स्थिर करने के लिये है किन्तु सबके उपयोग को स्थिर करने में सहायक बने, ये जरूरी नहीं ।

- मूर्ति, मानवीय आचार विचार को निर्देशित करने वाला एक सम्यक् आदर्श है ।

- मन को केन्द्रित करने का सहकारी वातावरण जितना मंदिर में संभव है उतना अन्यत्र नहीं ।

- तीर्थ हमारी परम्परा और संस्कृति के प्रतीक है इनका निर्माण संरक्षण और जीर्णोद्धार कराना हमारा कर्त्तव्य है ।

- अहिंसा और वीतरागता का संदेश देने वाले पुरावशेषों की सुरक्षा करना आज अत्यन्त जरूरी है ।

- तीर्थ हमारे धर्मक्षेत्र माने गये हैं । साधना के लिये जनपद शून्य, निराकुल निरापद स्थान है । हमारे पूर्वजों की पवित्र सांस्कृतिक धरोहर है । इनका संरक्षण और संवर्धन एक-एक घटक का कर्त्तव्य है।

[illegible]
[illegible] ।।१२०।।

- सम्मेद शिखर तीर्थंकरों की शाश्वत् निर्वाण भूमि है। यहाँ से इस चौबीसी में बीस तीर्थंकरों सहति अनंत मुनियों ने मोक्ष प्राप्त किया। यह तीर्थ ही नहीं तीर्थराज है समूची दिगम्बर परम्परा का प्रमुख आस्था केन्द्र है।

- संस्कृति और धर्मायतनों के संरक्षणार्थ साधु, श्रावकों को उपदेश दे सकता है आवश्यकतानुसार आदेश भी।

- सभी दानों के साथ-साथ अपने आपको ही तीर्थ के लिये समर्पित कर देना यह सबसे बड़ा दान है।

- अपना उपसर्ग दूर करने के लिये नहीं किन्तु धर्मायतनों पर/प्राणियों पर आये हुये संकट को दूर करने के लिये विष्णुकुमार और बालि मुनि महाराजों जैसे कदम उठाना चाहिये।

- अहंकार वश रावण ने जब समूचे कैलाश पर्वत को ही पलटना चाहा तब तपस्यारत बालि मुनि महाराज का हृदय द्रवित हो उठा, उस स्थिति में तीर्थ सुरक्षा के लिये उन्होंने जो कदम उठाये वह अत्यधिक प्रेरक अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है।

- कैलाश पर्वत पर बनाये गये भरत चक्रवर्ती के द्वारा जिनालयों की सुरक्षा के विचार से सगर चक्रवर्ती ने अपने 60 हजार कर्मठ पुरुषार्थी पुत्रों को गंगा की परिखा (खाई) बनाने में लगा दिया। तीर्थ सुरक्षा के लिये इतिहास में इससे बड़ा उदाहरण और क्या हो सकता है।

इतिहास

- जैन धर्मानुयायियों का देश के प्रति बहुत बड़ा योगदान है। समय-समय पर आचार्यों ने धीमानों तथा श्रीमानों ने अपनी सूझबूझ कुशलता से राजाओं तक को निर्देश देकर देश की समृद्धि में सहयोग दिया है।

- दानवीर भामाशाह जैसे उदार हृदय जैनी श्रेष्ठी श्रावकों ने राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर देश की रक्षा के लिये महाराणा प्रताप के सामने अपना सारा खजाना खोलकर रख दिया था और कृतज्ञता भरे शब्दों में कहा था कि यह सम्पत्ति हमारी नहीं राष्ट्र की ही है आप इसे स्वीकार करें और देश की रक्षा करें ।

- जैन इतिहास में दीवान अमरचंदजी एक ऐसे व्यक्ति हुये हैं जिन्होंने अहिंसा और सद्भावना के बल पर राजा को तो परिवर्तित किया ही किन्तु मांसाहारी सिंह के पिंजड़े में भी जाकर उसे भी जलेबियाँ खिलाई। यह सब अहिंसक भावना का प्रभाव है ।

- इतिहास में सम्राट अशोक एक ऐसा शासक हुआ है जिसने कलिंग युद्ध का नरसंहार देखकर अपना हृदय, अपना जीवन ही बदल लिया और फिर सिंहासन पर बैठते हुये भी बिना तलवार के शासन किया ।

- सम्राट अशोक के शिलालेखों से भी विदित है कि उसका जीवन दयावान, न्यायप्रिय और काफी धार्मिक रहा है । उसने अहिंसा, प्रेम, आत्मीयता, परोपकार और भाईचारे पर काफी जोर दिया है।

- इतिहास इस बात का साक्षी है कि युगों-युगों से धर्म को राजाश्रय एवं राजसंरक्षण प्राप्त रहा है । राजाओं की सहयोगी छाया में सत्य और अहिंसा धर्म ने अपना विस्तार सारी धरती पर किया है ।

- अन्तिम सम्राट चन्द्रगुप्त ने जीवन के उपान्त समय में जैनेश्वरी दीक्षा लेकर श्रमण संस्कृति में एक ऐसी कड़ी जोड़ी है जो आज भी हमें गौरवान्वित कर रही है ।

और भोर शुरुआत न बनी अंधेरी रात ।
मिथ्यो की बरसात है युगों - युगों की बात ॥१२१॥

- भगवान महावीर स्वामी को जैन धर्म का संस्थापक मानना इतिहासकारों का भ्रम है। यथार्थ में इस धर्म का प्रवाह तो अनादि अनिधन है किन्तु इस युग में धर्म के संस्थापक/प्रवर्तक भगवान ऋषभदेव हुये और इसी क्रम में कालान्तर से शेष तेईस तीर्थंकर और हुये जिनमें अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी थे ।

- तीर्थंकर वर्धमान की शादी नहीं हुई वह तो बालब्रह्मचारी थे, उनके गर्भहरण का कथन भी दिगम्बर आम्नाय सम्मत नहीं है । इस चौबीसी में तीर्थंकर वर्धमान के समान और भी चार बालयति हुये हैं।

- ऋषभदेव के पुत्र प्रथम चक्रवर्ती भरत के नाम से इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा है, यह बात स्वयं इतिहास से सिद्ध है ।

आचार्य

- आचार्य स्वयं भी तरते हैं और दूसरों को भी तारते हैं । आचार्य नौका के समान है वह पूज्य है ।

- आचार्यों की यह निर्मल परम्परा निर्दोष संघ शासन की निरंतर वृद्धि करती रहे । यही हम सबकी भावना हो ।

- आचार्य महाराज नारियल की तरह बाहर से कठोर किन्तु अन्दर से मृदुस्वभावी होते हैं । यही वजह है कि उनके जीवन में अनुशासन और अनुकम्पा एक साथ झलकते हैं ।

- जैसे वृक्ष सारी धूप को झेलकर पथिक को छाया प्रदान करते हैं ठीक वैसे ही आचार्य महाराज भी निस्वार्थ सब कुछ सहनकर शरणागत को शरण प्रदान करते हैं ।

- आत्म साधना के साथ-साथ संघ का प्रवर्तन एवं धर्मोपदेश आचार्यों का मुख्य काम है ।

- साधु पद की साधना करते हुये शिष्यों का संग्रह और अनुग्रह आदि कुछ विशिष्ट गुणों के कारण ही वह आचार्य अपने गौरवशाली पद से सुशोभित होते हैं ।

- शिष्य यदि आज्ञा में बंधे हैं तो आचार्य आगम से । बन्धन एक को ही नहीं सभी को स्वीकार करने पड़ते हैं ।

- आचार्य, स्वसमय-परसमय के ज्ञाता और तात्कालिक उठे हुये विकल्प-विवादों के समाधानकर्त्ता होते हैं ।

- दोषयुक्त शिष्य के लिये निर्विकल्प निर्दोष होने में आचार्य का उतना ही महत्व है जितना कि बेटे को निर्दोष साफ-सुथरा होने में माँ का ।

- मेरु के समान अड़िग, सागर के समान गंभीर एवं सिंह के समान निर्भीक आचार्यों को संघ, समाज, देश और धर्म-संस्कृति के संरक्षण का पूरा ध्यान रहता है ।

- आचार्यों की करुणा और वत्सल भावना का ही यह परिणाम है कि उनकी छत्र छाया में रहकर अशक्त और अल्पज्ञानी शिष्य भी अपना कल्याण कर लेते हैं ।

[illegible]
[illegible]

- तीर्थंकरों से प्राप्त उस श्रुतधारा को आचार्यों ने ही आगम साहित्य के रूप में प्रणयन कर संरक्षित किया है ।
- भगवान की दिव्य ध्वनि में क्या-क्या खिरा और गणधरों ने उसे किस रूप में पाया और प्रस्तुत किया यह सब जानकारी, यदि आचार्यों द्वारा लिपिबद्ध श्रुत न होता तो हम कदापि न जान पाते ।
- कुन्दकुन्द, समन्तभद्र और अकलंक जैसे महान-महान अनेकों आचार्यों ने जीवन में संघर्ष कर तप, त्याग और बुद्धि पराक्रम से इस संस्कृति परम्परा को अक्षुण्य बनाया है ।
- समय-समय पर आचार्यों ने शासकों को अपनी तपस्या और ज्ञान गरिमा से प्रभावित कर जैन धर्म का विस्तार किया है ।
- तीर्थंकर महावीर की आचार्य परम्परा ने भारतीय संस्कृति को दर्शन साहित्य और सदाचार से संवृद्ध किया है ।
- सर्वोदयी समाज निर्माण में आचार्यो का विशिष्ट महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।
- व्यक्ति निर्माण के साथ-साथ समाज निर्माण के क्षेत्र में भी जैनाचार्यों ने अपना दायित्व निभाया है ।

साहित्य

- जैन साहित्य के बिना भारतीय साहित्य सम्पदा अधूरी ही मानी जायेगी।
- साहित्य तो वह सेतु है जो साधक और साधना के दो किनारों को जोड़ता है।

- हित से जो युक्त है वह है सहित और सहित का भाव ही साहित्य है ।
- श्रमण संस्कृति श्रुत साहित्य की अविच्छिन्नता पर निर्भर है क्योंकि इस विषम काल में श्रुत साहित्य ही आदित्य का काम करता है ।
- सन्तों के मानस पटल पर उठी संवेदनाओं से प्रेरित स्वपर हित के लिये चली हुई लेखनी साहित्य का निर्माण करती है ।
- जैनाचार्यों ने लोकभाषा एवं जनभावनाओं को दृष्टिगत कर साहित्य को भाषा और प्रान्त की सीमा से परे रखा है ।
- हमारा साहित्य उस भारतीय मनीषा से सम्बद्ध है जिसने जगत और जीवन के रहस्य सूत्रों को जाना और परखा है । सृजन के क्षेत्र में उन्हीं सूत्रों के शिलालेख हमें अपने आगम साहित्य के पृष्ठों को समझना चाहिये।
- लेखक और शिल्पकार अपने समय का प्रतिनिधित्व करते हैं । जिस युग के जनजीवन में रहकर वह सृजन करते हैं उस युग के प्रचलित रीति-रिवाजों की छाप उनके साहित्य और शिल्प पर पड़ती ही है । अतः इस बात को हमें स्वीकार करना चाहिये कि साहित्य और शिल्प इतिहास को दिखलाने के लिये दर्पण की तरह है ।
- आचार्यो की लेखनी में क्या नहीं आया ? जगत और जीवन से संबंधित ऐसा कोई भी पहलू अछूता नहीं रहा जो उनकी लेखनी में न आया हो।
- श्रमण आचार्यों ने अध्यात्म के सहारे जहाँ साधना की चरम उचाइयों को छुआ है तो वहीं साहित्य का सृजन भी कम नहीं किया । रात यदि साधना में गुजरी है तो सारा दिन सूरज के साथ साहित्य सृजन में ।
- आचार्य कुन्दकुन्द का वाङ्मय जहाँ अध्यात्म से भरपूर है तो वहीं

कुन्दकुन्द को नित नमूँ हृदय कुन्द खिल जाय ।
परम सुगन्धित महक में जीवन मम घुल जाय ॥१२३॥

आचार्य समन्तभद्र के ग्रन्थ दर्शन प्रधान है। हमें आचार्य कुन्दकुन्द का हृदय समझने के लिये आचार्य समन्तभद्र का परिचय जरूरी है और दोनों को समझे बगैर अपने को समझ पाना संभव ही नहीं है।

- न्याय, दर्शन, धर्म, अध्यात्म, तत्व मीमांसा, तीर्थ, इतिहास, भक्ति, संगीत, कलायें, राजनीति, ज्योतिष, गणित, वर्ण और समाज व्यवस्था आदि आचार-विचारों से जुड़े हुये लोक-लोकोत्तर बिन्दु जैन साहित्य की पंक्ति-पंक्ति में समाये हुये हैं।

पर्व

- भारतीय पर्व जहाँ सामाजिक राष्ट्रीय और ऐतिहासिक महत्ता को लिये होते हैं तो वहीं प्राचीन संस्कृति से भी वह अत्यधिक सम्बद्ध रहते हैं।
- पर्व का अर्थ है सन्धिकाल। एक ऐसा अवसर जिसमें हमारा मन धर्म ध्यान की ओर सहज ही प्रेरित होता है।
- पर्व, सिर्फ खाने-पीने और मनोरंजन के लिये ही नहीं आते किन्तु जीवन में परिवर्तन और आदर्श स्थापित करने के लिये आते है।
- अष्टमी और चतुर्दशी जैन परम्परा में ऐसे शाश्वत् पर्व माने गये हैं जिनका सम्बन्ध प्रकृति, तत्व विज्ञान और सौरमंडल से है। यही वजह है कि इन दिनों में गृहस्थ और साधुओं को तन-मन और चेतन को स्वस्थ साम्य बनाये रखने के लिये उपवास आदि तपों के विधान बनाये गये हैं।

- पर्व आने का अभिप्राय ही सिर्फ इतना है कि हम जागें और अतीत में घटी हुई घटनाओं को आदर्श बनाकर उस राह पर चलने का प्रयास करें।

- दीपावली का पर्व सामाजिक और ऐतिहासिक होते हुये भी अत्यधिक धार्मिक भावनाओं से जुड़ा है। इस दिन ऐसा कोई भी घर नहीं रहता जहाँ संस्कृति से जुड़े हुये महापुरुषों की पुरातन गाथा न दुहराई जाती हो।

- कार्तिक कृष्णा अमावस्या की प्रत्यूष बेला में भगवान महावीर स्वामी इस संसार से मुक्त हुये और शाम को गणधर गौतम स्वामी ने केवल ज्ञान प्राप्त किया। इन्हीं प्रसंगों की पावन स्मृति स्वरूप आज भी जन-जन प्रातः निर्वाण लाडू चढ़ाता है एवं शाम को अज्ञान तिमिर नाशक भावना से दीपक जलाकर दीपावली पर्व मनाता है।

- इस पर्व के सम्बन्ध में एक तथ्य यह भी है कि श्री रामचंद्र जी जब लंका विजय के पश्चात् अयोध्या नगरी में पधारे तब नगर वासियों ने उनके स्वागत में खुशियों के दीप जलाये थे। इसे ऐसा समझना चाहिये कि यह पर्व विजयी सत्य के स्वागत का पर्व है।

- जिस तरह आदिनाथ को धर्मतीर्थ का कर्त्ता कहा जाता है उसी तरह राजा श्रेयांस को भी दान तीर्थ का कर्त्ता कहना चाहिये, क्योंकि मुनिराज आदिनाथ को प्रथम आहार दान देकर राजा श्रेयांश ने सर्वस्व त्यागी पात्रों को दान देने की परम्परा प्रारंभ की।

शीति भीति सुख दुख नहीं जो न चेतन रीत।
अचित तन धन आदि ये तुम समझो भव-भीति ॥१६८॥

- श्रुत पंचमी का पर्व, जिनवाणी आराधना का वह पावन स्मृति दिवस है जिस दिन आचार्य पुष्पदन्त और भूतबलि ने षट्खण्डागम सूत्र ग्रन्थों की रचना पूर्ण की थी तथा श्रावकों ने उन सिद्धांत ग्रन्थों की भक्ति-भाव से पूजा की थी।

- रक्षाबन्धन का पर्व वात्सल्य का पर्व है, रक्षा का पर्व है। इसी भावना से प्रेरित होकर जब विष्णुकुमार जैसे तपस्वी मुनिराज भी आगे आये और ७०० मुनियों का उपसर्ग दूर किया तब हमें भी सोचना चाहिये और धर्म संस्कृति की रक्षा के लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये।

- स्वयं की परवाह न करते हुये अन्य की रक्षा करना ही रक्षाबन्धन मनाने का वास्तविक रहस्य है।

- चाहे अष्टानिका पर्व हो या दशलक्षण, श्रावकों को चाहिये कि वह इन दिनों में हिंसा आरंभादिक पाप कार्यों से ज्यादा से ज्यादा बचें तथा अहिंसाव्रत का पालन करते हुये सादगी सात्विकता से समय बिताकर धर्मध्यान करें।

- जो राग-द्वेष कर्मादि विभावों को जलाता है, नष्ट करता है, जीवन में प्रभात लाता है वह पर्यूषण कहलाता है। ऐसा महान पर्वराज पर्यूषण न कभी आता है न कभी जाता है, वह तो सदा विद्यमान रहता है। इसका हम अनुभव भी कर सकते हैं होनी चाहिये सिर्फ जिज्ञासा और समझ।

Total 911

सत् शिव सुन्दर

सत् शिव सुन्दर का सर्वोदयी स्वर्णिम प्रभात, व्यक्ति से लेकर समष्टि तक जीवन चर्या के जिन महत्वपूर्ण पहलुओं को आलोकित करता है, मेरी धारणा है कि उसी प्रकाश में मानवता का रथ आगे बढ़ रहा है। पाशविक प्रवृत्ति से परे मानव की पृथक् पहिचान बनाने वाले सदाचार से जुड़े हुये लोक मंगलकारी कर्त्तव्य/कार्य इस खण्ड की बुनियाद है। दया-दान, विनय, सेवा, मैत्री और राष्ट्रप्रेम आदि प्रसंगों पर प्राप्त बोध वाक्य सत् शिव सुन्दर खण्ड के त्रिभुज में समाये हुये हैं।

न्याय/नीति

- अधिक विलम्ब के कारण कभी-कभी न्याय भी अन्याय सा लगने लगता है।

- जो व्यक्ति न्याय का पक्ष लेता है वह अन्याय को ही नही वरन् समस्त विश्व को झुका सकता है अपने चरणों में ।

- स्वयं यदि अन्याय करना नहीं चाहते हो तो अन्याय करने वाले का विरोध भी करना चाहिये ।

रग-रग से करुणा भरे दुखी जनों को देख।
विश्व सौख्य में अनुभवूँ स्वार्थसिद्धि की रेख ॥१२०॥

- आज का न्याय केवल अर्थ के ऊपर आधारित है । अर्थ मिलता है तो परमार्थ को गौण किया जा सकता है, और यदि अर्थ नहीं मिलता है तो उसका विरोध भी किया जा सकता है ।

- जो न्याय नीति के विपरीत चलता है, वह भगवान महावीर के शासन को भी कलंकित करता है ।

- यह भगवान महावीर का दरबार है, इसमें अनीति-अन्याय के लिये स्थान नहीं मिलता। यहां तो नीति-न्याय के अनुसार सादगी जीवन से काम लेना होगा ।

- सभी क्षेत्रों में सभी प्रकार की नीतियाँ होती हैं, जो समय-समय पर नष्ट होती रहती हैं, बदलती रहती हैं लेकिन आत्मनीति एक ऐसी नीति है, जो कभी नष्ट न हुई है न होगी ।

- पेट भरने की चिन्ता करो, पेटी भरने की नहीं । पेट फिर भी न्याय-नीति से भरा जा सकता है किन्तु पेटी नियम से अन्याय/अनीति के द्वारा ही भरी जायेगी ।

- किसी कार्य में समय देना तन, मन, धन से भी अधिक मूल्यवान है ।

- अच्छाइयों के प्रति उदारता एवं बुराइयों के प्रति कृपणता का भाव रखना चाहिये।

- समझदार भी कभी-कभी मझधार में रह जाते हैं ।

- धन का आकर्षण ही धर्म का अवरोधक है ।

- जिस कार्य में व्यक्ति की रुचि होती है, उसी ओर उसकी मति और गति होती है ।

गुण का अभिनन्दन करो, करो कर्म की हानि ।
गुरु कहते गुण गौण हो, किस विध सुख हो प्राप्ति ॥१२१॥

- निर्णय के बिना जो मार्ग में आगे बढ़ते चले जाते हैं वे गुमराह हो जाते हैं।
- पारम्परिक मार्ग का अनुकरण करना ही श्रेष्ठ है । नया रास्ता बनाना स्वयं तथा अन्य सभी के लिये भी हानिप्रद हो सकता है ।
- विपरीत दिशा की ओर नहीं, सही दिशा की ओर हमारे कदम बढ़ना चाहिये। यदि उतावली में हम कोई काम करेगें तो वह नियम से ठीक नहीं होगा ।
- जिन्दगी कितनी ही बड़ी क्यों न हो समय की बर्बादी से वह, भी बहुत छोटी हो जाती है।
- अपात्र जनों को बहुमान देने से गुणीजनों के गौरव में क्षति पहुँचती है।
- विपत्ति से बढ़कर अनुभव सिखाने वाला कोई विद्यालय नहीं है ।
- बिना जाँचे परखे किसी को भी अपना मित्र बना लेना जीवन की सबसे अप्रिय घटना है ।
- जब नीति रीति प्रीति कुछ भी काम न करे, तब फिर कुछ अलग ही सोचना चाहिये।
- पथ्य का सही पालन हो तो औषधि की आवश्यकता नहीं और यदि पथ्य का पालन नहीं हो तो भी औषधि सेवन से क्या प्रयोजन ?
- बुखार के समय यदि ताकत की दवाई दे दी जाए तो बुखार ही ताकत से आयेगा। ठीक ऐसे ही विपरीत बुद्धि वालों को यदि प्रोत्साहन मिले तो उनका अहंकार ही बढ़ता है ।
- मन की खुराक मान है, वह न मिलने पर मन खुरापाती हो जाता है ।
- मनमाना मन तब हो जाता है, जब उसके मन की नहीं होती ।

पापी से मत, पाप से घृणा करो अयि आर्य।
नर ही बस वह पतित, हो पावन, कर शुभ कार्य ॥१२२॥

- जब सुई से काम चल सकता है तो तलवार का प्रहार क्यों ? और जब फूल से काम चल सकता है तो शूल का व्यवहार क्यों ?

- खण्डन की नहीं मण्डन की दृष्टि रखने से खण्डन में भी मण्डन ही नजर आता है ।

- जैसे गाय रूखी-सूखी घास खाकर भी मधुर स्वादिष्ट दूध प्रदान करती है, वैसे ही प्रतिकूल नीरस वचनों को सुनकर हमें भी हितकर वचन बोलना चाहिये।

- महत्वपूर्ण कीमती वस्तु के लिये हर किसी को किसी भी जगह नहीं दिखाना चाहिये क्योंकि ऐसा करने से उसकी महत्ता में कमी आती है।

- वोट से भी ज्यादा महत्वपूर्ण सपोर्ट होता है, क्योंकि वोट अपना एक ही होता है, पर सपोर्ट न जाने कितनों का किया जाता है ।

- पक्षाघात रोग से तो शरीर का एक भाग ही जड़ (शून्य) हो पाता है, किन्तु पक्षपात के रोग से तो सारा का सारा शरीर और दिमाग दोनों ही जड़ जैसे हो जाते हैं ।

- पक्षपात एक ऐसा जलप्रपात है, जहॉ पर सत्य की सजीव माटी टिक नहीं पाती बह जाती है, बहकर जाने वह कहाँ जाती है ।

- पक्षपात एक ऐसी बुराई है जो बुरे को भी अच्छा मानकर स्वीकार करती है। तथा मात्सर्य एक ऐसा भाव है जो निर्दोष और सहजता को भी स्वीकार नहीं कर पाता ।

- मिट्टी के ऊपर ही पानी का सिंचन किया जाता है, पाषाण पर नही । ठीक इसी प्रकार पात्र के ऊपर ही उपकार होता है अपात्र पर नहीं ।

न तो पर पर रोष हो न कर्मों का दोष ।
है अपना अपराध यह खोया है निज होश ॥१२३॥

- अपराधी के लिये दण्ड देना अनिवार्य है अन्यथा वह आपराधिक प्रवृत्ति में बढ़ सकता है और गुणीजनों को देखकर मुख प्रसन्न होना चाहिये अन्यथा उसके गुणों में विकास नहीं हो सकता ।
- क्रूर अपराध के लिये दण्ड भी क्रूर ही दिया जाय यह कुछ जमता सा नहीं है ।

धर्मनीति

- अहिंसा धर्म के सद्भाव में सब धर्म अपने आप पल जाते हैं ।
- अहिंसा ही हमारा धर्म है, हमारा उपास्य है, उसकी रक्षा के लिये हमें हमेशा कटिबद्ध रहना चाहिये।
- मूलधर्म अहिंसा है, सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का पालन उसी अहिंसा धर्म की रक्षा के लिये किया जाता है ।
- यदि हम अहिसा से भावित है तो दूसरा हमसे अपने आप ही प्रभावित होगा।
- धर्म वृक्ष से गुजरी हुई सद्भावना की हवा सभी को स्वस्थ एवं सुन्दर बनाती है ।
- धार्मिक क्रियाकलापों को सामूहिक रूप से करने पर विचार तथा अनुभवों में वृद्धि होती है ।
- धार्मिक क्रियाएं करते हुए भी दोष लगते रहते है, जैसे दीपक के साथ-साथ कालिख भी निकलती रहती है ।

> *रग-रग में चिति रसभरा खरा निरा यह जीव ।*
> *तनधारी दुख सहत, सुख तन बिन सिद्ध सदीव ।।१२४।।*

- मिलन अलग बात है और मिल जाना अलग बात । रेत का जल के साथ मिलन होता है किन्तु दूध में शक्कर घुल-मिल जाती है, बस धर्म की इतनी ही परिभाषा है।
- आचार-विचारों में पतित व्यक्ति को भी कल्याण की भावना से गले लगा लेना सच्ची धर्म प्रभावना है ।
- धर्मात्मा के बिना धर्म कभी रह नहीं सकता अतः धर्म की चाह से हमें धर्मात्मा की भी रक्षा करनी चाहिये ।
- जैनधर्म, क्षेत्र, जाति, सम्प्रदाय या व्यक्ति विशेष का नहीं है वह तो सार्वभौमिक लोक कल्याणकारी है ।
- जैनधर्म परस्पर मैत्री सहयोग और उपकार पर विश्वास रखता है । संघर्ष अविश्वास द्वेष और दुराव का यहाँ पर कोई स्थान नहीं है ।
- अपनी-अपनी शक्ति/क्षमता के अनुसार सामाजिक जन धर्माराधना में एक जुट हो सकें ऐसा उपदेश तथा प्रेरणा विवेकी जनों के द्वारा दी जानी चाहिये ।
- रुढ़िवाद की पूजा और अपने को हीन मानकर दूसरे किसी बड़े के सम्मुख समग्र समर्पण यही लोक मूढ़ता है ।
- कर्तृत्व के साथ दयाबुद्धि कभी नहीं होती, करुणा का सम्बन्ध तो धर्म के साथ है ।
- सत्य उसे मिलता है जिसकी आत्मा गहरी और शान्त होती है ।
- जहाँ पर धर्म है, सत्य है, न्याय है वहाँ पर रक्षा अपने आप होती है।

विषय विषम विष है तुम्हें विष सेवन से मौत ।
विषय कषाय विसार दो स्वानुभूति सुख स्रोत ॥१२१॥

- जो सत्य है वही हमारा है, जो हमारा है वही सत्य है ऐसा नहीं ।
- सत्य का साक्षात्कार बाद में होता है, पहले उस सत्य पर विश्वास करना जरूरी है ।
- चिरकाल तक संघर्ष करने के उपरान्त भी अन्त में सत्य की ही विजय होती है क्योंकि सत्य अमर है और असत्य की पग-पग पर मृत्यु ।
- जो आँखें सत्य की ओर निहार रही हैं, वे पूज्य हैं, आखिर ज्ञान की आँखें ही तो पूज्य होती हैं ।
- असत्य से सहमत कभी मत होना, भले ही उसका बहुमत क्यों न हो ।
- शब्द सत्य या असत्य रूप नहीं होते बल्कि बोलने वाले का अभिप्राय ही सत्य असत्य रूप होता है ।
- सद्-अभिप्राय से प्राणिरक्षा के लिये बोला गया झूठ भी सत्य होता है और विपत्ति में डालने वाला कष्ट कारक बोला गया सत्य भी झूठ ही होता है ।
- हितकारक, कटुक और कठोर वचन भी ठीक है किन्तु अहित करने वाले मधुर वचन भी ठीक नहीं ।
- वचनों में अद्भुत शक्ति है इसलिये तो कभी वह कर्णफूल बन जाते हैं तो कभी कर्णशूल ।
- सत्य को कहा नहीं जा सकता उसे महसूस किया जा सकता है क्योंकि जो कहा जाता है वह सत्य नहीं, सत्यांश ही होता है ।

लाभ उलटा हो भला, भला उलटा लाभ ।
हो सब ज्यों का त्यों सदा भले रहे बदलाव ॥१२६॥

- उतावली के कारण कभी-कभी व्यक्ति को सत्य से वंचित होना पड़ता है और असत्य की शरण में जाना पड़ता है ।

- ऐसी भाषा का प्रयोग करो जो कि सत्य को असत्य और असत्य को सत्य सिद्ध न कर सके।

- सत्य हमेशा एक होता है और असत्य अनंत । लेकिन एक सत्य भी अनेकों असत्यों को समाप्त कर देता है जैसे एक चन्द्रमा सघन अंधकार को समाप्त कर देता है ।

- जो व्यक्ति स्वयं अनुशासित न होकर दूसरों पर अनुशासन चलाना चाहता है वह व्यक्ति कभी भी सफल नहीं हो सकता ।

- आत्मानुशासन के लिये अन्य किसी की आवश्यकता नहीं है । आवश्यकता है एक मात्र अपनी कषायों पर 'कुठाराघात' करने की ।

- संसारी प्राणी शासन चलाना चाहता है स्वयं अनुशासित होना नहीं चाहता, लेकिन जब भगवान ने स्वयं अपने आपको अनुशासित किया तभी उनको सारे भक्त लोग शासक मानकर पूजने लगे।

- शासन का नही आत्मानुशासन का महत्त्व है मोक्षमार्ग में ।

- प्रकाश के अभाव की पीड़ा अँधे को नही, आँख वाले को ही होती है।

- आँख के अभाव वाला अँधा नहीं बल्कि सही अँधा तो विवेक आचरण के अभाव वाला है ।

- प्रकाश तो वह है, ज्ञान तो वह है जिसमें कोई भी वस्तु अँधकारमय न रहे।

सदा सरलता साध लो और कुटिलता त्याग ।
बनो धवल तुम हंस से विरागता से राग ॥१२७॥

- भविष्य की चिन्ता में वर्तमान अँधकारमय मत बनाओ। यदि वर्तमान को अँधकारमय बना दिया तो भविष्य कभी भी प्रकाशमान नहीं हो सकता।

- कहीं बाहर से प्रकाश लाने की आवश्यकता नहीं, मात्र अँधकार मिटाना है। जैसे-जैसे अँधकार मिटता जायेगा वैसे-वैसे प्रकाश प्रगट होता जायेगा।

- आप मात्र बाहरी जेल को ही जेल मानते हैं किन्तु वस्तुतः आत्मा के लिये विपरीत परिणमन ही जेल है।

- राजकीय दण्ड व्यवस्था तो वह व्यवस्था है जो मात्र आपके शरीर और वचनों पर नियन्त्रण करती है किन्तु कर्म सिद्धान्त की व्यवस्था वह व्यवस्था है जो भावों तक को पकड़ती है।

- राजकीय व्यवस्था तो दोनों हाथों में हथकड़ी डाल सकती है तालों में बन्द कर सकती है किन्तु कर्म आत्मा के प्रत्येक प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लेते हैं।

- अकेले जेल के डरने मात्र से जेल नही छूट सकता किन्तु अनर्थों से, अपराधों से बचना ही जेल से छुटकारा पाने का उपाय है।

- संसार दशा में जीव तत्व में मोक्ष है और मुक्त दशा में मोक्ष तत्व में जीव है।

- केवल आकिंचन्य भाव के द्वारा ही सिद्धत्व पद की प्राप्ति हो सकती है।

- लोकाग्र में सिद्ध और निगोदिया जीव वैसे ही रहते है जैसे कि जेल में जेलर और कैदी।

सागर सम गंभीर मैं बनूँ चन्द्रसम शान्त।
गगन तुल्य स्वाश्रित रहूँ हरूँ दीपसम ध्वान्त ॥१२८॥

- ☐ संसारी जीवों से विशेष सम्पर्क रखना ही संसार बन्धन का मूल कारण है ।
- ☐ विषय कषायों में अनुरंजन एवं संग्रहवृत्ति का नाम ही संसार है ।
- ☐ वह गृहस्थ जिसके पास कौड़ी भी नहीं, कौड़ी का नहीं और वह साधु जिसके पास कौड़ी भी है कौड़ी का नहीं ।
- ☐ उत्साह का जल आलस्य के मल को बहाने में सक्षम है ।
- ☐ हतोत्साही बनकर नही बल्कि उत्साही बनकर सत्कार्य करो, लेकिन उतावली मत करो ।
- ☐ उत्साह जीवन की वह सम्पदा है जो संसार की किसी भी वस्तु को खरीद सकती है।
- ☐ सही तो दृष्टि की दृढ़ता होती है और दृष्टि की दृढ़ता से आचरण में दृढ़ता आती है।
- ☐ जिस ओर हमें बढ़ना चाहिये उस ओर यदि हम नहीं बढ़ रहे हैं तो उसका एक ही कारण है आस्था का अभाव ।
- ☐ निष्ठा और पुरुषार्थ में ऐसा बल है जो बलवान को भी हरा देता है, तथा पद और पथ से डिगने वालों को भी दिशा बोध दिला सकता है।
- ☐ गल्ती करने वाले को गल्ती बता देना मगर उसे अपनी दृष्टि से नहीं गिराना बल्कि गल्ती से परिचित कराकर उसे ऊपर उठाना महानता है।

चिर संचित सब कर्म को राख करूँ बन आग।
तब आतम को शान्त भी करूँ बनूँ भगवान ॥१२८॥

- जिन लोगों ने बुराई की उनको शीघ्रातिशीघ्र भूल जाओ क्योंकि उनका एक क्षण का स्मरण भी अनंत जन्मों के अर्जित आनंद को पलभर में नष्ट कर देता है ।

- मोह को जीतना मानवता का एक दिव्य अनुष्ठान है ।

- मोह का प्रभाव जड़ के ऊपर नहीं चेतन के ऊपर पड़ता है ।

- मोह एक ऐसा जहर है जिसे देखने मात्र से ही जीवन विषाक्त हो जाता है, काटने की बात तो बहुत दूर रही ।

- भौतिक सम्पदा से सुरक्षा नहीं, सच्ची सुरक्षा तो आत्मिक सम्पदा से है ।

- कामाग्नि को उद्दीप्त करने के लिये भौतिक सामग्री घासलेट तेल का काम करती है ।

- जीवन बहुत संघर्षमय है, इसे हर्ष के साथ जीना चाहिये ।

- संघर्षमय जीवन का उपसंहार हमेशा हर्षमय होता है ।

- विकार से ही विकार टकराता है । विकार, विकार का संघर्ष है, विकार और निर्विकार का संघर्ष तीन काल में संभव नहीं है ।

- हमारा जीवन संघर्षमय है इस पर भी अनादिकालीन संस्कार ऐसे हैं जो आत्मा को झकझोर रहे हैं और वे कभी-कभी आत्मपद से च्युत कराने में सफल भी हो जाते हैं। अतः धर्म के क्षेत्र में अहर्निश सावधानी रखनी चाहिये ।

गुण धारे पर मद नहीं मृदुतम हो नवनीत ।
अभिनन्दन जिन नित नमूँ मुनिमन में नवनीत ॥१४०॥

- ☐ तुम दुनिया के साथ भले ही छल करो लेकिन छाले तुम्हारी आत्मा में ही पड़ेंगे ।

- ☐ यह संसार ठगों का बाजार है इसके ठगने में नहीं आना किन्तु अपनी कषायों को ही ठगकर संसार से पार हो जाना ।

- ☐ चोर से नही 'चौर्य' भाव से नफरत करो, घृणा पापी से नहीं पाप से करना चाहिये ।

- ☐ पकड़ना चोरी है जानना चोरी नहीं है, हमारी दृष्टि लेने के भावों से भरी है और भगवान की दृष्टि ज्ञान-भाव से भरी हुई है ।

- ☐ मृत्यु जीवन का अन्त नही है । वह तो मात्र ड्रेस और एड्रेस का बदलना है।

- ☐ वह जन्म अच्छा माना गया है जो मरण को जन्म नहीं देता और वही मरण अच्छा माना गया है जो बार-बार जन्म को जन्म नही देता ।

- ☐ सबसे ज्यादा क्षमता उसी की होती है जो क्षमाशील होता है ।

- ☐ क्षमा मांगना नही, क्षमा धारण करना ही श्रेष्ठ है ।

- ☐ क्षमा करने वाला क्षमा मांगने वालो से बहुत आगे पहुचा हुआ माना जाता है।

- ☐ यदि क्रोध हमारे अन्दर विद्यमान नही तो फिर हमें क्रोध दिलाने मे कोई समर्थ नहीं हो सकता।

रवि सम पर उपकार मैं करूँ समझ कर्तव्य ।
रहूँ न मन में मान मद सुन्दर हो भवितव्य ॥१३१॥

- हम सोचते हैं कि अपने क्रोध के द्वारा हम दूसरों को जला डालेंगे लेकिन ध्यान रखना विश्व में कोई भी शक्ति दूसरों को नहीं जला सकती।

- उबलती हुई सामग्री जैसे छूने लायक नहीं रहती अर्थात् अस्पृश्य हो जाती है ठीक इसी तरह क्रोधाग्नि से तप्तायमान व्यक्ति भी अस्पृश्य हो जाता है।

- शारीरिक गुणों का घात करना द्रव्य हिंसा है और आध्यात्मिक जीवन में व्यवधान करना भाव हिंसा है।

- दीपक, बाती और तेल से नहीं जलता बल्कि इन दोनों के त्याग से जलता है।

- मार्ग का अन्त ही मंजिल है। यात्रा वही है जिससे मार्ग का अन्त आ जाये।

- यात्रा तो हमेशा एक ही दिशा की ओर हुआ करती है। घुमाव और भटकन का नाम यात्रा नहीं है।

वैराग्य-प्रेरणा

- वैराग्य की प्रेरणा जहां मिले वस्तुतः वही हमारे लिये कल्याण के साधन है।

- जिस वंश के हम अंश हैं उसके अनुरूप ही मोह का ध्वंस करना जरूरी है।

फूल बिछाकर पन्थ में पर प्रति बन अनुकूल।
शूल बिछाकर शूल से मत बन तू प्रतिकूल ॥१४३॥

- शरीर को संवारो (सजाओ) नहीं किन्तु सम्हालो, यह मोक्षमार्ग में सहकारी है।

- दीपक जबसे जलना शुरु करता है तभी से बुझने लगता है ।

- अनंत संसार परिभ्रमण के बाद भी यह जीव थका नहीं, बड़ी विचित्र दशा है इस जीव की ।

- अरे भाई ! जा तो रहे हो, पर जाते-जाते यह भी विचार करो कि जाना कहाँ है ? एक बार उस गन्तव्य को प्राप्त करो जहाँ से पुनः लौटकर न आना पड़े ।

- यदि अंधा कुँए में गिरता है तो कोई बात नहीं किन्तु जानते--देखते हुए भी कोई व्यक्ति गिरे तब जरूर विचारणीय बात है ।

- स्व पर अहितकारी मिथ्यात्व-असंयम के ऐसे विषबीज मत बोना, जिसके द्वारा उत्पन्न विषफल आपको खाना पड़े और नरक निगोद आदि दुर्गतियों में जाना पड़े ।

- हमारा जीवन पानी के बुलबुले की तरह क्षणभंगुर है जिसे फूटने में देर नहीं।

- प्राप्त संपदा और जीवन इन्द्रधनुष तथा आकाश नगर की भांति क्षण भंगुर है जो तृण-बिन्दुओं के समान बहुत ही जल्दी विखर जाने वाला है ।

मरहम पट्टी बांधकर, दुख का कर उपचार ।
ऐसा यदि न कर सको डंडा तो मत मार ॥१९३॥

- यह संसार इन्द्रजाल के समान है जो देखने में दिखता तो बहुत सुन्दर है पर स्थिर रहने वाला नहीं है । देखते ही देखते नष्ट हो जाने वाला है ।

- यह सारा का सारा संसार है केवल एक विशाल नाटक । भले ही इसमें तू भाँति-भाँति के वेश धर किन्तु इसमें भूलकर भी न अटक ।

- अहो ! इस निद्रा का माहात्म्य तो देखो, जिसके आने पर यह जीव शव जैसा दिखने लगता है, और उसके जाते ही शिव जैसा प्रतीत होता है।

- संसारी प्राणी की यह मूर्खता है जो नश्वर को सुरक्षित रखने का प्रयास करता है, सुरक्षा नहीं होने पर संक्लेश करता है जिससे दुर्गति का पात्र बनता है ।

- जड़ तत्व की सुरक्षा के लिये जो व्यक्ति मूल्यवान चेतन धन का उपयोग करता है वह पैर धोने के लिये अमृत कलश ढोल रहा है राख के लिये चन्दन की लकड़ी जला रहा है ।

- यदि हमारे घर के अन्दर एक छोटा सा भी सर्प घुस आए तो हम घर छोड़कर भाग जाते हैं किन्तु हमारे भीतर रागद्वेष विषय कषायों के कितने सर्प बैठे हुए हैं, पर हमें उनका ख्याल ही नहीं ।

- जीवन बहुत थोड़ा है, यह प्रतिपल नष्ट हो रहा है, ऐसी स्थिति में आपके भीतर इसके प्रति जो अमरत्व की भावना है वह अयथार्थ है यानी क्षणिक पदार्थ में शाश्वत बुद्धि अयथार्थ है ।

- ☐ जीवन में एक घड़ी भी वीतरागता के साथ जीना बहुत अर्थ रखता है किन्तु राग-असंयम के साथ हजारों वर्ष तक जीना कोई मायना नहीं रखता। सिंह बनकर एक दिन जीना भी श्रेष्ठ है किन्तु सौ साल तक चूहे बनकर जीने की कोई कीमत नहीं है।

- ☐ जब तक अपराधी एक अकेला रहता है तब तक वह अनुभव करता है कि हाँ मैं अपराधी हूँ, मैंने अपराध किया है, मैं उसका दण्ड भोग रहा हूँ। किन्तु जब अपराधियों की संख्या बढ़ जाती है तो फिर उसमें भी एक प्रकार का रस आने लगता है।

कर्त्तव्य बोध

- ☐ गुणवान, गुणियों को आदर देते ही हैं क्योंकि उन्हें गुणों की महत्ता मालूम है।
- ☐ सभी लोग दूसरों से आदर पाना चाहते हैं पर देना नहीं। दूसरों को आदर दिये बगैर आदर मिल कैसे सकता है ?
- ☐ सहज जीवन जीना सीखो, मान के अभाव में मानव स्वयमेव सहज हो जाता है।
- ☐ दीनता, विनय नहीं है वह तो मात्र जीवन का निर्वाह है।
- ☐ अंहकारी का ही अधोगमन होता है, विनयी हमेशा उर्ध्वगामी होता है।
- ☐ हे मानी प्राणी ! देख तो इस पानी को और हो जा पानी-पानी।
- ☐ कठोरता बर्फ की तरह विभाव है जबकि तरलता पानी की तरह आत्म स्वभाव।

काले बादल बन, तपी भू पर बरसो आप।
भरे पाप घट पुण्य में बदले अपने आप ॥१२१॥

- मृदुता और काठिन्य की सही पहचान तन को नहीं हृदय को छूकर होती है।
- लघुत्व को स्वीकार किये बिना अन्दर से गुरुत्व प्रगट हो ही नहीं सकता।
- बड़प्पन वही है जो सही को स्वीकार करे ।
- वास्तव में बड़ा वही है जिसे छोटे का भी ध्यान हो।
- आज का व्यक्ति मान के पीछे सब कुछ न्यौछावर करने तैयार है पर मान को नही ।
- मान को समझने और उसे जीतने में ही मानव की सफलता है ।
- विनय, दीनता की प्रतीक नहीं है वह तो समीचीन तप है, जो आत्म-विकास तथा कर्म निर्जरा का श्रेष्ठ साधन है ।
- विनय के माध्यम से सामने वाला पाषाण हृदय भी पिघल जाता है एक प्राचीन आचार्य को आज का दीक्षित शिष्य भी अपनी विनय वृत्ति से आकर्षित कर लेता है ।
- विनय मे हृदय साफ होना चाहिये, छल कपट मायाचारी से की गई विनय कोई विनय नही वह तो पाखँड मात्र है ।
- सामने-सामने विनय भक्ति फिर भी स्वार्थ से हो सकती है किन्तु परोक्ष में भी विनय भक्ति करना निस्वार्थ गुणानुराग के बिना संभव नही ।
- आज स्थितिकरण की बहुत जरूरत है पर ध्यान रहे वह उपगूहन की पृष्ठभूमि पर विनय और शालीनता के साथ होना चाहिये ।
- जो अहंकार वश यहाँ अकड़कर ऊपर देखता हुआ चलता है उसको

तामस वश प्रतिलोम हो तुममें फिर बस जाय ।
है यह हार्दिक भावना मोह तभी नश जाय ॥१३८॥

परभव में नीचा ही रहना पड़ता है किन्तु जो यहाँ विनम्र विनत दृष्टि रहता है उसे परभव में उच्चपद प्राप्त होता है।

- विवेक के साथ प्रत्येक घड़ी बिताने का नाम ही वास्तव में जीवन है।

- विवेकी कभी मुग्ध नहीं होता और जल्दबाजी में कभी क्षुब्ध भी नहीं होता है। अनुकूलता प्रतिकूलता में वह अपने आपको सम्हाले रखता है।

- आज दूरदर्शन की उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी दूरदृष्टि रखने की।

- जिसका विवेक एक बार जागृत हो जाता है वह अधर्म से स्वयमेव बच जाता है उसे फिर किसी प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता नही।
- वास्तविक स्वयं सेवक वही है जो आत्मा की सेवा करता है।

- दूसरों की सेवा में निमित्त बनकर अपने अन्तरंग में उतरना ही सबसे बड़ी सेवा है।

- अनुभव में वृद्धि, सादगी और गंभीरता का आना वृद्ध सेवा का परिणाम है।

- सेवा वैय्यावृत्ति करना निश्चित ही उपकार है किन्तु किसी को अपनी तरफ से परेशानी में नहीं डालना भी उपकार है।

- प्रत्युपकार की इच्छा से किया गया उपकार वास्तविक उपकार नही है।

- पर के कल्याण में 'स्व' का कल्याण निहित है। यह बात दूसरी है कि फिर दूसरे का कल्याण हो अथवा न भी हो।

मृदु बनूँ बस मृदुता जीवन का शृंगार ।
लघु दृष्टि में निहित है सुख का वह संचार ॥१३७॥

- परोपकार की वेदी पर चढ़ाया गया फल कभी निष्फल नहीं जाता।
- कर्त्तव्य में आनंद मनाने वाला व्यक्ति एक कर्त्तव्य को पूर्णकर दूसरे कर्त्तव्य की खोज में तत्पर रहता है।
- कर्त्तव्य में अधिकार का भाव नहीं आना चाहिये क्योंकि अधिकार का भाव आते ही कर्त्तव्य, कर्तृत्व बन जाता है।
- बड़ों की विनय छोटों का कर्त्तव्य, छोटों के प्रति वात्सल्य बड़ों का कर्त्तव्य परस्पर में एकता ये सभी संघ संचालन के जरूरी साधन है।
- अहंकार की नींव पर ही कर्तृत्व का ढाँचा टिका-हुआ है।
- जैनदर्शन कहता है कि उतना ही उत्पादन करो जितना तुम्हें आवश्यक है बल्कि उससे कम ही करो जिससे कुछ समय बचेगा जिसमें परोपकार की बुद्धि जाग्रत होगी।
- स्वार्थ सिद्धि और क्षणभँगुर जीवन की रक्षा के लिये अनाप-शनाप सामग्री का संग्रह, पता नही इन्सान को कहाँ ले जायेगा।
- कम से कम वस्तुओं में अपना निर्वाह करना यह गरीबी नही किन्तु सदाचरण सन्तोषवृत्ति है।
- स्वार्थ और संकुचित दायरों से ऊपर उठे बगैर किसी की सेवा संभव नही।
- सफलता उसके चरण चूमती है जो निरन्तर परिश्रम करता है।
- बड़ों की आज्ञा पालन करने से तन और मन दोनों की दूरी समाप्त हो

विहसित हो जीवन लता विलसित गुण के फूल।
भीनी भीनी सुगंधता महक उठे आमूल ॥१३८॥

- "परस्परोपग्रहो जीवानाम्" इस सूत्र को यदि हम सही-सही समझ ले जीवन में उसे लागू करे तो आज जैनधर्म की व्यापक रूप से प्रभावना हो सकती है।

- अपने जीवन की सुख सुविधाओं में यदि थोड़ी भी कमी आ जाए तो व्यक्ति को शीघ्र ही रोष आ जाता है और उस रोष में हमारा होश भी खो जाता है। दूसरों के द्वारा किये गये उपकार को भी हम भूल जाते हैं।

- दया का कथन निरा है और दया का वतन निरा है। एक में जीवन है और एक में जीवन का अभिनय।

- दया और अभय का धर्म से गहरा सम्बन्ध है। वीतरागी जीवन में हमें यह सहज ही दिखाई देते हैं।

- वे आँखें किस काम की जिनमें ज्ञान होते हुए भी संवेदना की दो-तीन बूंदे भी नहीं आतीं। वे आँखें लोहे की हैं पत्थर की है हमारे किसी काम की नहीं।

- दया के अभाव में शेष गुण विशेष महत्वशाली नहीं है। वह दया, शेष गुण रूपी मणियों को पिरोये जाने के लिये धागे के समान है।

- हे आर्य ! दान देना दाता का कार्य है और अनिवार्य है।

- दाता अभिमानी न बने और पात्र दीन न हो तभी दान देय की महत्ता है।

रिपुता की सीमा रही पतन किया उपसर्ग।
ममता की सीमा रही ग्रहण किया अपवर्ग ॥१२१८॥

- दाता, दान का पात्र नहीं है अतः वह दान देने की पात्रता तो रखता है पर लेने की नहीं ।

- पात्र सत्पात्र हो और पावन होने वाला भी नीर-क्षीर विवेकी हंस के समान हो तो समागम करने वाला पतित से पावन नियम से बनता है ।

- जो अतिथि सत्कार को बेचैन रहता है उससे कई गुना बेचैन होकर पुण्य उसकी खोज करता है ।

- सर्वस्व समर्पण करने में न मांग होती है, न चाह, न प्रतिदान की भावना।

- दान के बिना अहिंसा धर्म की रक्षा न आज तक हुई है और न आगे होगी।

- धन का नहीं धर्म का स्वागत करो । न्यायोपात्त धन से जो दान दिया जाता है वह युगों-युगों तक कीर्ति का कारण बनता है ।

- दान देने का अर्थ यह नही है कि यद्वा-तद्वा दान दें । यदि एक व्यक्ति चोरी करके दान दे तो क्या उसका दिया हुआ दान, दान कहलाएगा । नहीं - - - नहीं । वह तो पाप का ही कारण बन जाएगा ।

- जो व्यक्ति अत्याचार, अनाचार के साथ वित्त का संग्रह करता है और मान के वशीभूत होकर दान करता है वह कभी भी धर्म प्रभावना नहीं कर सकता, और न ही अपनी आत्मा का कल्याण कर सकता है ।

- वात्सल्य विहीन व्यक्ति पत्थर के समान होते हैं ।

- अभिमान वश हम हाथी के साथ तो चल सकते हैं पर साथी के साथ नही ।

सार - सार भर भरा है रहित सार संसार ।
मोह उदय से लग रहा सरस सार संसार ॥१४०॥

- मैत्री भाव का प्रदर्शन तो स्वार्थ की वजह से कहीं भी हो जाता है किन्तु उसका दर्शन तो मैत्री के धारक महामुनिराजों के सानिध्य में ही होता है ।

- प्रेम में समय और स्थान की सभी दूरियाँ समाप्त हो जाती हैं क्योंकि प्रेम आत्मगत् होता है ।

- प्रेम की स्याही और आचरण की कलम से ही जीवन का काव्य निर्मित होता है ।

- आनंद का अनुभव स्वयं को होता है किन्तु प्रेम का अनुभव तो निकट आने वाले को भी ।

- जो प्रेम व्यक्ति या वस्तु-विशेष के प्रति होता है वह प्रेम नहीं राग का संबंध है क्योंकि प्रेम व्यापक और निःस्वार्थ होता है ।

- विवाह में पहला बंधन है राग, लेकिन वह राग, रागी बनने के लिये नही वीतरागी बनने के लिये है । इसमें एक ही के साथ सम्बन्ध है अनंत के साथ नहीं । अनंत के साथ तो बाद में होगा, सर्वज्ञ होने पर । पहले एक फिर अनंत। जो प्रारंभ में ही अनंत के साथ उलझता है, उसका किसी विषय पर अधिकार नहीं रहता ।

- एक दूसरे के पूरक होकर, प्रेम के साथ खाई गई रूखी-सूखी रोटी भी व्यक्ति को पहलवान बना देती है किन्तु ईर्ष्या के साथ मावा मिष्ठान खाने पर भी अस्पताल जाने की आवश्यकता होती है ।

- जिस प्रकार बिना किसी खिड़की या दरवाजे के कोई मकान संभव नहीं ठीक इसी प्रकार बिना गुणों के कोई भी व्यक्ति संभव नहीं । हाँ, उन्हें देखने के लिये चाहिये है मात्र दृष्टि ।

रवि सम पर उपकार में रहो विलीन सदैव ।
विश्व शांति रचना यही यों कहते जिनदेव ॥१४१॥

- हमें हमेशा गुणवानों को ऊपर उठाने का प्रयास करना चाहिये । वह गुणी कोई भी हो सकता है, बस गुण होना चाहिये । फिर जाति से, शरीर से, मजहब अथवा कौम से कोई भी मतलब नहीं है । राजा या रंक उसके सामने कोई वस्तु नहीं है ।
- निंदा किसी की भी नहीं करनी चाहिये, यहाँ तक कि विपरीत वृत्ति वाले की भी नहीं।
- हमें दूसरों के गुणों की प्रशँसा ही करना चाहिये, निंदा बुराई करके हम व्यर्थ ही अपने मुख को खराब करते हैं ।
- सज्जनों के मुख से कभी भी निष्ठुर निन्दक और निर्दयता परक वचन नही निकलते।
- दूसरों की आलोचना / दोषों का कथन करते समय जिनकी जिह्वा मौन हो जाती है, वास्तव में वे ही महापुरुष होते है ।
- किसी के साथ नहीं बोलना यह तो अच्छा है लेकिन एक से बोलना और एक से नही बोलना यह हमारे रागद्वेष को सूचित करने वाली खतरनाक परिणति है ।

निजता का पाठ

- हम लोग अभाव मे पूजा तो करते है पर सद्भाव में नहीं ।
- सद्भावना हमारे अन्दर छिपी सम्भावनाओं को अभिव्यक्त कर देती है।
- चिराग को नहीं किन्तु चिर-आग (राग) को बुझाओ ।

वात बहे मंगलमयी छा जावे शुभ भोर !
मति सबकी सरला बने टले अमंगल भाव ॥१४२॥

- मानव, माया का दास बना है माया, मानव की दासी नहीं ।
- आशा को ही जिन्होंने दासी बना लिया अब उनके चरणों में सारा जगत ही दास बनकर खड़ा हो जायेगा ।
- अज्ञानता की धरती पर ही राग द्वेष की खेती हो रही है ।
- लक्ष्योन्मुखी दृष्टि होने से गिरा हुआ व्यक्ति भी उठ सकता है जैसे कि चींटी।
- उत्कृष्ट साधकों के दर्शन करने से ही उत्कृष्ट परिणाम (भाव) प्राप्त होते हैं ।
- व्यक्ति, माल से मालदार नहीं किन्तु भावों से मालदार बनता है ।
- हमें दीप का नहीं ज्योति का और सीप का नहीं मोती का सम्मान करना है।
- अपनी पहचान मानवता की पहली शर्त है ।
- प्रत्येक प्राणी का जीवन अपने आप में एक आधी अधूरी कहानी है ।
- प्रत्येक द्रव्य अपनी सृजनशीलता का कोष है ।
- अपने में अपने हित की भावना ही जागृति है, तभी जीवन में सवेग है।
- जब हवा काम नहीं करती तब दवा काम कर जाती है । और जब दवा काम नहीं करती तब दुआ काम कर जाती है ।

रवि से बढ़कर तेज है शशि से बढ़कर ज्योत ।
झांक देख निज में जरा सुख का खुलता स्रोत ॥१४३॥

- वर्ण का आशय न रंग से है न अंग से वरन् चाल-चलन ढंग से है ।
- वचनों के माध्यम से देश वंश और परिवार का परिचय प्राप्त हो जाता है ।
- कलयुग की यही पहचान है जिसे खरा भी अखरा है सदा, और सतयुग उसे तू मान जिसे बुरा भी बूरा सा लगा है सदा ।
- शांति कहीं और से आने वाली नहीं, अशान्ति जहाँ से आ रही है उसे दूर करना ही शान्ति को लाना है ।
- शांति किसके लिये ? स्वयं को या दुनिया को । यदि स्वयं शांत हो जाओगे तो दुनिया अपने आप शांत हो जायेगी ।
- मंगलाचरण और मंगल ध्वजारोहण आदिक कार्यों के समय ही हमें मंगलकारी भावना नही भानी चाहिये बल्कि हमेशा भाते रहना चाहिये।
- शुद्ध तत्व का निरीक्षण करने वाला व्यक्ति पावन/पवित्र होता है ।
- हमारी दृष्टि मे समीचीनता तभी आ सकती है जब हम वस्तु के असली रूप को देखने का प्रयास करेंगे ।
- स्वतंत्रता के अधिकार के साथ-साथ स्वतंत्रता के सम्मान का कर्त्तव्य भी लगा हुआ है ।
- अर्थ पुरुषार्थ का अर्थ है कि दो अर्थो के बीच पुरुष । जिसका अर्थ है कि अर्थ (धन) पुरुष (आत्मा) के लिये है ।

तन मन धन से तुम सभी पर के दुःख निवार ।
शम दम यम युत हो सदा निज में करो विहार ॥१४४॥

- लोग कहते हैं कि उत्पादन नही हो रहा पर मै कहता हूँ कि आज मुख्य समस्या उत्पाद की नहीं, उत्पात की है जो हर जगह हो रहा है ।

- संतुलित एवं संयमित आहार के द्वारा शारीरिक बल को नियन्त्रित किया जाता है जो शरीर एवं स्वास्थ्य दोनों के लिये लाभप्रद होता है ।

- शाकाहार के साथ-साथ आहार की मात्रा भी संतुलित करना जरूरी है।

- अभक्ष्य और अनिष्ट का त्यागकर उसी तरह का भोजन करना चाहिये जो स्वास्थ्य वर्धक एवं हितकारी हो।

- आप हाथापाही को ठीक मानते है और माथाफोड़ी मे कठिनाई महसूस करते है, पर विज्ञजन कहते है कि हाथापाही बहुत की, अब थोड़ी माथाफोड़ी भी कर लो यानि अनर्गल (असम्यक्) प्रवृत्ति छोड़ दो और युक्ति संगत कार्य करो ।

- आज के युग की सबसे बड़ी समस्या विचार, उच्चार एवं आचार के बीच की खाई है, जिस दिन यह पटेगी उस दिन मानव जीवन की बहुत सारी समस्याये स्वयमेव सुलझ जाएँगी ।

- पहले नाव की बात होती थी, आज सिर्फ चुनाव की बात होती है । पहले तैरने तिराने की बात होती थी आज सिर्फ डूबने-डुबाने की बात होती है ।

- हमे कागज की नाव में नही चलना है । कागजी नाव से आज सारी की सारी समाज परेशान है । आज नावें भी सही नहीं है बल्कि नाव के स्थान पर आज चुनाव हावी होता जा रहा है ।

अधीर हूँ मुझे धीर दो सहन करूँ सब पीर ।
चीर-चीर कर चिर लखूँ अन्दर की तसवीर ॥१४५॥

- जीव के परिणाम और कर्म के बीच की स्थिति है नोकर्म, हमें नोकर्म पर हर्ष-विषाद नहीं करना चाहिये । जैसे पत्र पाने वाला व्यक्ति अपनी प्रतिक्रिया पत्र प्रेषक के प्रति करता है न कि पोस्टमेन पर ।

- समय इतना सूक्ष्म है जिसका विभाजन करना संभव नहीं । वह तो निरन्तर प्रवहमान है, रविवार के समापन और सोमवार की शुरुआत के बीच की संधि आज तक कोई भी नही पकड़ पाया ।

- नगर-पालिका की ओर से यदि दो चार दिन ही शहर में सफाई न हो तो गंदगी काफी फैल जाती है निकलना कठिन हो जाता है किन्तु इस आत्मा के अन्दर जन्म जन्मान्तरों का कचरा पड़ा हुआ है फिर भी हमें ध्यान नहीं।

- व्याकरण मे प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष यह तीन पुरुष होते है । अन्य पुरुष में "है" का प्रयोग होता है, प्रथम पुरुष मे "हूँ' का और मध्यम पुरुष में "हो" का प्रयोग होता है । जब "हूँ" या "हो" निकल जायेगा तब "है" शेष रह जायेगा । सर्वोदय का साक्षात् दर्शन अन्य पुरुषों मे होता है । अन्य पुरुष में पूर्ण समष्टि है, इसे आचार्य कुन्दकुन्द ने महासत्ता कहा है । अन्य पुरुष में प्रथम और मध्यम पुरुष की अपेक्षा वात्सल्य प्रेम का व्यापक दृष्टिकोण होता है ।

राष्ट्र-भावना

- देश पर आपत्ति के क्षणों में अपने संगृहीत धन का सदुपयोग नही करना, राष्ट्र के प्रति बहुत बड़ी कृतघ्नता है ।

शांत करूँ सब पाप को हरूँ ताप बन शांत ।
यति आपति रति मति मिटे मिले आप निज प्रांत॥१४६॥

- कर्त्तव्य निष्ठ व्यक्ति ही देश और धर्म की सुरक्षा कर सकता है ।

- देश के प्रति गौरव, बहुमान एवं अपनत्व के द्वारा ही लोकतंत्र की नींव सुरक्षित रहेगी ।

- त्याग, तपस्या तथा निःस्वार्थ सेवा के बिना आत्मोद्धार और देश का उद्धार संभव नहीं ।

- सभी जीव सुखी हों, सभी का कल्याण हो, सभी प्रसन्न रहें, राजा धार्मिक बना रहे। इस तरह की भावना सभी को भानी चाहिये ।

- देश में एकता, शाँति और संस्कृति के संरक्षणार्थ जो भी कदम उठाए जाय वह सब स्वागत के योग्य है ।

- हमें अपने राष्ट्र के प्रति गौरव, भक्ति और समर्पण होना चाहिये । हमारा देश हर तरह से समृद्धशाली बने तथा शांति अहिंसा का विस्तार हो ऐसी लोक हितकारी भावना भी रखनी चाहिये ।

- यदि हमारे अन्दर राष्ट्रीयता नहीं है, देश के प्रति निष्ठा नही है हम स्वयं ही उसकी जड़े कमजोर करने में लगे है तब फिर हम्से बड़ा कृतघ्नी और कौन होगा ? हम जिस डाल पर बैठे है, यदि उसे ही काटने लगे तो सोचो भला फिर हमारा क्या होगा? पता नही हमारी ये अज्ञानता हमें कहाँ ले जायेगी।

- जो व्यक्ति राजकीय नियमों का उल्लंघन करके कोई कार्य करता है, तो समझिये कि वह अपनी तरफ से ही धार्मिक कार्यों में बाधा उपस्थित करता है ।

नमूँ भारती भय मिटे, भव भव नमूँ मैं भाल ।
भार रहित भारत बनें भास्वत भविजन भाल ॥१४७॥

- ☐ समाजवाद का वास्तविक अर्थ है सबके साथ वात्सल्य, प्रेममय व्यवहार, सबका हित देखना, हिल मिलकर रहना ।

- ☐ हम समाजवाद समाजवाद की बात तो बहुत करते हैं, पर होता यह है कि पहले हम - - - समाज बाद में ! समाजवाद का यह रूप तो ठीक नहीं ।

- ☐ जिस प्रकार दानवीर भामाशाह ने अपनी न्यायोपार्जित संपत्ति को न्योछावर कर राष्ट्र सुरक्षा संवृद्धि के लिये योगदान दिया उसी प्रकार आज भी प्रत्येक राष्ट्रभक्त श्रावक के लिये अपना सर्वस्व न्योछावर कर देश की रक्षा करना चाहिये ।

- ☐ देश के धन को विदेशी बैंकों में जमा करना और व्यक्तिगत पूँजी बना लेना राष्ट्र की नींव को कमजोर करना है ।

- ☐ पारस्परिक सौहार्द्र और समन्वय से ही देश की एकता और अखंडता कायम रह सकती है ।

- ☐ प्रेम, मैत्री, करुणा और आस्था समाज संगठन की आधारभूत भावनायें हैं ।

- ☐ विनय, वात्सल्य, एकता तीनों रत्नत्रय के समान हैं समाज की संरचना में इनका बहुमूल्य योगदान है ।

- ☐ अपरिग्रह का सिद्धान्त समाजवाद का व्यवहारिक रूप है यह सिद्धान्त समाजवाद को जीवित रखने के लिये संजीवनी का काम करता है ।

- जिस व्यक्ति के अन्दर अपने राष्ट्र के प्रति प्रेम नहीं है वह व्यक्ति राष्ट्र भक्त कैसे कहा जा सकता है ?
- देशद्रोह, अपराधों में एक बहुत बड़ा अपराध है ।
- देश के प्रति वफादार होना ही राष्ट्र के प्रति सच्ची कृतज्ञता है ।
- धर्माराधन के लिये शासकीय अनुकूलतायें होना भी जरूरी है । प्रशासक यदि धर्म का पक्षधर हो तो उसे (राजा को) राज्य में रहने वाले तपस्वियों के तप का छठवाँ भाग सहज ही मिल जाता है ।

श्रेयस् पथ

- प्रवृत्ति को छोड़कर निवृत्ति के मार्ग पर जाना ही श्रेयस्कर है ।
- वर्तमान पुरुषार्थ का प्रभाव भूत और भविष्य दोनों पर पड़ता है ।
- त्रस पर्याय की प्राप्ति उतनी ही दुर्लभ है जितनी कि गुणों में कृतज्ञता।
- बड़ों में गंभीरता, धैर्य, साहस, वैराग्य सब कुछ प्रौढ़ होना चाहिये ।
- पक्ष-विपक्ष से परे जीवन को निष्पक्ष बनाना ही श्रेयस्कर है ।
- कैंची नही सुई बनो, क्योंकि कैंची का काम है काटना और सुई का काम है जोड़ना।
- हमें जोरदार नाम नहीं करना, किन्तु जोरदार काम करना है ।
- उच्चविचार ही जीवन में उच्च आचार को लाते हैं तथा उच्चतम स्थान

पंक नहीं पंकज बनूँ मुक्ता बनूँ न सीप ।
दीप बनूँ जलता रहूँ प्रभु पद पद्म समीप ॥९४८॥

दिलाने में कारण होते हैं ।

- अच्छे कार्य करने से ही अच्छे पद मिला करते हैं, बुरे कार्य करने से कभी भी अच्छे पद नहीं मिलते ।
- यदि दृष्टि में विकार है तो निर्दिष्ट लक्ष्य को निष्पन्न कराना असम्भव ही है ।
- अधिक बोलने से शक्ति का अपव्यय होता है, मौन रहने से चिन्तन में प्रखरता तथा विचारों में प्रौढ़ता आती है ।
- मौन की अपेक्षा ऐसे वचन बोलना भी श्रेष्ठ है जिससे क्षुब्ध वातावरण भी शाँति का अनुभव कर सके ।
- कषायी के ऊपर नही, कषायो के ऊपर क्रोध करना श्रेयस्कर है ।
- वज्र के प्रहार से पत्थर कट सकता है पर नवनीत नहीं क्योंकि नवनीत विनीत ही बना रहता है ।
- दुनियॉ भले ही हमसे मतलब रखे, किन्तु हमे दुनियाँ से मतलब नही रखना है ।
- खसखस के दाने बराबर दूसरों को दिया गया दुख हमारे लिये मेरु के बराबर होकर फलता है।
- अपनी रक्षा करना तो ठीक है, लेकिन अपनी रक्षा के लिये दुनियाँ भी मिट जाय यह कोई धार्मिकता नहीं है ।

मेरा तेरापन हटे भेद भाव का नाश ।
रीति नीति सुधरे सभी भेद भाव का वास ॥१६०॥

- जो पापो से बचाकर प्राणियों की रक्षा करे वह है क्षत्रिय ।
- अपराधियों को मारने के लिये नही किन्तु अपराध से भयभीत कराने के लिये क्षत्रियों के हाथ में शस्त्र दिये जाते है ।
- अपनी और पर की रक्षा के लिये शस्त्र रखा जाता है न कि हिंसा के लिये।
- चक्र, चलाने के लिये नही किन्तु जिसका मन चलायमन है उसे स्थिर करने के लिये है ।
- चक्रवर्ती षट्खण्ड को जीतकर आया है फिर भी उसकी सुरक्षा के लिये अंग रक्षक (Body Guard) अहो ! आश्चर्य की बात है ।
- कर्त्तव्य के प्रति अनादर एवं अकर्त्तव्य के प्रति आदर होना प्रमाद का सूचक है ।
- भय, दबाव और अरुचि से की गई क्रियायें कभी भी वास्तविक फल की प्राप्ति नहीं करा पाती ।
- मात्र लीक के पीछे मत दौड़ो, नही तो भेड़ो की तरह जीवन का अन्त हो जायगा ।
- हम जहाँ कही भी जो भी कार्य करें वह अपनी भूमिका योग्यता और विवेक के साथ करे । प्रमाद के साथ नहीं किन्तु जागृति से करें ।
- जिसके कदम लक्ष्य की ओर बढ़ रहे है वह न तो भटकता है और न ही अटकता है क्योंकि अधिक अटकने पर भटकने का भी भय रहता है ।

शीतल चंदन है नहीं शीतल हिम न नीर ।
शीतल जिन तव मत रहा शीतल हरता पीर ॥१५१॥

- जीवन में यदि सच्चा साधु न मिल पाये तो भी कार्य सध सकता है किन्तु कुसाधु की संगति अवश्य ही संसार में डुबोती है ।
- अपनी क्षमता तथा पद की मर्यादा के अनुकूल ही कर्त्तव्य होना चाहिये किन्तु ध्यान रहे उसमें कर्तृत्व बुद्धि न हो ।
- पापी के पीछे पड़े रहने से स्वयं का भी पुण्य लुट सकता है और अपने ही पुण्य में लगे रहने से पापी भी मुड़ सकता है ।
- गुणीजनों को हमेशा मान-सम्मान देने का प्रयास करो किन्तु मान सम्मान पाने की भूख मत रखो।
- स्वयं में गुरुता का अनुभव करने वाला व्यक्ति ही गर्व करता है ।
- यदि माता-पिता और गुरुओं का वरदहस्त हमारे ऊपर है तो हम अपने लक्ष्य की ओर अबाधित बढ़ते जायेंगे । फिर हर जगह सफलता ही सफलता मिलेगी।
- उपकरणों की संख्या देखकर ही उसके प्रति आसक्ति का अन्दाज लगाया जा सकता है ।
- वातावरण ऐसा निर्मित करें जिससे व्यक्ति पतन नहीं बल्कि उत्थान की ओर अग्रसर हो ।
- भौतिक सुविधायें मन को दुविधाग्रस्त करती है ।
- मंदिर जाओ, जाना न पड़े और घर न जाओ, जाना पड़े तो समझ लो धर्म की शुरुआत हो गई ।
- बहुमूल्य प्रतिमाओं का मूल्य नहीं किन्तु न्यौछावर होना चाहिये ।

- व्यक्ति की परख उसके कुल से नहीं कर्म से होती है ।
- सत् शिव सुन्दर की चर्चा खूब की अब तब। अब चर्चा की नही अर्चा की जरूरत है ।
- सत् शिव और सुन्दर का जो साम्राज्य जहाँ छिपा है उसे खोजो और पाने का प्रयास करो ।
- प्रतिनिधि सामान्य बात नहीं है क्योंकि प्रतिनिधि के माध्यम से ही उस निधि की पहचान होती है ।
- विपरीत वृत्ति वाले के लिये उत्तर नहीं मौन ही श्रेष्ठ है ।
- कर्म से प्रभावित उपयोग में वस्तुतत्त्व का वास्तविक अनुभव / अवलोकन संभव नहीं।
- अर्थ का अधिक संग्रह शांति का कारण नही बल्कि समुचित वितरण शांति का कारण है ।
- हमें धन का समर्थन परिवर्द्धन नहीं करना किन्तु समय-समय पर उसका सदुपयोग करना है ।
- दुख को समझना / अनुभव करना ही सुख को प्राप्त करने का सही रास्ता है।
- वह सुख किस काम का जो चाहते हुए भी किसी के दुख को दूर न कर सके।

- ☐ जब तक दुख का सही-सही अनुभव नहीं होता तब तक सुख की गवेषणा नहीं हो पाती ।

- ☐ पावन का झुकना पतित होना नहीं वरन् पतित को पावन बनाने की प्रक्रिया है ।

- ☐ असंयमी पुण्ययोग से प्राप्त दिव्य वस्तु का उपयोग भी असंयत होकर ही करता है ।

- ☐ भले ही देश बदल जाये, वेश बदल जाये, लेकिन कभी अपना लक्ष्य नहीं बदलना, उद्देश्य नही बदलना ।

- ☐ रागद्वेष वाले दो पलड़े सहित कर्म कॉवड़ी को यह संसारी प्राणी भारवह बना अनंत काल से ढ़ो रहा है ।

- ☐ अन्तर की शुद्धि का महत्व अपने लिये अधिक होता है दूसरे के लिये कम और व्यवहार शुद्धि का महत्व अपने लिये कम होता है दूसरे के लिये अधिक।

- ☐ मानव पर्याय की दुर्लभता को पाना तभी सार्थक है जबकि हमारे जीवन मे अध्यवसान/रागद्वेष कम हो ।

- ☐ आप अपने जीवन को जैसा ढालेंगे वैसा ही ढलेगा । आप उसे अपना मित्र बनाएँ या शत्रु, सुख-दुख के कार्य आपके अपने ही होंगे ।

- भगवान महावीर का उपासक वही है जो नमस्कार करता है चेतन को और बहिष्कार करता है अचेतन का ।

- हमें जीवन को चलाना नहीं है जीवन तो अपने आप अविराम चल रहा है लेकिन जीवन को उन्नति की ओर बढ़ाने में ही मानव जीवन की सफलता है।

- दूसरों की सुख-सुविधाओं को देखकर जलने वाला व्यक्ति कभी भी सुख-शान्ति का अनुभव नहीं कर सकता ।

- आज का व्यक्ति अपने दुःख से दुःखी कम है किंतु दूसरों को प्राप्त सुख से दुःखी ज्यादा है ।

- दूसरा नरक नहीं है, दूसरा हमारे लिये दुःख नहीं है अपितु दूसरों को पकड़ने की जो परिणति है वही हमारे लिये दुःख और नरक का काम करती है ।

- जिस प्रकार नदी ढलान की ओर सहज ही बह जाती है उसी प्रकार इन्द्रियाँ और मन अपने विषयों की ओर सहज ही बह जाते हैं ।

- सुख से प्राप्त हुआ ज्ञान दुःख के आने पर कपूर के समान उड़ जाता है किन्तु जो कष्ट परिषह झेलकर ज्ञान अर्जित किया जाता है वह प्रतिकूल परिस्थितियों में भी स्थायी बना रहता है ।

- जो समझना चाहता है उसे समझाना चाहिये लेकिन जो समझाने पर भी नहीं समझता, उल्टा काम करता है, उससे माध्यस्थ भाव रखना ही श्रेष्ठ है।

सर्वोदय गुणवंत है सर्वोदय मति संत ।
सर्वोदय को नमन है सर्वोदय जयवन्त ॥१५१॥

- ☐ सोचो, विचार करो ! आर्थिक विकास के लिये अर्थ का अवलम्बन लेना ठीक है, लेकिन जीवन ही अर्थ के लिये बन जाय। जीवन चलाने के लिये तो भोजन ठीक है किन्तु भोजन के लिये ही जीवन बन जाये, यह ठीक नहीं है।

- ☐ ऐश आराम की जिन्दगी विकास के लिये नहीं वरन् विनाश के लिये कारण है, या यूँ कहो कि ज्ञान का विकास रोकने में कारण है।

- ☐ मनुष्यों की दृष्टि में ऊपर उठना बहुत आसान है किन्तु परमात्मा के निकट पहुँचना अत्यन्त कठिन है। जो मनुष्यों की दृष्टि में ऊपर उठने का आकांक्षी है वह तो अनिवार्यतः परमात्मा की दृष्टि में नीचे गिर जाता है।

- ☐ जिससे अपराध हुआ है उससे मौन लेना तो अच्छा है लेकिन अन्य जगह जाकर उसकी निन्दा करना ठीक नहीं। यदि पीठ-पीछे उसकी निन्दा करते हैं तो माध्यस्थ भाव नहीं है अपितु द्वेष-भाव हो जायेगा। माध्यस्थ भाव रखना अपराधी के लिये सबसे उत्तम दण्ड है।

Total 1245

लोकैषण की चाह न सुर सुख की न प्यास।
विद्यासागर बस बनूँ करूँ स्वपद में वास ॥१५६॥